श्री राम जय राम जय जय राम

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति

स्मारिका

वर्ष–29

विक्रमी संवत् 2079 (सन् 2022-2023)

श्री राम जय राम जय जय राम

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

स्मारिका विमोचन

1. श्री जे. के. गुप्ता, श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, डॉ. भगवान दास पटैरया, श्री गणेश शंकर त्रिपाठी, पं. दिनेश चन्द्र शर्मा, डॉ. रविन्द्र कुमार शर्मा, श्रीमती नीलम श्रीवास्तव।
2. डॉ. पं०. लक्ष्मी नारायण, श्री लीलू राम वर्मा, श्री सी. एस. भोगल, श्री हुकुम चन्द्र शर्मा, श्री विनोद शर्मा, वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी, श्री मांगेराम भारद्वाज, श्री भिक्कीलाल शर्मा
3. श्री अजय कुमार शर्मा, श्री महावीर प्रसाद त्यागी, श्री सुभाष मित्तल, श्री कृष्ण कुमार मिश्रा, डॉ. अंकित अवाना।

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

卐 ॐ गं गणपतये नमः 卐

!! श्रीराम !!

श्रीराम जय राम जय जय राम

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुख मूल।।

सम्पादक मण्डल

पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा
डॉ0 भगवान दास पटैरया
श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'
श्री राजेश बैरागी, 'पत्रकार'

स्मारिका

विक्रमी संवत् 2079 सन् 2022–2023

वार्षिक अंक – 29

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

पंजीकृत कार्यालय : 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली –110061
स्थानीय कार्यालय : ए–447, सैक्टर –47, नोएडा –201 303
वेबसाइट –**www.shriramcharit.com** ई–मेल **-contactus@shriramcharit.com**
दूरभाष – 0120–4305457
चल – 9811056467

मुद्रक : **AAR PACK**
प्रिंटिंग एण्ड पैकेजिंग सोलूसन्स
G-24, सैक्टर 11, नोएडा–201301
फोन : 0120–4347256
ईमेल : **aarpacknoida@gmail.com**

पाठकों से निवेदन

स्मारिका का यह वार्षिक अंक–29 आपके हाथ में है। हमारा प्रयास रहा है कि इसमें भगवान श्रीरामजी के आदर्शों को प्रतिपादित करते हुए ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएँ, जिनसे समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान हो। इस दिशा में हम कहाँ तक सफल हुए, यह आप ही बता सकते हैं। आशा करते हैं कि आप पत्रिका पढ़कर हमें अपना लेख / अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे, ताकि हम अगले अंक में उसे समाहित कर सकें। लेख के संदर्भ में निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय हैं–

1. **लेख श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रसंगों पर तथा उसका शीर्षक यथासंभव चौपाई, दोहा आदि पर आधरित हो।**
2. लेख में उद्धरित दोहा–चौपाई आदि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'श्रीरामचरितमानस' के अनुसार हों। कृपया संदर्भ निम्नांकित प्रकार से अंकित करें।
   जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)
   5/1/1 का आशय है, पाँचवें काण्ड (सुंदरकाण्ड) के पहले दोहे की पहली चौपाई। सातों काण्डों को क्रमशः इस प्रकार से इंगित करें :– 1. बालकाण्ड, 2. अयोध्याकाण्ड, 3. अरण्यकाण्ड, 4. किष्किंधाकाण्ड, 5. सुंदरकाण्ड, 6. लंकाकाण्ड एवं 7. उत्तरकाण्ड।
3. लेख bpateria@gmail.com पर अथवा 9899004263 पर whatsapp या A 447 सैक्टर–47, नोएडा–201303 पर डाक से भी भेज सकते हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञापन से प्राप्त धन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। अनुरोध है कि आप भी अपने संस्थान का विज्ञापन भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

विज्ञापन दरें इस प्रकार से हैं–

क्रमांक	विवरण	राशि (रुपयों में)
1.	प्रथम पृष्ठ के पीछे (दूसरा कवर पेज)	35,000
2.	अंतिम पृष्ठ (चौथा कवर पेज)	30,000
3.	अंतिम पृष्ठ के पीछे (तीसरा कवर पेज)	25,000
4.	पत्रिका के अन्दर पूर्ण पृष्ठ	15,000
5.	पत्रिका के अन्दर आधा पृष्ठ	10,000

पाठकों से प्राप्त सहयोग राशि का योगदान भी इसके प्रकाशन में सराहनीय है। इसे भेजने हेतु विवरण निम्नांकित है। ''श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति'' के नाम 'भारतीय स्टेट बैंक, सैक्टर 31, नोएडा की शाखा में चालू खाता सं0 35299035590, ब्रांच कोड : 15971, IFS Code : SBIN0015971 विज्ञापन–प्रकाशन राशि भी इसी खाते में जमा करा सकते हैं।

कृपया सहयोग राशि अथवा विज्ञापन–प्रकाशन राशि भेजकर हमें उपर्युक्त ईमेल या 09899004263 पर फोन या SMS करके सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि तदनुसार प्राप्ति रसीद जारी की जा सके।

अध्यक्ष की ओर से

प्रिय श्रीरामचरितमानस प्रेमियो!

आजकल हमारे देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।समाज में पाश्चात्य संस्कृति का तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। हम अपनी शिक्षा, व्यवहार, समाज के प्रति कर्तव्य, धर्म तथा सेवा भावना से विमुख होकर मानव–जाति का अहित कर रहे हैं। आज प्रेम और भाईचारे का स्थान हिंसा एवं वैमनस्य ने ले लिया है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि अत्यधिक सांसारिक वैभवों को प्राप्त करने की होड़ लगी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी आपसी सद्भाव बढ़े, जन–जन में ईश्वरीय आस्था तथा भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत हों, इसी उद्देश्य से 'श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति, नोएडा' की सन् 1990 में स्थापना हुई, जिसका अगस्त 2015 को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति में विलय हो गया है।

हमारा उद्देश्य श्रीरामचरितमानस पाठ एवं प्रवचनों के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्रजी के पावन चरित्रों का प्रचार–प्रसार कर समाज एवं धर्म की सेवा करना है। इसके द्वारा हम सभी का कल्याण होगा। यह समिति अपने स्थापना काल से मार्च 2022 तक 511 मानस पाठ एवं प्रवचनों के कार्यक्रम आयोजित करा चुकी है। इसी कड़ी में अब तक अनेक विख्यात कथाकारों जैसे– संत प्रवर श्री विजय कौशलजी महाराज, रामभक्त पं0 मधुकरजी, श्री लक्ष्मीनारायण शर्माजी, डॉ0 पं0 रामगोपाल तिवारी, पं0 बलराम मिश्रजी, आचार्य पं0 बैजनाथ शुक्ला, श्री श्री 1008 श्री प्रेमाचार्यजी, श्री बैजूनाथजी महाराज, आचार्य श्यामसुंदर शरणजी, गोस्वामी रमाकांत चतुर्वेदीजी, मानस माधुरी श्रीमती अखिलेश्वरी देवी, आचार्य अखिलेश्वरानन्द (अंगदजी) महाराज, स्वामी श्री राजेश्वरानन्द सरस्वतीजी, पं0 सुरेन्द्र शास्त्री 'मानसकुसुम' पं. रामेश्वरानन्दजी महाराज (राष्ट्रीय मानस प्रवक्ता) आदि के प्रवचनों का आयोजन किया जा चुका है। ऐसे ही कार्यक्रम भविष्य में भी होते रहें, ऐसी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है।

विगत 29 वर्षों की भाँति रविवार दिनाँक 10 अप्रैल 2022 को श्रीराम जन्ममहोत्सव का आयोजन महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में किया जा रहा है, वैश्विक महामारी कोरोना के चलते लॉकडाउन के कारण विगत 2 वर्षों से यह कार्यक्रम संभव नहीं हो सका तथापि स्मारिका प्रकाशित हो सकी एवं सभी पाठकों को प्रेषित कर दी गई थी, जिनकी प्रतिक्रियाएँ पृष्ठ 9 से 13 तक मुद्रित हैं। कोरोना महामारी से सम्पूर्ण विश्व में जो लोग चिर निद्रा में लीन हो गए उनकी आत्मा की शान्ति के लिए हम इस समिति की ओर से ईश्वर से प्रार्थना करते हैं और जिन्होंने इस महामारी में अपनों को खोया है उन्हें धैर्य प्रदान करने की कृपा करें। प्रभु कृपा से अब सामाजिक–धार्मिक कार्यक्रमों के आयोजनों को सरकार द्वारा छूट दे दी गई है, अतः अब श्रीराम जन्ममहोत्सव चैत्र शुक्ल नवमी संवत् 2079 तदनुसार बुधवार 10 अप्रैल 2022 को प्रातः 10 बजे से महाराजा अग्रसेन भवन सैक्टर 33, नोएडा में आयोजित किया जाना प्रस्तावित है। इस पावन वेला में कथा व्यास आचार्य पं. बैजनाथ शुक्ला श्रीराम कथा श्रवण कराएँगे। श्रद्धालुओं से निवेदन है कि कोरोना से बचाव हेतु सरकार द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करते हुए समारोह में सहभागिता से धर्म–लाभ प्राप्त करें।

समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ एवं प्रवचन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत) द्वारा समय–समय पर श्रीरामचरितमानस अखण्ड पाठ/सुन्दरकाण्ड पाठ एवं प्रवचन (सत्संग) का आयोजन किया जाता रहा है। इस क्रम में मार्च 2022 तक 511 मानस पाठ एवं प्रवचन आयोजित किये गये। इसका विवरण समिति की विगत वर्षों की स्मारिका में प्रकाशित किया गया है। पिछले एक वर्ष में 10 पाठ आयोजित हुए, जिनका विवरण निम्नांकित है–

क्र.सं.	तिथि	नाम व पता जिनके निवास पर कार्यक्रम आयोजित हुए
1.	03.04.2021	श्री शिवकुमार शर्मा, ए–100, सै0–33, नोएडा
2.	06.07.2021	श्री प्रमोद कुमार शर्मा, ए–7, सै0–48, नोएडा
3.	13.07.2021	पं. दिनेश चन्द्र शर्मा, ए–447, सै0–47, नोएडा–201303
4.	17.02.2022	श्री राजेन्द्र कुमार नायक, मकान नं0 6, शुभालय विला, डाकघर–पिपलानी, भोपाल–462022
5.	01.03.2022	श्री गिरीश कुमार पटैरया, डी–11, सै0–36, नोएडा
6.	20.03.2022	श्रीमती सुषमा कौल, 416, The Aralias, DLF5, डीएलएफ गोल्फ लिंक रोड, गुरुग्राम–122009
7.	20.03.2022	डॉ. रविन्द्र कुमार शर्मा, 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली–110061
8.	22.03.2022	श्री लीलू राम वर्मा, सी–49, सै0–23, नोएडा
9.	24.03.2022	डॉ. अंकित अवाना, ग्राम निठारी, सै0 31, नोएडा
10.	25.03.2022	डॉ. भगवान दास पटैरया, ग्राम बलचौर, जिला महोबा (उ.प्र.)

''तेरा मेरा'' करते–करते एक दिन चले जाना है, जो भी कमाया यहीं रह जाना है।
कर ले कुछ अच्छे कर्म साथ यही तेरे जाना है।

इस अंक में

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	अध्यक्ष की ओर से		03
2.	समिति के सदस्यों की सूची		07
3.	पाठकों के विचार		09
4.	प्रथम भगति संतन्ह कर संगा	श्री कैलाश त्रिपाठी	14
5.	को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ	पं. रामनरेश तिवारी 'पिण्डीवासा'	21
6.	भगवत्प्राप्ति के साधन	डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय	26
7.	वर्णानामर्थसंघानां ...	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	32
8.	रिपुसूदन पद कमल नमामी	पं. दिनेश चन्द्र शर्मा	37
9.	मानस में शिव–चरित्र	श्री सचिन शर्मा	43
10.	श्रीरामचरितमानसः भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार	श्री देवेन्द्र शर्मा	50
11.	धर्म और नीति की पराकाष्ठा रानी मन्दोदरी	आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त	58
12.	हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी	पं. डॉ. राम गोपाल तिवारी	64
13.	ग्यानी मूढ़ न कोइ	डॉ. शंकर शरण त्रिपाठी	70
14.	इस मानस में स्नान करो (कविता)	पं. राजेश तिवारी 'मक्खन'	75
15.	सायक एक नाभि सर सोषा	श्री अवध किशोर दूबे	76
16.	मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी	डॉ. भगवान दास पटैरया	81
17.	श्रीरामचरितमानसः जीवन जीने का नीतिशास्त्र	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	88
18.	चले मरुत उनचास	पं.राजेश तिवारी 'मक्खन'	93
19.	करम प्रधान बिस्व करि राखा	श्री गोपाल कृष्ण फरलिया एवं श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी फरलिया	99
20.	कौन–कौन हैं सोचनीय	श्री विनोद शर्मा, पत्रकार	105

21.	भक्तिमती राक्षसी त्रिजटा	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	111
22.	सुमिरि पवन सुत पावन नामू	गोसेवक गोपाल कृष्ण पण्ड्या	115
23.	दोसु देंहि जननिहि जड़ तेई	श्रीराम जन्म सिंह	120
24.	भवतारण तारो भव–सागर (कविता)	सरल शास्त्री	125
25.	चित्रकूट गिरि करहु निवासू	प्रस्तुतिः श्री प्रमोद कुमार शर्मा	128
26.	हिन्दुस्थान हमारा है (कविता)	डॉ. सुरेंद्र शर्मा, 'सुशील'	134
27.	सीय पीर गंभीर (कविता)	डॉ. विनोद कुमार शर्मा ''पट्टोजी''	136
28.	एक ब्राह्मण की प्रेरणाप्रद कहानी (सत्य घटना)	प्रस्तुतिः एक हनुमान भक्त	137
29.	महाकाव्य रचयिता की निरभिमानता	श्रीमती रीता कश्यप	142
30.	श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वर्ष 2020–21 का आय–व्यय विवरण		144
31.	श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र		145
32.	श्रीरामशलाका प्रश्नावली		151
33.	विक्रमी संवत 2079 के व्रत, पर्व, त्योहारों की सूची		155
34.	आरती एवं वन्दना		169
35.	श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री		176

काम करो ऐसा कि पहचान बन जाए,
हर कदम चलो ऐसा कि निशान बन जाए,
जिंदगी तो हर कोई काट लेता है भाई,
जिंदगी ऐसी जिओ कि मिशाल बन जाए।

विशेषः स्मारिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति पंजीकृत

सदस्यों की सूची

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
1.	पं0 दिनेशचन्द्र शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा–201303	9811056467	अध्यक्ष
2.	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	216, जी0जी0 हॉस्टलवालीगली होशियारपुर, सै0–51, नोएडा	9311384212	उपाध्यक्ष
3.	पं0 डॉ0 लक्ष्मी नारायण	60, मातेश्वरीवार्ड नं0 11, नौगाँव, (छतरपुर) म0प्र0	9893772149	उपाध्यक्ष
4.	डॉ0 भगवान दास पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9899004263	महासचिव
5.	डॉ0 रविन्द्रकुमार शर्मा	593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली–110061	9911307799	सचिव
6.	श्री लीलूराम वर्मा	सी–49, सै0–23, नोएडा	9312280743	संयुक्तसचिव
7.	श्री जे0के0 गुप्ता	ए–87, सै0–49, नोएडा	9810997834	कोषाध्यक्ष
8.	श्री भिक्कीलाल शर्मा	ए–105, सै0–20, नोएडा	9810836348	कार्यकारीसदस्य
9.	श्री हुकमचन्द्र शर्मा	मकान नं0 ए–136, एल्फा–1, ब्लॉक–ए, ग्रेटर नोएडा–201310	9213999744	"
10.	श्री सुभाषचन्द्र मित्तल	865, जोशीरोड, करोलबाग, दिल्ली	9210364442	'
11.	श्रीमती नीलम श्रीवास्तव	एम–126, सै0–25, नोएडा	8800439949	"
12.	श्री सी0एस0 भोगल	सी–2/103, सै0–36, नोएडा	9811026745	"
13.	श्री कृष्ण कुमार मिश्रा	12/250, कोटेश्वरनगर, पो0 रविशंकर यूनिवर्सिटी, (R.S.U.) जिला–रायपुर–492010	9406379229	"
14.	श्री मांगेराम भारद्वाज	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9999232019	"
15.	डॉ0 अंकित अवाना	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9871775563	"
16.	श्री अजय कुमार शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा	9911220088	"
17.	डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	1इ, लक्ष्मी रोड, डालनवाला, देहरादून	09411714660	आजीवन सदस्य
18.	श्री देवेन्द्र सिंह अवाना	B 5/6,सामने C-4/106, सै0–31, नोएडा	9811602397	"
19.	श्री सूरजभान शर्मा	ए–141, सै0–20, नोएडा	8527132634	"
20.	श्री विनोद शर्मा	ए–19, सै0–22, नोएडा	9891117721	"
21.	श्री अश्विनी कुमार भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	"
22.	डॉ0 मनोज कुमार पटैरया	25/3, सै0–1, पुष्पविहार, नईदिल्ली	9868114548	"
23.	श्री देवेन्द्र कुमार रावत,	266, वार्ड नं0 7, स्नेहलनगर, वर्धा (महाराष्ट्र)	9423645351	"
24.	श्री भगवान दास पाठक	फ्लैट नं0 302,तीसरी माला बी–बिल्डिंग, सुमन सूरज सोसाइटी, मोटा बराछा, सूरत (गुजरात)–394001	6352673969	"
25.	श्री रविशंकर चतुर्वेदी	904, D-13, AWHO Sandeep Vihar, SeegehalliKadugodi, बंगलौर–560067	9945169080	"
26.	श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता	सी–154, सै0–100, नोएडा	9810464009	"

27.	श्री राधे श्याम शर्मा	ए–55, सै0–27, नोएडा	9999930102	आजीवन सदस्य
28.	श्री रामेश्वर दत्त शर्मा	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9953508132	"
29.	श्री रणजीत सिंह विष्ट	एफ–110, सै–20, नोएडा	9650324529	"
30.	श्री भीम सिंह	मोतीमैमोरियल, दुर्गापार्क, पो0–वसुन्धराग्राम–दल्लूपुरा, दिल्ली–110096	9810181724	"
31.	श्रीमती कुसुम पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9811201847	"
32.	श्री ए.के. सक्सेना	मकान नं0 329, ब्लाक–एच सैक्टर–बीटा–2, ग्रेटर नोएडा	9540274589	"
33.	श्री देवीचरन शर्मा	बी–109, सै0–22, नोएडा	9350859122	"
34.	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	एच 129, सै0–41, नोएडा	9868943638	"
35.	श्री वेदप्रकाश बंसल	ए 33, सै0–19, नोएडा	9350732724	"
36.	श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा	जी–63, सै0–27, नोएडा	9899797090	"
37.	श्री रणवीर सिंह	ग्राम–हजरतपुर वाजिदपुर, सै0–63, नोएडा	9810634772	"
38.	श्री सुरेन्द्र कुमार ठक्कर	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891445905	"
39.	श्री लाल मोहन चौधरी	ए–390, सै0–47, नोएडा	9868851639	"
40.	श्री अमर सिंह सेंगर	ए–162, सै0–20, नोएडा	9971885030	"
41.	श्री भूनिधि शर्मा	डी–185, सै0–49, नोएडा	9871199809	"
42.	श्री श्रीपाल अवाना	ए–286, सै0–47, नोएडा	9210638386	"
43.	श्री यशपाल सिंह	बी–19, सै0–49, नोएडा	9810339398	"
44.	श्रीमती मधु मालती	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891707373	"
45.	श्री विद्याराम अवाना	एच–7, सै0–27, नोएडा	9891960087	"
46.	श्रीमती भारती चतुर्वेदी	बी–2 / 721, कैलाश धाम, ब्लाक नं0–14, सै0–50, नोएडा	9650990257	"
47.	श्री शिवकुमार शर्मा	ए–100, सै0–33, नोएडा	9871636341	"
48.	आचार्य योगेन्द्र पाण्डे	श्रीराम मन्दिर, सै0–36, नोएडा	9810479542	"
49.	श्रीमती अर्चना शर्मा	M-1806, PAN Oasis, Sector-70 नोएडा	9968422229	"
50.	श्री परमात्मा शरण बंसल	ए–83, सै0–49, नोएडा	9810169329	"
51.	श्रीमती सीमा चौबे	एफ–13, सै0–20, नोएडा	9811323076	"
52.	श्री विपन कुमार	सी–3 / 149, सै0–36, नोएडा	9868139393	"
53.	श्री नरेश चौहान	एफ–18, सै0–39, नोएडा	9555955599	"
54.	श्री वी0जे0 चौधरी	बाली भगत रोड, बक्सी बाजार, कटक (उड़ीसा) 753001	9090438678	"
55.	श्री नरेन्द्र कुमार चाचान	65–ए, लखीमीपाथ, गुवाहाटी–781028	9435553023	"
56.	श्री मामचंद	ए–406, सै0–47, नोएडा	8368890732	"
57.	श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता	बी–16, सै0–49, नोएडा	9911609460	"
58.	श्री प्रेम सिंह नागर	बी–0002, अजनारा (ग्रैंड हैरीटेज) सै0–74, नोएडा	9266666052	"
59.	श्रीमती बबीता भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	"
60.	श्री वेदप्रकाश शर्मा	ए–36, सै0–47, नोएडा	9821213055	"
61.	श्री देवेन्द्र सिंह तोमर	ए–67, सै0–48, नोएडा	9891944556	"

पाठकों के विचार

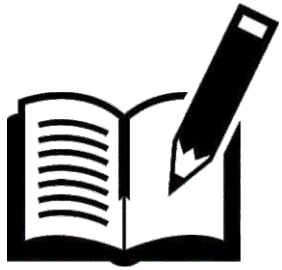

स्मारिका : एक पावन सत्संग

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की 'स्मारिका' के अंक 28 संवत् 2078 (सन् 2021–22) का अवलोकन एवं अध्ययन किया। यह स्मारिका एक पावन सत्संग है।

सतसंगत मुद मंगल मूला। (मानस 1/3/8)

लव निमेष का सत्संग भी परमसुख का प्रदाता होता है, यथा :–

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।। (मानस 5/4)

अस्तु, उक्त स्मारिका का सान्निध्य सत्संग के रूप में प्राप्त होता रहे और संपूर्ण मानव समाज इससे लाभान्वित होता रहे, इसी कामना के साथ इस स्मारिका के सम्पादक मण्डल को हार्दिक बधाइयाँ।

आचार्य डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, दतिया (म0प्र0), फोनः 9826249448

हृदय–मंदिर के शब्दोपहार

श्रीरामचरितमानस मूलतः मंत्र काव्य है, जिसके प्रत्येक शब्द में आध्यात्मिक प्रेरणा का स्पन्दन विद्यमान है। इसे श्रीराम का ग्रंथावतार माना जाता है। विश्व में सनातन धर्म की दुंदुभि बजाने वाले, आध्यात्मिक जगत के चक्रवर्ती सम्राट कहे जाने वाले गोस्वामी तुलसीदास के मानस से प्रेरणा लेकर 65 देशों में आज रामलीला होती है और 25 देशों में रामकथा। मानस का विश्व की 629 भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। यह ग्रंथ केवल भारत के लिए ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण विश्व के लिए ज्ञान का प्रकाश स्तम्भ है। आज जन–मानस आधुनिक विभीषिकाओं से क्रंदन कर रहा है। मानवीय संस्कारों का क्षरण दिखाई पड़ रहा

है। यह भविष्य के लिए शुभ संकेत नहीं है। महात्मा गांधीजी के राम राज्य के स्वप्न को साकार करने के लिए मानस एक राष्ट्रीय आईना है। विगत कई वर्षों से मैं श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका पढ़ रहा हूँ। यह श्रीरामचरितमानस में वर्णित आदर्शों, भक्ति–ज्ञान–वैराग्य भावों एवं धर्म–नीति की संवाहिका है। इसके वार्षिक अंक 28 (सन् 2021–22) में भी विद्वानों के लेख सराहनीय हैं। मैं इसे पढ़कर आत्मविभोर हूँ।

श्रीराम जन्म सिंह, ग्राम–दामा, जिला–आजमगढ़, उ.प्र., फोन–9839453851

वर्तमान समय और स्मारिका

आज जो विचार हमें मानसिक बल प्रदान कर सकते हैं और अवसाद–निराशा से निकाल कर जीवन–शक्ति प्रदान कर सकते हैं, वही कार्य श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा प्रकाशित स्मारिका द्वारा किया जा रहा है। ईश्वरीय कार्य के लिए जितना भी साधुवाद दिया जाये कम है। आज के समय में यही मिलने और सत्संग का सशक्त माध्यम है। यह सुखद संयोग ही है कि श्री भगवान दास पटैरयाजी से मेरी मुलाकात दण्कारण्य में आज से 51 वर्ष पूर्व हुई थी और उसी मुलाकात ने यह संयोग जोड़ा है। स्मारिका के लेखों में विभिन्न विषयों को पढ़कर लगता है कि महात्मा तुलसीदासजी ने हमें जीवन जीने के जो सूत्र प्रदान किए हैं, कितना बड़ा उपकार किया है, बड़ी कृपा की है। पत्रिका का मनमोहक आवरण, व्यवस्थित लेखों का संयोजन, पत्रिका के कार्य में निष्ठा और लगन को प्रदर्शित करता है। भगवान इसी तरह हम सब पर कृपा बरसाते रहें।

पं0 राधाकृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर (दतिया) मध्यप्रदेश, फोन–8770436182

ज्ञानवर्धक लेखों का संग्रह

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का अंक 28 प्राप्त हुआ। इसका आवरण बहुत सुन्दर है, क्योंकि श्रीरामजी के विजय–मंत्र 'श्रीराम जय राम जय जय राम' से सजाया गया है और सभी लेख ज्ञानवर्धक हैं एवं भक्तिभाव से ओतप्रोत हैं। मैं स्मारिका के सम्पादक मंडल को साधुवाद ज्ञापित करते हुए आशान्वित हूँ कि भविष्य में भी यह ज्ञान–गंगा अविरल प्रवाहित होती रहे।

श्री संतोष कुमार वैद्य, गाजियाबाद (उ.प्र.), फोन–7017695829

भक्तिरस में सराबोर करने वाली स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का प्रकाशन स्तुत्य, पुण्य कर्म एवं प्रणम्य है। इस वैश्विक महामारी में स्मारिका को देखने के लिए नयन बेचैन थे। प्राप्त होने पर हृदय गद्‌गद हो गया। इससे ज्ञान, वैराग्य, भक्ति भावना बलवती होती है। ईश्वर से प्रार्थना है कि यह प्रकाशन प्रति वर्ष अनवरत चलता रहे। लेख क्रमशः उच्चकोटि के होते हैं, जो पाठक को पठनकाल में भक्तिरस में सराबोर करते हैं। हम शुद्ध अन्तःकरण से साधुवाद के साथ शुभकामनाएँ प्रेषित करते हुए अपने आपको सौभाग्यशाली मानते हैं। अन्य वर्षों की तरह इस वर्ष भी आपका अन्य वर्षों की तरह वार्षिक अंक मानस प्रेमियों को भक्ति में आप्लावित–आनन्दित करे, ऐसी कामना है।

पं. राजेश कुमार तिवारी 'मक्खन', झांसी (उ.प्र.), फोन–9451131195

रोचक भाषा शैली एवं शिक्षाप्रद फिलर्स

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का वार्षिक अंक 28 प्राप्त हुआ। विगत कई वर्षों से मैं इसके विभिन्न वार्षिक अंकों को पढ़ रहा हूँ। वर्तमान अंक में कुछ विशेष आकर्षण है। कुछ लेखों के प्रारंभ में उनका सारांश लिखा हुआ है, जिससे ज्ञात होता है कि यह लेख किस संदर्भ में है। इससे पूरा लेख पढ़ने की उत्सुकता जाग्रत होती है। इस अंक में मैं पहली बार देख रहा हूँ कि लेख के साथ लेखक का फोटो भी छपा है। इससे यदि कभी कहीं किसी अवसर पर किसी लेखक से भेंट हो जाए तो हम पहचान सकते हैं और उनसे सत्संग कर सकते हैं। पूर्व की भाँति सभी लेखों की भाषा–शैली रोचक है। इसी प्रकार पूर्व अंकों की तरह इस बार भी सभी फिलर्स बहुत प्रेरणाप्रद हैं।

केशव नारायण नायक, नौगाँव (बुंदेलखण्ड), फोन–9424969800

आवरण चित्र अत्यधिक मनमोहक

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का अंक 28 प्राप्त करके बहुत प्रसन्नता हुई। इसके कवर पेज पर मुद्रित श्रीरामजी का चित्र अत्यन्त मनमोहक है। पत्रिका मिलते ही मैंने इसे हृदय से लगा लिया। इसमें प्रकाशित सभी लेख भगवत्गुणगान से ओतप्रोत एवं प्रेरणाप्रद हैं। एक लेख श्रीरामचरितमानस में तथाकथित भ्रांतियों के निवारणार्थ है। पाण्डित्यपूर्ण ढंग से विस्तारपूर्वक **'अवगुन आठ सदा उर रहहीं'** का विवेचन

किया गया है। इस संदर्भ में मेरा मानना है कि यह युग का प्रभाव है कि लोगों की मतिभ्रष्ट है जो श्रीरामचरितमानस, जो कि शिवजी की कृपा से लिखी गई है, में लिखित दोहा/चौपाइयों पर अपने मन में भ्राँतियाँ पैदा कर लेते हैं। यदि यह रचना सतयुग की होती तो कोई भी मन में भ्राँतियाँ न लाता, बल्कि यदि समझ में नहीं आता तो जिज्ञासु की तरह किसी विद्वान से अपनी शंका का निवारण कर लेता। कलियुग में एक तो लोगों की बुद्धि भ्रमित है और दूसरे इस युग का प्रभाव है–'विरोध करना'। श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में कलियुग के वर्णन में भी यह लिखा है, **'कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा।। (7/104/5)।** आजकल लोग अच्छी बातों का भी केवल विरोध करने की दृष्टि से विरोध करते हैं।

श्री बाबूराम तिवारी, गौरिहार (छतरपुर, म.प्र.), फोन–9754485993

समाज को जाग्रत करने वाली पत्रिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका (अंक 28) मुझे पहली बार प्राप्त हुई। इसे पढ़कर अत्यंत प्रसन्नता हुई। इसमें प्रकाशित लेख ज्ञानवर्धक एवं भक्तिभाव से परिपूर्ण हैं। इसका आवरण बहुत सुंदर एवं आकर्षक है। मेरे विचार से यह समाज को जाग्रत करने वाली पत्रिका है। इसके सम्पादक मंडल का प्रयास अत्यंत सराहनीय है। मैं स्मारिका के लेखन, सम्पादन आदि से जुड़े सभी महानुभावों को हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करता हूँ।

श्री जगन्नाथ शुक्ला, कानपुर, फोन–8707244206

सामाजिक चरित्र उत्थान का सराहनीय प्रयास

विगत कई वर्षों से मैं श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा प्रकाशित 'स्मारिका' का अध्ययन कर रहा हूँ। मुझे वार्षिक अंक 28 प्राप्त कर अपार प्रसन्नता हुई। आजकल समाज के नैतिक उत्थान हेतु जो कुछ भी किया जाए कम पड़ रहा है, क्योंकि चारों ओर स्वार्थ सिद्धि की गूँज सुनाई देती है। ऐसी विषम परिस्थिति में और विशेषकर इस 'कोरोना काल' में भक्ति–ज्ञान–वैराग्य से परिपूर्ण लेख प्रकाशित करके यह समिति समाज के लिए बहुमूल्य योगदान कर रही है। समिति द्वारा सामाजिक चरित्र–उत्थान का यह प्रयास सराहनीय है। समिति प्रगति के नित नए सोपान चढ़ती जाए, ऐसी कामना है।

श्री मुखराम सिंह पाल, गाजियाबाद, फोन–9810662757

आकर्षक स्मारिका

मुझे स्मारिका का वार्षिक अंक 28 प्राप्त हुआ। इससे पूर्व भी मुझे श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका के कुछ अंक प्राप्त हुए। समिति द्वारा प्रकाशित स्मारिका में उत्तरोत्तर नवीनता देखने को मिली। इसका कलेवर और आवरण चित्र बहुत आकर्षक है। इसमें प्रकाशित लेख ज्ञानवर्द्धक हैं। मेरे पिताजी इसे बड़े चाव से पढ़ते हैं। स्मारिका प्रेषित कर हमें अनुगृहीत करने हेतु समिति के शासी निकाय का हार्दिक आभार।

श्री अग्निवेश सोनी, रीवा (म.प्र.), फोन–7987175087

सहयोग राशि भेजने वालों को साधुवाद

स्मारिका प्रकाशनार्थ हमें, इस समिति के सदस्यों के अतिरिक्त श्री के0पी0 गुप्ता (बिलासपुर, छत्तीसगढ़), श्री एम0के0 शर्मा, फरीदाबाद, श्री अशोक दत्त, गुरुग्राम एवं डॉ0 प्रमोद पालीवाल (रोहतक, हरियाणा), डॉ0 बी0एस0 बंसल, जोधपुर, श्री ओम प्रकाश शर्मा, कोटा (राजस्थान), श्रीमती माया उपाध्याय (झाँसी, उ0प्र0), श्री राजेन्द्र पाल, चण्डीगढ़, श्री विजय कुमार मारू, मुबंई एवं श्री राम बाबू शर्मा, दिल्ली, श्री अवध किशोर दूबे (झारखण्ड), श्री नरेन्द्र कुमार चाचान, गुवाहाटी (आसाम), श्री राम जन्म सिंह, दामा (आजमगढ़, उ0प्र0), श्री हर प्रसाद चतुर्वेदी (कानपुर), श्री राजेन्द्र कुमार नायक, भोपाल (म0प्र0), श्री द्वारका प्रसाद वैद्य, झाँसी, श्री ए0के0 उपाध्याय, आगरा, श्री सुशील त्रिपाठी, महोबा, श्री राम सहाय, ग्राम बलचौर, जिला महोबा (उ0प्र0) से सहयोग राशि प्राप्त हुई है। हम सहयोग राशि भेजने वाले पाठकों को साधुवाद ज्ञापित करते हैं तथा आशान्वित हैं कि भविष्य में भी सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

- **जहाँ दूसरों को समझाना कठिन हो, वहाँ खुद को समझ लेना ही बेहतर है। 'खुश' रहने का सीधा सा एक ही 'मंत्र' है कि उम्मीद अपने आप से रखो, किसी और से नहीं।**

- **किसी ने मटके से पूछा तुम इतने ठण्डे कैसे रहते हो? मटके ने मुस्करा कर जवाब दिया, जिसका भूत, भविष्य और वर्तमान सब मिट्‌टी से बना हो, उसे घमण्ड और गर्मी किस बात की।**

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा

श्री कैलाश त्रिपाठी, औरैया, उ.प्र., फोन–9897939095

संग या सान्निध्य प्राणिमात्र की नैसर्गिक आवश्यकता है। संग के अनेक रूप हैं। जीवोत्पत्ति प्रकृति के संयोग से होने के परिणामस्वरूप प्रथमतः जीव का प्रकृति से अभिन्न संग है। पुनः जैविक वैविध्य के अन्तर्गत एक प्रकार के जीवों की सहयुक्तता या सामूहिकता स्वाभाविक है–जैसे बन्दर के साथ बन्दर, कबूतरों के साथ कबूतर तथा मनुष्य के साथ मनुष्य की सहयुक्तता। इसे प्राकृतिक संग का द्वितीय चरण माना जा सकता है। कोई प्राणी बिना संग के नहीं रह सकता। सत्व, रज, तम का त्रिगुण संयोग न केवल पशु–पक्षी, गाय, भैंस, कौवा, तोता, शेर, सियार आदि का भिन्न–भिन्न होता है, बल्कि एक योनि में भी आंशिक आनुपातिक भिन्नता होती है। त्रिगुण संयोग की इसी भिन्नता के कारण मनुष्यों के रूप, रंग, वाणी, दृष्टि, चाल–ढाल, प्रवृत्तियों व स्वभावों में भिन्नता दिखाई देती है। जिन दो मनुष्यों के त्रिगुण संयोग में जितना अधिक साम्य होगा, उतनी ही उनकी प्रवृत्तियों और स्वभाव में समानता होगी। मनुष्य प्रायः अपनी–अपनी प्रवृत्तियों व स्वभाव के समरूप स्वभाव वाले व्यक्ति का संग पसन्द करते हैं। यह संग का तृतीय सोपान है।

जब हमारा संग समान प्रवृत्तियों और स्वभाव वालों से होता है तो हमारी वे मनोवृत्तियाँ और अधिक प्रबल और परिपक्व हो जाती हैं, जो हमारे संगी से साम्य रखती हैं और जब विपरीत प्रकृति वाले व्यक्ति से हमारा संग होता है तो परस्पर दोनों की प्रवृत्तियाँ प्रभावित होती हैं एवं उनमें परिवर्तन संभावित है। सदाचारी व्यक्ति दुराचारियों की अनवरत दीर्घकालीन संगत से दुराचारी हो सकता है और दुराचारी सदाचारियों की दीर्घकालीन संगत से सदाचारी। श्रीरामचरितमानस में गोस्वामीजी लिखते हैं–

सठ सुधरहिं सतसंगत पाई। पारस परस कुधात सुहाई।। (1/3/9)

नीति शास्त्रों से भी इसकी पुष्टि होती है :–

असतां संग दोषेण साधवो यान्ति विक्रियाम्।
दुर्योधन प्रसंगेन भीष्मो गो हरणे गतः।।

अर्थात् बुरे लोगों के संग से अच्छे भी बुरे हो जाते हैं, जैसे दुर्योधन का साथ पाकर भीष्म जैसे महान व्यक्ति भी गौ–हरण करने के लिए चले गए थे। पुन :–

हीयते हि मतिस्तात हीनैः सहसमागमात्।
समैश्च समतामेति विशेषैश्च विशिष्टताम्।।

अर्थात् हीनों की संगति से मनुष्य हीन बनता, समान वालों की संगति से समान तथा विशिष्ट लोगों की संगति से मनुष्य विशिष्ट हो जाता है।

गर्ग संहिता में कहा गया है कि गंगा पाप का, चन्द्रमा ताप का और कल्पवृक्ष दीनता के अभिशाप का अपहरण करता है, परन्तु सत्संग पाप, ताप और दैन्य तीनों का तुरन्त नाश कर देता है :–

गंगा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुद्वैरेत्।
पापं तापं तथा दैन्यं सद्यः साधुसमागमः।।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी कुसंग और सुसंग पर 'मानस' में उदाहरण सहित विशद प्रकाश प्रक्षेपण किया है :–

हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू।।
गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीच जल संगा।।
साधु असाधु सदन सुक सारीं। सुमरहिं राम देहिं गनि गारीं।।
धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई।।
सोइ जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवन दाता।।

(1/7/8–12)

ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग।। (1/7क)

अर्थात् बुरे संग से हानि और अच्छे संग से लाभ होता है। यह बात लोक और वेद में है और सभी जानते हैं। पवन का साथ पाकर धूल आकाश में चढ़ जाती है। साधु के घर के तोता–मैना राम–राम रटते हैं तथा असाधु के घर के तोता–मैना गिन–गिनकर गालियाँ देते हैं। कुसंग के कारण धुआँ कालिख कहलाता है। वही धुआँ सुन्दर स्याही

बनकर पुराण लिखने के काम में आता है और वही धुआँ जल, अग्नि और पवन के संग से बादल बनकर जगत को जीवन देने वाला बन जाता है। ग्रह, औषधि, जल, वायु और वस्त्र ये सब भी कुसंग और सुसंग पाकर संसार में बुरे और अच्छे पदार्थ बन जाते हैं। चतुर और विचारशील पुरुष ही इस बात को जान पाते हैं।

नीतिकारों ने सत्संग के महत्व को अनेक रूपों में स्वीकारते हुए समाज का पथ प्रदर्शन किया है :–

जाड्यं धियो हरति सिंचति वाचि सत्यं मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।।

अर्थात्– बुद्धि की जड़ता को हरने वाली, वाणी को सत्यता प्रदान करने वाली, चारों दिशाओं में मान और उन्नति देने वाली, पापों को हरने वाली, चित्त को प्रसन्नता देने वाली, दिशाओं में कीर्ति फैलाने वाली सत्संगति पुरुष के लिए क्या नहीं करती?

श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण अपने प्रिय सखा उद्धव से कहते हैं कि संसार में जितनी आसक्तियाँ हैं, उन्हें सत्संग नष्ट कर देता है। यही कारण है कि सत्संग जिस प्रकार मुझे वश में कर लेता है, वैसा साधन न योग है, न सांख्य, न धर्मपालन और न स्वाध्याय। तपस्या, त्याग, **इष्टापूर्ति** और दक्षिणा से भी मैं वैसा प्रसन्न नहीं होता। कहाँ तक कहूँ, तीर्थ और यम–नियम भी सत्संग के समान मुझे वश में करने में समर्थ नहीं हैं।

न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एव च।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा।।
व्रतानि यज्ञश्छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः।
यथावरुन्धे सत्संगः सर्वसंगापहो हि माम्।। (श्रीमद्भा. 11/12/1–2)

महाकवि कालिदास ने भी ''कुमारसंभव'' में कहा है– **''न कस्य वीर्याय वरस्य संगतिः।''** अर्थात् श्रेष्ठ की संगति किसका बल नहीं बढ़ाती। प्रसंगानुरूप यहाँ सत्संग के संबंध में संत कबीर की वाणी पर भी एक दृष्टि अपेक्षित है :–

संगत ही गुण ऊपजै संगत ही गुण जाय।
बांस फांस अरु मीसरी एकै भाव बिकाय।।
कबिरा संगत साधु की ज्यों गंधी का बास।
जो कुछ गन्धी दे नहीं तो भी बास सुबास।।

अर्थात् सुसंग से गुण उत्पन्न होते हैं और कुसंग से गुण नष्ट हो जाते हैं। मिश्री के साथ में बांस की छोटी लकड़ी मिश्री के भाव बिक जाती है। पुनः कहते हैं कि साधु का सान्निध्य इत्र बेचने वाले के समान है। यदि गंधी (इत्र वाला) कुछ न भी दे तो भी इत्र की सुगंध तो सुबासित कर ही जाती है।

सत्वगुण में वृद्धि हेतु, मनोवृत्तियों के परिमार्जन हेतु तथा वृत्तियों से रहित होने के लिए शास्त्रों में अन्यान्य साधनों का निरूपण किया गया है। साधनों के द्वारा सत्त्वगुण में वृद्धि, मनोवृत्तियों के नियंत्रण, परिमार्जन और निवृत्त होने की स्थिति केवल मनुष्य योनि में ही है। आहार, आचरण और संग आदि मनोवृत्तियों को प्रभावित करने वाले कारकों में संग एक ऐसा महत्वपूर्ण कारक है जो न केवल हमारी मनोवृत्तियों को प्रभावित करता है, बल्कि मनोवृत्तियों को प्रभावित करने वाले कारकों आहार–आचरण आदि को भी प्रभावित करने की क्षमता रखता है। सतोगुणी व्यक्ति के संग से सत्त्वगुण की अभिवृद्धि होती है, रजोगुणी मनुष्य का साथ करने से रजोगुण बढ़ता है तथा तमोगुणी मनुष्य का सान्निध्य तमोगुण बढ़ाने में सहायक है। इसी प्रकार सद् या उच्च मनोवृत्तियों वाले व्यक्ति का साथ करने से हमारी मनोवृत्तियाँ ऊर्ध्वोन्मुखी तथा सदोन्मुखी होती हैं। असद् या मलिन मनोवृत्तियों वाले मनुष्य के साथ से हमारी मनोवृत्तियाँ पतनोन्मुखी हो जाती हैं, अतः व्यक्ति को सदैव श्रेष्ठ व उच्च मनोवृत्तियों वाले व्यक्तियों का ही साथ करना चाहिए।

संतत्व सत्वगुण से युक्त उच्च मनोभावों और सद्वृत्तियों की एक ऐसी अचल परिपक्वावस्था है, जिसमें उसकी मनोवृत्तियाँ न केवल दुराचारी, तमोगुणी, मलिन व छुद्र व्यक्ति के सान्निध्य में भी दृढ़ता से स्थिर रहती हैं, बल्कि अपने सान्निध्य में आने वाले व्यक्ति की मनोवृत्तियों को अपने अनुरूप बदलने की क्षमता रखती हैं।

भक्ति का प्रवेश द्वार ही मन की निर्मलता है। संत का अंतःकरण इतना निर्मल होता है कि अपने सान्निध्य में आने वाले व्यक्ति को सहज रूप से प्रभावित करता है, इसीलिए संत के संग को प्रथम भक्ति की मान्यता प्रदान की गई। मानस के उत्तर काण्ड में भगवान शंकर माँ पार्वती से कहते हैं :–

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान।। मानस (7/125ख)

हे गिरिजा! संत समागम के समान दूसरा कोई लाभ नहीं है। वह श्रीहरि की कृपा के बिना सुलभ नहीं हो सकता, ऐसा वेद पुराण गाते हैं।

'मानस' के बालकाण्ड में गोस्वामीजी लिखते हैं :–

बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।। मानस (1/3/7)

संत के संग की सुलभता को तुलसीदासजी प्रभु की अहेतुकी कृपा का ही एक रूप मानते हुए नाना रूपों में इसकी अभिव्यक्ति करते हैं। यथा 'मानस' के सुन्दरकाण्ड में विभीषण हनुमानजी से कहते हैं :–

अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता।। मानस (5/7/4)

उत्तरकाण्ड में मोहग्रस्त गरुड़ से भगवान शंकर कहते हैं कि सभी प्रकार के संशय (संदेह) या भ्रम आदि सत्संग से स्वतः समाप्त हो जाते हैं :–

तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहु काल करिअ सतसंगा।। मानस (7/61/4)

यहाँ मैं सत्संग की महिमा विषयक एक उपाख्यान का उल्लेख करना चाहता हूँ– एक बार राजर्षि विश्वामित्र अरण्य मार्ग से कहीं जा रहे थे। मार्ग में एक स्थान पर उन्होंने देखा कि वृक्ष फलों से लदे हुए हैं, हिंसक जानवर अहिंसक हो रहे हैं तथा दूर से वेद मंत्रों की ध्वनि आ रही है। विचार आया कि वह निश्चित किसी तपस्वी का आश्रम है। पता करने पर ज्ञात हुआ कि वह ब्रह्मर्षि वसिष्ठ का आश्रम है। वे वसिष्ठजी से मिलने आश्रम पर गये। भारतीय संस्कृति में किसी से मिलने खाली हाथ नहीं जाया जाता। संतों की परम्परा के अनुसार उन्होंने हाथ में जल लेकर संकल्प करते हुए वसिष्ठजी को दस हजार वर्ष की तपस्या का फल भेंट कर दिया। कुछ देर दोनों ऋषियों का सत्संग हुआ और विश्वामित्रजी अपने गन्तव्य की ओर चले गये। बहुत समय बाद कभी वसिष्ठजी विश्वामित्र के आश्रम की ओर से निकल रहे थे। विचार आया कि विश्वामित्रजी से मिलना भी हो जायेगा और उनका व्यवहार भी लौटा देंगे। जब वे विश्वामित्रजी के समीप पहुँचे तो उन्होंने कमण्डल से जल लेकर विश्वामित्र को ढाई पल के सत्संग का फल भेंट कर दिया। विश्वामित्रजी को बुरा लगा, वे बोले–कहाँ दस हजार वर्ष की तपस्या और कहाँ केवल ढाई पल का सत्संग? यह तो लोक–व्यवहार के विपरीत है। वसिष्ठजी ने कहा– उद्विग्न न हों, पहले किसी से निर्णय करा लिया जाये कि दस हजार वर्ष की तपस्या अधिक है या ढाई

पल का सत्संग। वे दोनों ऋषि इस वाद का निर्णय कराने के लिए ब्रह्माजी व भगवान शंकर सहित कई विशिष्ट देवों के पास गए, लेकिन ऋषियों के इस वाद का निर्णय किसी ने नहीं किया। अन्त में वे दोनों पृथ्वी को धारण करने वाले शेषनागजी के पास पहुँचे और उनसे अपने विवाद का निर्णय करने का आग्रह किया। शेषजी बोले मैं तो समस्त पृथ्वी लोक का भार सिर पर धारण किए हूँ, अतः विवाद का निर्णय कैसे कर सकता हूँ? यदि आप दोनों में से कोई कुछ देर के लिए पृथ्वी का भार अपने ऊपर ले लें तो मैं थोड़ा अवकाश पाकर विचार पूर्वक इसका निर्णय कर दूँ। विश्वामित्रजी तुरन्त बोले–यह कौन सी बड़ी बात है और उन्होंने हाथ में जल लेकर 10 हजार वर्ष की तपस्या का संकल्प छोड़ते हुए कहा कि इसके बल से पृथ्वी अपने स्थान पर स्थिर रहे और तब शेषजी से कहा कि आप अपना फन हटा लें। जैसे ही शेषजी अपना फन हटाने लगे पृथ्वी हिलने लगी। इस प्रकार विश्वामित्रजी ने कई बार में बढ़ाते–बढ़ाते अपने सम्पूर्ण जीवन की तपस्या का संकल्प कर दिया, लेकिन वे अपने तप बल से पृथ्वी को स्थिर नहीं रख पाये। अब वसिष्ठजी की बारी आयी। वसिष्ठजी ने एक पल के सत्संग के फल का संकल्प करके शेषजी से अपना फन हटाने का अनुरोध किया। एक पल के सत्संग के बल पर पृथ्वी अपने स्थान पर यथावत स्थिर बनी रही। यह उपाख्यान सत्संग की महिमा का संकेत करता है। मनीषियों ने सत्संग की महिमा को विभिन्न प्रकार से निरूपित किया है। श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं :–

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिय तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।। (5/4)

हे तात! स्वर्ग और मोक्ष के समस्त सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाये तो भी सब मिलकर एक क्षण के सत्संग के बराबर नहीं हो सकते।

बाबा तुलसी की स्पष्ट मान्यता है कि संसार में जहाँ कहीं भी जिस किसी ने बुद्धि, कीर्ति, सद्‌गति, ऐश्वर्य और भलाई प्राप्त की है, उन सभी को सत्संग का ही प्रभाव जानना चाहिए, क्योंकि वेदों में और लोक में इनकी प्राप्ति का अन्य कोई साधन नहीं है। वे सत्संग को फल तथा अन्य साधनों को फूल मानते हैं।

बालमीक नारद घटजोनी। निज निज मुखनि कही निज होनी।।
जलचर थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना।।
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।

सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।
सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।।

मानस (1/3/3–6 तथा8)

सत्संग विभिन्न प्रकार से हमारे आहार–विहार, आचरण एवं मनोवृत्तियों पर नियंत्रण और उनका परिमार्जन करता है। **नीतिशास्त्रों** में कहा गया है कि सत्पुरुषों के संग से सब कुछ सुलभ हो जाता है। इसलिए इसे प्रथम भक्ति के रूप में निरूपित किया गया, यथाः–

कल्पद्रुम कल्पितमेव सूते सा कामधुक्कामितमेवदोग्धि।
चिन्तामणिचिन्तितमेवदन्ते संतां हि संगः सकलं प्रसूते।।

अर्थात् कल्पवृक्ष केवल कल्पित वस्तुएँ देता है, कामधेनु इच्छित भोग प्रदान करती है तथा चिन्तामणि पदार्थ देती है, किन्तु सत्पुरुषों के संग से सब कुछ सुलभ हो जाता है।

....

संत–वचनामृत

शरणागत भक्त भगवान के भरोसे रहते हैं, जैसे प्रभु रखें, उसी तरह रहने को तैयार रहते हैं। प्रभु का संसार है, प्रभु की सृष्टि है। उसकी चिन्ता प्रभु को ही है। अपना कार्य प्रभु का चिन्तन करना है। वह भी प्रभु की कृपा से होगा। अवश्य होगा।

समर्पित जीव चिन्ता नहीं करता, उसे जैसे प्रभु रखें, उसी प्रकार वह रहता है। अपने आप में सन्तुष्ट रहने वाले, जितना प्रभु ने धन–जन दिया है, अपने कर्तव्य का पालन करते हुए उसमें पूर्ण सन्तुष्ट रहने वाले धन्य हैं।

शरणागत साधक को इस संसार में इस प्रकार रहना चाहिए, जैसे पाणिग्रहण के बाद कन्या पिता के घर रहती है। पिता के घर रहकर सारे काम–काज करती है, पर वह मन में पति के घर को घर मानकर रहती है। यहाँ के बाद उसे अपने घर जाना है, ऐसा दृढ़ चिन्तन करती है। इसी प्रकार इस जगत में रहना चाहिए, सब कुछ करना चाहिए, पर यह मन में मानना चाहिए कि यह संसार मेरा अपना घर नहीं है। यहाँ थोड़े दिन रहकर परमपिता परमात्मा के पास जाना है। वही अपने निज हैं, इस विश्वास–सम्बन्ध से जीव ईश्वर का बन जाता है। प्रभु उसे अपना लेते हैं।

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ

पं. रामनरेश तिवारी, 'पिण्डीवासा', प्रयागराज, उ.प्र., फोन–9415443173

भारतीय मीमांसा में 'शब्द' को ब्रह्म का स्वरूप माना गया है। दूसरे रूप में कहें तो शब्द–विचार सोद्देश्य अर्थपरख होते हैं। इस दृष्टि से संतप्रवर गोस्वामी तुलसीदासजी की मानस–मंदाकिनी अपना विशिष्ट स्थान रखती है। यह हर पद–पंक्ति में मर्म–गूढ़ार्थ का तत्वज्ञान प्रस्तुत करती है। गोस्वामीजी स्वयं तत्व–ज्ञानी, शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान तो थे ही और साथ ही शिव–कृपा प्राप्त थे, अतः उन्होंने ब्रह्म–ज्ञान की अनुभूति के आधार पर लिखा और कहा।

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामीजी ने प्रयाग नगरी के महत्व का उल्लेख किया है, यहाँ तक कि मानस के प्रारम्भ में ही **श्रीगुरु–इष्ट आराध्यदेव के साथ ही साथ वे प्रयागराज एवं अयोध्या नगरियों का सादर उल्लेख एवं वंदन करते हैं–**

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।। (1/1/1)
मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम <u>तीरथराजू</u>।। (1/2/7)
बंदउँ अवध पुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि कलुष नसावनि।। (1/16/1)

इसके माध्यम से गोस्वामीजी ने प्रयागराज की विशिष्टता को जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करके प्रयागनगरी को विशेष रूप से गौरवान्वित किया है। विचारणीय है कि ऐसी कौन सी पावन पुरी है जिसे माँ गंगा–यमुना–सरस्वती की अप्रतिम त्रिवेणी के सनातन प्रवाह का सान्निध्य प्राप्त है, जिसे त्रिकालदर्शी, शास्त्रों के प्रणेता और श्रीरामकथा के प्रवर्तक महर्षि भरद्वाजजी की साधना स्थली के साक्षी होने का सौभाग्य प्राप्त हो और ऐसी कौन सी दूसरी नगरी होगी, जिसे प्रभु श्रीराम, माता सीता, वीरवर लक्ष्मणजी के वनवास गमन एवं वनवास से आगमन पर उनकी चरण–रज से कृत्–कृत् होने का दुर्लभ सौभाग्य प्राप्त हुआ हो। इसी प्रकार वनवास क्रम में अयोध्या से प्रस्थान के बाद प्रभु श्रीरामजी की यात्रा का इसे पहला पड़ाव, जहाँ पर उन्होंने महर्षि भरद्वाज से सत्संग किया, बनने का गौरव प्राप्त हुआ। उल्लेखनीय है कि जब माता कैकेई उन्हें राज्याभिषेक के स्थान पर

वनगमन की बात कर रही थीं, तब श्रीरामजी ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा था कि इसमें तो सभी प्रकार से मेरा हित है, क्योंकि वनवास काल में मुनियों से विशेष रूप से मिलना होगा, यथा :–

मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर।
तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर।। (2/41)

उपर्युक्त वर्णित ऐसी विशेषताओं के आलोक में गोस्वामीजी का यह जयघोष अत्यंत संक्षेप में मर्म–अर्थ के सूत्र स्वरूप स्वतः ही स्पष्ट कर देता है –''**को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ**'' **(2/106/1)**

यही नहीं महाकवि प्रयागराज की तुलना संत समाज के परिप्रेक्ष्य में अनूठे काव्यात्मक दार्शनिक क्रम में करते हैं। वे संत समाज का स्मरण चलते–फिरते तीर्थराज के रूप में, रामभक्ति रूपी गंगा की धारा एवं ब्रह्म विचार–प्रचारिणी सरस्वतीजी की अवधारणा के साथ अपने विचार प्रस्तुत करते हैं, यथा :–

मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।
राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा।। (1/2/7–8)

प्रयाग–माहात्म्य की अनुपम दार्शनिक उपमापरक उनकी विवेचना त्रिवेणी के साथ–साथ अक्षयवट को भी अपने में समेट लेती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार :–

बिधि निषेधमय कलिमल हरनी। करम कथा रबिनंदनि बरनी।।
हरि हर कथा बिराजति बेनी। सुनत सकल मुद मंगल देनी।।
बटु बिस्वास अचल निज धरमा। तीरथराज समाज सुकरमा।।
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा।। (1/2/9–12)

अर्थात् अपने धर्म के प्रति जो अटल विश्वास है वह अक्षयवट है। शुभ कर्म ही तीर्थराज का समाज है। यह संतसमाज रूपी प्रयागराज समस्त देशों में सभी को सब समय सहज ही उपलब्ध हो सकता है और उसका आदान–प्रदान करने पर (अनुपालन करने पर) सभी क्लेशों को नष्ट करने वाला है। प्रयागराज से संबंधित गोस्वामीजी की यह अद्भुत व्याख्या तीर्थराज को अलौकिक, अकथनीय तथा सद्यफलदायक निरूपित करती है, यथा:–

अकथ अलौकिक तीरथराऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ।। (1/2/13)

संतसमाज रूपी प्रयाग की विशिष्टता का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं कि जो इसका माहात्म्य प्रसन्नचित्त होकर सुनते–समझते हैं एवं प्रेमपूर्वक इसमें अवगाहन करते हैं, ऐसे मनुष्य भौतिक शरीर के विद्यमान रहते ही धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष चारों फल प्राप्त कर पाते हैं, यथा :–

सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु साधु समाज प्रयाग।। (1/2)

गोस्वामीजी के अनुसार संतसमाज रूपी तीर्थराज में स्नानरूपी सत्संग से अकल्पनीय फल की प्राप्ति होती है, यहाँ तक कि कौए कोयल बन जाते हैं और बगुले हंसः–

मज्जन फल पेखिअ ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला।।
सुनि आचरज करै जनि कोई। सतसंगति महिमा नहिं गोई।। (1/3/1–2)

संत और प्रयाग के रूपक पर आधारित ऐसी विवेचना शायद ही कहीं और देखने को मिले। इसके माध्यम से गोस्वामीजी ने अपनी अपूर्व लेखन प्रतिभा का परिचय तो दिया ही, संतसमाज और प्रयाग के अप्रतिम माहात्म्य को भी अनूठी शैली में प्रस्तुत किया है। मानसरचनाकार की दृष्टि संतसमाज और प्रयाग की महिमा के वर्णन के उपरान्त महर्षि भरद्वाज, उनके आश्रम, माघमास के समय भगवान वेणीमाधव का पूजन एवं वटवृक्ष की ओर जाती है, यथा :–

भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा। तिन्हहिं राम पद अति अनुरागा।।
तापस सम दम दया निधाना। परमारथ पथ परम सुजाना।।
माघ मकरगत रबि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई।।
देव दनुज किंनर नर श्रेनीं। सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनीं।।
पूजहिं माधव पद जलजाता। परसि अखय बटु हरषहिं गाता।।
भरद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिबर मन भावन।। (1/44/1–6)

अर्थात् माघ मास में जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करते हैं, तब श्रद्धावान सज्जन तीर्थराज प्रयाग आते हैं। यही नहीं इस पावन वेला में देव–दनुज–किन्नर और सभी जन समुदाय आदरपूर्वक त्रिवेणी में स्नान करते हैं एवं श्रीवेणीमाधव और अक्षयवट का दर्शन–पूजन करके पुलकित होते हैं। यहीं पर भरद्वाज मुनि का परम रम्य–मुनिमन भावन अति पावन आश्रम है। मानस की आगे की पंक्तियाँ प्रयागराज के तत्कालीन परिवेश एवं

परम्पराओं पर प्रकाश डालते हुए महर्षि भरद्वाज एवं उनके आश्रम की विशिष्टता को रेखांकित करती हैं :—

तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा।।
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहिं परसपर हरि गुन गाहा।। (1/44/7—8)

तीर्थराज प्रयाग में स्नान—ध्यान करने के लिए जाने वाले ऋषि—मुनियों का समाज भरद्वाज मुनि के आश्रम में एकत्रित होता है और प्रातःकालीन स्नानोपरान्त भगवच्चर्चा में तल्लीन रहता है। प्रयागराज का सौभाग्य देखिए कि कभी माघ मास में मुनिश्रेष्ठ याज्ञवल्क्यजी यहाँ पधारे और उस समय उन्होंने महर्षि भरद्वाजजी के विशेष अनुरोध पर उनको श्रीराम के जीवन—दर्शन तथा श्रीराम—तत्व के गूढ़ मर्म से परिचय कराया था, जिसे बाद में महर्षि भरद्वाजजी ने अपनी विद्वत्ता चिन्तन—प्रतिभा से नव आयाम प्रदान किए। गोस्वामीजी भी यही लिखते हैं कि जो सुन्दर श्रीरामकथा महर्षि भरद्वाजजी को मुनिश्रेष्ठ याज्ञवल्क्यजी ने सुनाई थी, उसी संवाद का मैं बखान करूँगा।

जागबलिक जो कथा सुहाई। भरद्वाज मुनिबरहि सुनाई।।
कहिहउँ सोइ संबाद बखानी। सुनहुँ सकल सज्जन सुखु मानी।। (1/30/1—2)

इस प्रसंग से यह सिद्ध होता है कि श्रीराम कथा के श्रवण—प्रवर्तन की परम्परा को प्रयागराज की धरा से नए आयाम प्राप्त हुए, जिनके माध्यम बने महर्षि याज्ञवल्क्य—महर्षि भरद्वाज और फिर गोस्वामी तुलसीदासजी। महर्षि याज्ञवल्क्य एवं महर्षि भरद्वाज के प्रयाग में मिलन की कथा का वर्णन गोस्वामीजी इस प्रकार से करते हैं :—

एक बार भरि मकर नहाए। सब मुनीस आश्रमन्ह सिधाए।।
जागबलिक मुनि परम बिबेकी। भरद्वाज राखे पद टेकी।। (1/45/3—4)

महर्षि भरद्वाजजी ने ऋषि याज्ञवल्क्यजी से प्रश्न किया कि राम कौन हैं? उनका आशय था कि एक राम तो महाराज दशरथ के पुत्र थे, जिनका यश पूरे संसार में व्याप्त है। भगवान शिव जिस 'राम' का नाम जपते हैं वे वही दशरथपुत्र राम हैं या कोई अन्य? मुझे बहुत भ्रम है और गुरु से कभी कुछ छिपाना नहीं चाहिए, अतः मैंने अपने मन का संदेह बता दिया। अब आप मुझ पर दया करके मेरा यह भ्रम दूर कर दीजिए। इसके उत्तर में ऋषि याज्ञवल्क्यजी ने कहा कि तुम मन—वचन—कर्म से रामभक्त हो, पर प्रश्न तो ऐसा किया कि मानो कोई अज्ञानी हो, पर मैं तुम्हारा अभिप्राय समझ गया कि तुम श्रीरामजी के

गूढ़ रहस्यों को श्रवण करना चाहते हो। ऐसा ही प्रश्न माँ भवानी ने शंकरजी से किया था। अब मैं वह संवाद सुनाता हूँ कि वह कब कैसे हुआ, इसे मन लगाकर सादर सुनो।

जागबलिक बोले मुसुकाई। तुम्हहि बिदित रघुपति प्रभुताई।।
रामभगत तुम्ह मन क्रम बानी। चुतराई तुम्हारि मैं जानी।।
चाहहु सुनै राम गुन गूढ़ा। कीन्हिहु प्रस्न मनहुँ अति मूढ़ा।।
ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी। महादेव तब कहा बखानी।।
कहउँ सो मति अनुहारि अब उमा संभु संबाद।
भयउ समय जेहि हेतु जेहि सुनु मुनि मिटिहि बिषाद।।

(1/47/2–4,8 एवं 1/47)

यही नहीं, प्रयागराज को प्रभु श्रीराम एवं महर्षि भरद्वाज के स्मरणीय मिलन का विशिष्ट केन्द्र बनने का गौरव भी प्राप्त हुआ, जिसका सजीव चित्रण गोस्वामी तुलसीदासजी ने इस प्रकार से किया है :–

तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए। करत दंडवत मुनि उर लाए।।
मुनि मन मोद न कछु कहि जाई। ब्रह्मानंद रासि जनु पाई।। (2/106/7–8)

उपर्युक्त विवरण से यह स्वतः स्पष्ट है कि प्रयागराज निःसंदेह सनातनकालीन महिमामंडित केन्द्र रहा है। श्रीरामचरितमानस तथा विभिन्न प्राचीनकालीन ग्रन्थों में संगम–त्रिवेणी तट, अक्षयवट, महर्षि भरद्वाज आश्रम, श्रीवेणीमाधव मंदिर, श्रृंगवेरपुरधाम आदि जैसे पावन स्थलों के संबंध में श्रद्धामय उल्लेख हमारे प्राचीनकाल के गौरव का बोध कराते हैं। इन स्थानों के वर्तमान स्वरूप को देखकर भी प्रयागराज की प्राचीनकालीन गरिमा का अनुमान लगाया जा सकता है।

अधिकांश लोग, विशेषकर नई पीढ़ी प्रयागराज के **उपर्युक्त विशिष्ट स्थलों से अपरिचित है, अतः जनजागरण और आत्मगौरवबोध भाव हेतु प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है, जिसके लिए जागरूक जनसमुदाय, स्वयंसेवी संस्थाओं (एन.जी.ओ.) एवं सरकार को इस दिशा में प्रयत्नशील होने की परम आवश्यकता है।**

जो झुक सकता है, वह सारी दुनिया को झुका सकता है।

भगवत्प्राप्ति के साधन : प्रतीक्षा, परीक्षा एवं समीक्षा

डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय, झाँसी, उ.प्र., फोन–7860039496

कोई भी मनुष्य चाहे जैसे जीवन–यापन करता हो, कैसे भी अपने परिवार का भरण–पोषण करता हो, उसे इस स्वार्थमय जीवन के साथ कुछ आध्यात्मिक जीवन भी जीना चाहिए, जिससे कि वह शनैः–शनैः उस परम तत्व भगवद्–सत्ता के पास पहुँच सके और सुखमय जीवन के साथ ही अपना उद्देश्य भी प्राप्त कर सके। प्रायः लोगों को अपने जीवन का लक्ष्य ही नहीं पता है कि कहाँ जाना है, क्या करना है? कभी–कभी सोचा कीजिए इस एक अनुत्तरित प्रश्न का उत्तर पाने के लिए। वैसे जीवन तो जानवरों को भी मिलता है तथा कई मनुष्यों के जीवन से भी कम संघर्ष करके जानवर बड़ा आरामदायक जीवन व्यतीत करते हैं। मनुष्य जीवन तो जानवरों से उच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए है, अतः जब हम आप जीवन में आध्यात्मिक दृष्टिकोण को भी समाहित करते हैं तभी हमें जीवन का लक्ष्य तथा मानव–जीवन का चरमोत्कर्ष मिल सकता है।

आध्यात्मिक का तात्पर्य है आत्मा के आधिपत्य में, आत्मा के प्रकाश में जीवन व्यतीत करना। वास्तव में हमने शरीर को ही सब कुछ मान रखा है, जबकि वह आत्मा से ही संचालित है–**ईस्वर अंस जीव अबिनासी (7/117/2)।** जीव ईश्वर का ही अंश है और अन्ततः इसे जाना तो ईश्वर में ही होगा, यही हम लोगों के जीवन का लक्ष्य है। यह शरीर पंच महाभूतमय (छिति, जल, पावक, गगन एवं समीर), पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं इनके पाँच विषय (सुनना, देखना, गंध लेना, स्वाद लेना एवं स्पर्श) पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार– इन 24 जड़ तत्वों से बना है, जो आत्मा अर्थात् चेतन तत्व की उपस्थिति में सारे कार्य करता है। सिद्धांत यह है कि शरीर आत्मोन्नयन का साधन है और हमने 24 जड़ तत्वों से निर्मित स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर को ही महत्व दे रखा है। हम मनोन्मुखी हैं अर्थात् जैसे मन कहता है वैसे चलते हैं। बुद्धि भी मन की अनुगामी हो गयी है। आदर्श यह है कि मन को बुद्धि का अनुगामी होना चाहिए, क्योंकि गीता में अर्जुन कहता है :–

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।। (6/34)

अर्थात् मन तो बहुत चंचल है, इसलिए इसकी सांसारिक चाल भी सीधी नहीं हो सकती, अतः उसे बुद्धि से संचालित होना आवश्यक है।

सारे शास्त्र कहते हैं कि जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त करने के लिए भगवान के चरणों में प्रीति या प्रेम आवश्यक है, जो भक्ति मार्ग से पाया जा सकता है। भक्ति संतों के संग से मिलती है और संतों का संग भगवान की कृपा से प्राप्त होता है अर्थात् भक्ति भगवान की कृपा का ही परिणाम है, यथा :–

बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।। (1/3/7)

भगवान की अनुकम्पा प्राप्त करने के लिए करुण भाव से भगवान को पुकारते रहिये। भक्ति मिलेगी तो ज्ञान–वैराग्य स्वतः स्वभाव में सम्मिलित हो जायेंगे तथा तितिक्षा का भाव जाग्रत हो जाएगा। यह स्थिति मिलने पर भगवान के चरणों में रति अर्थात् भक्ति की ही उत्तरोत्तर वृद्धि होती जायेगी और जीवन राममय हो जाएगा। गोस्वामीजी को आपने मानस में देखा होगा वे बार–बार 'सठ मना' कहते हैं अर्थात मन पर विवेक रूपी हथौड़ा मारते रहते हैं, ताकि सत्संग की अविरल धारा में अपने दोषों के दिग्दर्शन से उनका निराकरण होता रहे अन्यथा तो बेकार का श्रम हो रहा है।

भक्त की जीवनचर्या में ये तीन बातें अवश्य होनी चाहिए–1. प्रतीक्षा, 2. परीक्षा, 3. समीक्षा। प्रभु हमारे जीवन में अवश्य आएँगे तथा कृपा करेंगे, ऐसी भावना के साथ प्रतीक्षा करें। देखिए शबरी को अपने गुरु मतंग का वचन याद था कि शबरी तुझे दर्शन देने भगवान राम तेरी कुटिया पर आएँगे और तेरा उद्धार करेंगे। शबरी ने जीवनभर प्रतीक्षा की और कालान्तर में प्रभु श्रीराम आए :–

सबरी देखि राम गृहँ आए। मुनि के बचन समुझि जियँ भाए।।
सरसिज लोचन बाहु बिसाला। जटा मुकुट सिर उर बनमाला।।
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। सबरी परी चरन लपटाई।। (3/34/6–8)

शबरी ने विश्वास के साथ प्रतीक्षा की और वास्तव में प्रभु पधारे। प्रभु ने शबरी को नवधा भक्ति सुनायी तथा उसके जीवन को कृतकृत्य कर दिया। इसी तरह सुतीक्ष्णजी भी भगवान की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे भी प्रभु को पा गए। इसी प्रकार कई ऋषि–मुनि भी प्रतीक्षा करते हुए दंडकारण्य में भगवान के दर्शन पा गए।

संसार में रहते हुए अपने दोषों की समीक्षा करते रहना चाहिए। हम करते उलटा हैं कि अपने गुणों को देखते हैं तथा दूसरे के दोषों को। इस संसार में सब अपने–अपने स्वार्थ में जी रहे हैं। अगर हम किसी की महत्वाकांक्षा में बाधा बनेंगे तो वही हमारे विरोध में खड़ा हो जाएगा, अतः संसार का प्रेम एक छलावा है, क्योंकि यह स्वार्थमय प्रेम है। गोस्वामीजी लिखते हैं :–

सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।। (4/12/2)

संसार को जितनी जल्दी समझ लें उतना ही अच्छा है ताकि प्रभु के मार्ग में जल्दी आगे बढ़ें और अपनी समीक्षा करते रहें। एक बात और भक्त के जीवन में होनी चाहिए वह है परीक्षा चाहे समीक्षा के बाद करे या उसके पहले। यह परीक्षा है अपने अंदर रह गए दुर्गुणों की तथा आए हुए सद्‌गुणों की, जिससे यह प्रदर्शित हो सके कि अध्यात्म–यात्रा में हम कुछ आगे बढ़े हैं या वहीं के वहीं हैं। इस हेतु रोज आत्मचिंतन करना आवश्यक है। श्रीरामचरितमानस में विश्वामित्र मुनि के साथ श्रीराम–लक्ष्मण की एक यात्रा होती है, भगवान श्रीराम एवं लक्ष्मणजी की इस यात्रा का अंतिम लक्ष्य तो भक्तिस्वरूपा सीताजी को प्राप्त करना है। भक्ति को प्राप्त करने के लिए जीवन में कई अवरोध पार करने पड़ते हैं। यह यात्रा उन्हीं अवरोधों को पार करने की दिशा बतलाती है तथा हम अपनी परीक्षा भी करते रहें कि उन अवरोधों को पार करने में सफल हो पा रहे हैं या नहीं। साथ ही साथ समीक्षा भी कीजिए कि अब हमें क्या करना चाहिए, ताकि हमारे अन्तःकरण में भक्तिभाव जाग्रत हो जाए।

अन्तःकरण के चार भेद होते हैं–मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार। जब चारों ही भक्ति को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध होंगे, तभी मनुष्य भक्तिस्वरूपा सीताजी को प्राप्त कर सकता है। विश्वामित्रजी के साथ जब भगवान उनके यज्ञ रक्षा के लिए चलते हैं, तब सबसे पहले ताड़का नाम की निशाचरी मिलती है जो भगवान की तरफ मुँह फैलाकर क्रोध में दौड़ती है। भगवान ने उसे :–

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा।। (1/209/6)

आध्यात्मिक रूप से विचार करें तो यह ताड़का आज भी सबके जीवन में है। हमें भी इसका निस्तारण करना होगा। यह ताड़का मन की दुराशा है। मन में जो दुराशा छिपी है वह कभी पूरी नहीं हो सकती, इसके दो पुत्र हैं– एक सुबाहु और दूसरा मारीच। ये

दोनों भी भगवान की तरफ ही दौड़ते हैं, पर दुराशा रूपी सुबाहु को प्रभु अग्निबाण से समाप्त कर देते हैं :–

पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु सँघारा।। (1/210/5)

मारीच जो भटके हुए मन का प्रतीक है, उसे प्रभु समाप्त नहीं करते, पर एक बिना फर वाला बाण मारते हैं, ताकि मरे तो नहीं, लेकिन इसकी दिशा परिवर्तन अवश्य हो जाए और वही हुआ, मारीच सात समुद्र पार चला गया और जब रावण उसे सीता–हरण के लिए साथ चलने को कहता है, तो वह कहता है कि तुम उनसे विरोध मत करो, क्योंकि एक बार उन्होंने मुझे जो बाण मारा, जानते हो क्या परिवर्तन हुआ है :–

भइ मम कीट भृंग की नाई। जहँ तहँ मैं देखउँ दो भाई।। (3/25/7)

मारीच का हृदय परिवर्तन तो यहाँ तक हो गया था कि रावण के साथ सीता–हरण के लिए चलने पर भी अन्तःकरण में यही विचार है :–

मम पाछें धर धावत धरें सरासन बान।
फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहउँ धन्य न मो सम आन।। (3/26)

कहने का अभिप्राय यह है कि मन जो भटक गया था प्रभु के एक बाण से भक्ति के रास्ते पर आ गया अर्थात् मन की समस्याओं को समझ कर उसे भक्ति के लिए आधार बना लेना है। दुराशा एक बाण में समाप्त हुई अर्थात् हमें समस्त आशाओं को प्रभु में ही केन्द्रित करके रखना है, तो वह दुराशा के स्थान पर पवित्र आशा में बदल जाएगी। आशा केवल भगवान राम से ही रखिए, तो वह पूरी भी हो जाएगी। मन का यह प्रथम परिवर्तन है कि संसार की आशाओं से हटाकर उसे भगवान में लगा लें और तब जीवन उत्सव बन जाएगा, जीवन संगीत बन जाएगा। यह चिंतन करना आवश्यक है कि कुछ छोड़ना पड़े तो छोड़ने की हिम्मत करना और कुछ पकड़ना पड़े तो पकड़ने की हिम्मत करना। यह अपनी सतत समीक्षा से ही संभव होगा और तभी इससे आगे का मार्ग प्रशस्त होगा।

दूसरी अन्तःकरण की ग्रंथि बुद्धि में है। भगवान राम जब रास्ते में आगे बढ़ते हैं, तब एक शिला देखते हैं एवं मुनि विश्वामित्रजी से पूछते हैं। विश्वामित्रजी परिचय कराते हैं कि यह गौतम मुनि की पत्नी अहिल्या है जो पत्थर रूप में पड़ी आपकी प्रतीक्षा कर रही है। आध्यात्मिक अर्थ में इसे देखें तो यह ''जड़ बुद्धि'' है। हम सबको भी अपनी बुद्धि का

परीक्षण करना है कि कहीं यह जड़ तो नहीं हो गई। जड़ का अर्थ है कि जब बुद्धि मान ले कि भोगों में ही परम सुख है। अपनी बुद्धि की पूरी कुशलता भोगों को प्राप्त करने में ही लगा दी जाये, तो यही बुद्धि की जड़ता है। भगवान के प्रति अनुराग में अनुरक्त होना ही बुद्धि की चेतनता है। साधारण बोल–चाल में बुद्धि को पत्थर की बता दिया जाता है, जब किसी की समझ में अच्छी बात नहीं आती है। **''सहस सिला तें अति जड़ मति भई है'' विनय पत्रिका पद सं0 181।**

मन से दुराशा दूर होने और बुद्धि चेतन होने के पश्चात् अन्तःकरण में अहंकार की अनुपस्थिति होना आवश्यक है, अन्यथा तो कोई भी भक्ति–मूलक बात ठहर ही नहीं सकती। अहंकार का विनाश तो ईश्वर स्वयं करता है। शिव धनुष को तोड़ना ही अहंकार का नष्ट होना है। इन सबके बाद चित्त इतना निर्मल हो जाता है कि परशुरामजी जैसे सात्विक अहंकारी का भी चित्त अर्थात् उनका वह विष्णुधनुष भगवान राम की ओर स्वयं खिंचा चला जाता है। इस प्रकार जब अन्तःकरण के चारों भाग अपने आप में पवित्र हो जाते हैं, तब हमारा हृदय सीतारामजी का निवास स्थल बन जाता है।

वास्तव में जीवन के बहुत से प्रश्नों से ऊब कर बहुत देर से यह बात समझ में आती है कि मानव–जीवन का उद्‌देश्य संसार से वैराग्य और भगवान के चरणों में निष्काम प्रीति का सतत संवर्धन है। आस्था चाहे किसी अवतार के प्रति रखी जाये। पर अन्य के प्रति द्वेष कभी नहीं रखना चाहिए। जिन–जिन भावों से हम स्वयं आहत होते हैं, उन्हें दूसरों के प्रति कभी भी प्रकटीकृत नहीं करना चाहिए। गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'कल्याण' के पूर्व सम्पादक नित्यलीला विलीन हनुमान प्रसाद पोद्‌दारजी ने इस संदर्भ में लिखा है :–

समझो तुम जिन–जिन बातों को अपने मन–हित के प्रतिकूल।
उन्हें न वरतो कभी किसी से समझो यही धर्म का मूल।।

उल्लेखनीय है कि उपदेश की अपेक्षा श्रेष्ठ आचरण स्वयं उपदेश बन जाता है।

सगुण–साकार भगवान के स्वरूप के प्रति समर्पण सरल है, पर निर्गुण–निराकार के प्रति बहुत कठिन है, अतः जीवन में संतुलन की आवश्यकता है। भगवान श्रीराम का आचरण इस बात का प्रमाण है। बहुत बड़ी उपलब्धि हो जाये तो अभिमान नहीं और बहुत प्रतिकूल परिस्थिति में कोई विचलन नहीं, अयोध्याकाण्ड के मंगलाचरण में लिखा है :–

"प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।

जब तक अन्तःकरण में जगन्नाथ नहीं विराजते, तब तक जगत हमारे भीतर गहरी पैठ किये रहता है और इन्द्रियाँ एवं विषय नचाते रहेंगे तथा जीवन में तनाव बना ही रहेगा।

शास्त्र कहते हैं कि सृष्टि के आदि में कुछ नहीं था, तब भी विश्व की उत्पत्ति आदि का कारण चेतन तत्व उपलब्ध था। यह चराचर उसी की रचना है। धर्म में तो हम दूसरों के लाभ से लाभान्वित होते हैं, पर अध्यात्म में स्वयं की अनुभूति होती है। श्रद्धा चाहे किसी के प्रति हो, पर जीवन श्रीराम जैसा होना चाहिए। यह श्रद्धा समर्पण को जन्म देती है और भक्ति का आविर्भाव होता है। भक्ति से विश्व के प्रति समत्व, जगत से वैराग्य एवं तात्विक ज्ञान की पुष्टि होती है तथा भगवान के चरणों में प्रेम उत्पन्न होता है। उसी से आत्म–कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है। गीता में भगवान श्रीकृष्णजी कहते हैं कि भक्त का लक्षण है कि उससे कोई जीव उद्वेग को प्राप्त नहीं होता तथा वह भी किसी जीव से उद्वेग को प्राप्त नहीं होता है :–

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। (12/15)

हम वाग्विलास में उलझ गए, तो कल्याण–पथ से विमुख हो जाएँगे, अतः सतत सावधान रहने की आवश्यकता है।

सारांश स्वरूप, जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त करने हेतु तीन सूत्र, (1) प्रतीक्षा भगवान की कृपा प्राप्त करने की (2) स्वयं की परीक्षा कि हम कितना आगे बढ़े हैं और (3) अपने सद्गुणों एवं दुर्गुणों की समीक्षा सदैव करते रहना आवश्यक है।

भगवद्विश्वास

संसार का कोई दुःख आता है तो उसे धैर्यपूर्वक सहन करने की आवश्यकता है। एक–न–एक दिन दुःख का अन्त होगा। भगवद्–इच्छा से सारी प्रकृति अनुकूल हो जाती है। भजनानन्दी के भजन में बाधा आती है, तो वह दृढ़ता से प्रभु की शरण ग्रहण करता है। प्रभु का दिया दुःख है। उसका आदर करना चाहिए। पाण्डवों के, द्रौपदी के दुःख को देखो, वैसे दुःख हम पर नहीं हैं। स्वयं श्रीरामजी के ऊपर, राजा नल के ऊपर कैसा दुःख पड़ा, उसे देखो और भगवान की कृपा का अनुभव करो। प्रभु सब संकट दूर करेंगे।

वर्णानामर्थसंघानां ...

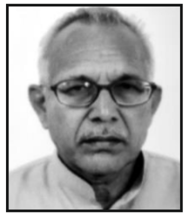

श्री जगदीशप्रसाद शर्मा, 'सरल' साहित्याचार्य, फोन–9311384212

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणी विनायकौ।। (मानस–1/मंगलाचरण 1)

अर्थात् वर्णों एवं अर्थ समूहों, रसों, छन्दों और मंगलों की करने वाली सरस्वती तथा गणेश की मैं (तुलसीदास) वन्दना करता हूँ।

यह श्लोक संतशिरोमणि रामभक्त लोकनायक कवि श्रीतुलसीदासजी द्वारा रचित महाकाव्य 'श्रीरामचरितमानस' के बालकांड के मंगलाचरण का प्रथम श्लोक है। ग्रंथारंभ से पूर्व ग्रंथ के प्रखर प्रचार के उद्देश्य से मंगलाचरण लिखने का विधान है। काव्य–जगत में यह परम्परा रही है कि कविगण अपने काव्य ग्रंथ की निर्विघ्न पूर्णता के लिए विघ्नहर्ता गणेश की और हृदय–झील में नव–नव सुंदर सरस भाव उमड़ाने वाली बुद्धिदायिनी सरस्वती देवी की वंदना करते आए हैं। इसी भारतीय परम्परा का निर्वाह किया है – संत कवि तुलसीदासजी ने।

यहाँ यह प्रश्न उठता है कि कवि किसे कहते हैं?

काव्य की रचना करने वाले को कवि कहते हैं। सबसे बड़े रचनाकार तो सृष्टिकर्ता ब्रह्मा हैं। ब्रह्माजी ने जगत की रचना की है और कवि ने काव्य–जगत की रचना की है, परन्तु इन दोनों की रचना में मूलभूत तीन अन्तर हैं – प्रथम अन्तर तो यह है कि ब्रह्माजी ने पंच तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) से जगत की रचना की है और कवि ने दो तत्वों (शब्द और अर्थ) से काव्य–जगत की रचना की है।

दूसरा अन्तर यह है कि ब्रह्माजी की रचना षड्रसमयी (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय, तिक्त) है, परन्तु कवि की रचना नवरसमयी (श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त रस) है। तीसरा अन्तर यह है कि ब्रह्माजी की रचना द्वन्द्वात्मक यानी सुख–दुखमयी है, परन्तु कवि की रचना केवल आनन्दमयी है। कवि द्वारा वर्णित

करुण रस का वर्णन सुनकर और अभिनय देखकर श्रोताओं और दर्शकों के अश्रु तो निकलते हैं, परन्तु वे दुःखाश्रु नहीं होते, आनन्दाश्रु होते हैं। इन्हीं विशेषताओं के कारण कवि की रचना ब्रह्मा की रचना से श्रेष्ठ है। **आनंद का विस्तार करने वाले को कवि कहते हैं।** जो सहज भाव से सत्य का वर्णन करता है, वही सच्चा कवि है।

वाल्मीकि, वेदव्यास जैसे कवि अपने काव्य–ग्रंथों से समाज को आनन्द प्रदान करने के साथ–साथ समाज और विश्व का मार्ग–दर्शन भी करते रहे हैं। ऐसे ही कवियों में भगवद्भक्त लोकनायक कवि संतशिरोमणि तुलसीदास की गणना की जाती है। हिन्दी काव्य–जगत में तो तुलसीदासजी दिनकर की भाँति देदीप्यमान हैं। वे अपने काव्यालोक से दिग्दिगन्त को आलोकित कर रहे हैं। भक्ति–काल के कवियों में तो वे बेजोड़ हैं। सच्चरित्र, सद्व्यवहार और कर्तव्य के ज्ञान का जितना विशाल भंडार तुलसीदासजी के साहित्य में मिलता है, उतना विश्व के किसी कवि के साहित्य में नहीं मिलता। सरल, सरस हिन्दी भाषा में लिखा उनका प्रौढ़ ग्रंथ श्रीरामचरितमानस तो हिन्दी–जगत में बेजोड़ है।

यहाँ पाठकों को यह जिज्ञासा होनी स्वाभाविक है कि हिन्दी–जगत में लोकनायक कवि तुलसीदासजी का श्रीरामचरितमानस बेजोड़ क्यों है?

श्रीरामचरितमानस मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के उच्च आदर्श एवं पावन चरित्रों का मानसरोवर है। मानव–जीवन के उच्चतम आदर्श, सच्चरित्र, सद्व्यवहार, आदर्श गृहस्थ धर्म, आदर्श सदाचार और लोक–व्यवहार का जितना प्रचार तुलसीदासजी के महाकाव्य श्रीरामचरितमानस से हुआ है, उतना विश्व–साहित्य के किसी अन्य ग्रंथ से नहीं हुआ। श्रीरामचरितमानस व्यवहार–ज्ञान का तो अद्भुत ग्रंथ है – गुरु–शिष्य, माता–पिता, पिता–पुत्र, पति–पत्नी, भाई–भाई, भाई–बहिन, स्वामी–सेवक, मित्र आदि संबंधों में पारस्परिक कर्तव्य, प्रेम और सद्व्यवहार की उच्च शिक्षा श्रीरामचरितमानस से ही मिलती है। श्रीरामचरितमानस तो संयम और शुभ कर्मों की भव्यातिभव्य पाठशाला है, जो मर्यादा, सच्चरित्र और लोक व्यवहार के सुंदर पाठ पढ़ा कर भगवान श्रीराम के चरणों में प्रेम कराती है, इसलिए हिन्दी–जगत में श्रीरामचरितमानस श्रेष्ठ और बेजोड़ है।

मानस की श्रेष्ठता का एक कारण यह भी है कि यह मानव–मानस का दर्पण है। इस भौतिकवादी युग में भी मानव–जाति का रामचरितमानस ही सम्बल बना हुआ है। अन्य पुस्तकों की अपेक्षा मानस की सर्वाधिक माँग बढ़ी है। यह लोगों का पथ–प्रदर्शन कर रहा है। विदेशों में बसे प्रवासी भारतीय श्रीरामचरितमानस से ही प्रेरणा लेकर वैदिक हिन्दू–धर्म

पर अपनी निष्ठा रखे हुए हैं। मारीशस, सूरिनाम, गयाना, सिंगापुर, वियतनाम, फिजी, स्विटजरलैंड, हालैंड आदि विदेशों में श्रीरामचरितमानस संगीत शैली में गाया जाता है। 65 देशों में रामलीला और 25 देशों में रामकथा होती है। विश्व की लगभग 629 भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। मानस सम्पूर्ण विश्व के लिए ज्ञान का प्रकाश–स्तम्भ है।

संतशिरोमणि लोकनायक कवि तुलसीदासजी की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उन्होंने मानव–जीवन के सभी पहलुओं पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। साथ ही सम्पूर्ण देश में विभिन्न समाजों, सम्प्रदायों, मतों और विद्वानों के बीच विषमताओं की खाइयों को समन्वय की बालू से पाटा है। तुलसीदासजी का श्रीरामचरितमानस समन्वय का स्रोत है। उसमें से समन्वय की धारा फूट कर समाज में फैली विषमता की लपटों को अपनी शीतलता से शान्त कर देती है–यही तुलसीदासजी की अद्वितीय विशेषता है। इसी विशेषता के कारण विद्वानों ने उन्हें लोकनायक कवि स्वीकार किया है।

अब मैं पुनः इस लेख के मुख्य विषय श्रीरामचरितमानस के बालकांड के मंगलाचरण के प्रथम श्लोक की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कराता हूँ– मानस के मंगलाचरण का यह प्रथम श्लोक मुझे बड़ा विचित्र लगता है। वैसे तो इसमें विद्यादायिनी भगवती सरस्वती और विघ्नहर्ता गणेश की वंदना की गयी है, परन्तु विचित्र इसलिए लगता है कि मंगलाचरण का यह श्लोक लीक से हट कर अपने आप में निराला है, क्योंकि इसमें सरस्वती और गणेश के जो विशेषण दिए हैं, वे अलग ही प्रकार के हैं। इसमें काव्य के अंग वर्ण, अर्थ, रस और छन्द शब्द विशेषण के रूप में प्रयोग किए गए हैं।

अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि इस मंगलाचरण में सरस्वती और गणेश को दिए गए विशेषण के रूप में काव्यांगों का ही प्रयोग क्यों किया गया है?

यह विचारणीय विषय है। उक्त मंगलाचरण में प्रयुक्त विशेषणों ने मेरे मन को अपनी ओर खींचा और साथ ही इस मंगलाचरण पर विचार करने के लिए मुझे प्रेरित किया। इस प्रश्न को लेकर मेरे मन में जो हलचल हुई और विचार करने पर मैं जिस निष्कर्ष पर पहुँचा, वह इस प्रकार है :–

जिन दिनों तुलसीदासजी का जन्म हुआ, उन दिनों संस्कृत भाषा का बोलवाला था और संस्कृत के विद्वानों की धाक थी। काव्य–जगत में **काव्य क्या है? काव्य का क्या प्रयोजन है?** इन प्रश्नों के उत्तर में संस्कृत साहित्य के विद्वानों द्वारा बड़े–बड़े लाक्षणिक

ग्रंथ लिखे गए, जैसे–आचार्य मम्मट का '**काव्य प्रकाश**', आचार्य विश्वनाथ का '**साहित्य दर्पण**', पंडितराज जगन्नाथ का '**रस गंगाधर**' आदि ग्रंथ विशेष कर उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों ने अपने–अपने ग्रंथ में काव्य की भिन्न–भिन्न परिभाषायें दी हैं तथा काव्य के प्रयोजन भी अलग–अलग बतलाए हैं।

आचार्य मम्मट ने अपने लाक्षणिक ग्रंथ काव्य प्रकाश में काव्य की परिभाषा इस प्रकार दी है :–

तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि।

(दोष रहित, गुणयुक्त और अलंकार सहित शब्दार्थ की समष्टि को काव्य कहते हैं। यदि कहीं अलंकार न भी हो तो काव्य की कोई हानि नहीं है अर्थात् अलंकारों का होना अनिवार्य नहीं है।)

रसात्मकं वाक्यं काव्यम्

– आचार्य विश्वनाथ

(रसानुभूति से युक्त वाक्य को काव्य कहते हैं।)

रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्दों को काव्य कहते हैं)

– पंडितराज जगन्नाथ

आचार्य मम्मट ने काव्य के प्रयोजन इस प्रकार बतलाए हैं :–

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परिनिवृत्तये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।

(काव्य से यश प्राप्ति, धन प्राप्ति, व्यवहार ज्ञान, अमंगलों का नाश, कान्तासम्मति और अलौकिक आनन्द की अनुभूति – ये काव्य के प्रयोजन हैं।)

ये तीनों आचार्य प्रतिभाशाली विद्वान थे। इन्होंने अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा का लोहा मनवाया है। ये सभी संस्कृत साहित्याकाश के चमकते सितारे हैं। इनके आलोक से साहित्याकाश आलोकित है। दूसरे शब्दों में कहूँ तो ये साहित्य–हिमालय के उन्नत उज्ज्वल शिखर हैं, अतः ये सभी आदरणीय और वंदनीय हैं।

विद्वद्वर तुलसीदासजी भी अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस का श्रीगणेश करने जा रहे थे। मेरे विचार से संभव है कि उनके मस्तिष्क में भी उक्त प्रश्न कौंधे हों। उन्होंने अपने महान ग्रंथ महाकाव्य श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में काव्य की परिभाषा और काव्य का प्रयोजन बतलाना आवश्यक समझा हो, क्योंकि तुलसीदासजी भी अपने समय के प्रतिभाशाली विद्वान थे, परन्तु वे भगवान श्रीराम के परमभक्त थे। पांडित्य का अभिमान तो उनमें लेशमात्र भी नहीं था, इसलिए उक्त प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर उन्होंने मंगलाचरण की आड़ में बड़े ही सरल और सहज ढंग से दिए हैं। उक्त प्रश्नों के उत्तर देने में उन्होंने सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया है अर्थात् प्रश्नों का उत्तर देने में उन्होंने काव्यांगों का विशेषण के रूप में प्रयोग किया है। दूसरे शब्दों में कहूँ तो मानस के प्रथम मंगलाचरण में मुझे जो काव्य की परिभाषा और काव्य का प्रयोजन ध्वनित हो रहे हैं, वे इस प्रकार हैं :–

रसयुक्त, छन्दोबद्ध शब्द और अर्थ के समूह को काव्य कहते हैं अर्थात् वर्ण, अर्थ, रस और छन्द का सही अर्थों में संयोजन ही काव्य है और मंगल (कल्याण) करना ही काव्य का उद्देश्य है। तुलसीदासजी की मान्यता है कि काव्य की आत्मा नव रसों की परिणति राम–रस में है।

संत तुलसीदासजी ने वेद–वेदांगों का विधिवत अध्ययन किया था। वे विद्वान तो थे ही, साथ ही उनका अनुभव भी गहन था। उनके गहन अनुभव का कारण था कि उनका जीवन–सुमन घोरतम कष्ट–कंटकों में खिला था। व्यथा और वेदना की पाठशाला में उन्होंने जीवन के जो पाठ सीखे थे, उनका उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा था, इसलिए उनका अनुभव गहन था। श्रीरामचरितमानस के मंगलाचरण के पहले श्लोक में ही उनके गहन अनुभव की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। इस श्लोक के लिखने के पीछे मुझे दो कारण दिखायी देते हैं – एक कारण तो यह है कि उक्त प्रश्नों का सहज, सरल, संक्षिप्त और सटीक उत्तर देकर साहित्य–जगत में उमड़े विवाद के तूफान को शान्त करना था। दूसरा कारण विद्वान साहित्यकारों के मतभेदों को दूर कर उनमें समन्वय करना था।

समाज हित के लिए सच्चे मन से किया गया प्रयास कभी निष्फल नहीं जाता। आखिरकार महात्मा तुलसीदासजी अपने उद्देश्य में सफल हुए। ऐसे प्रातः स्मरणीय लोकनायक संतशिरोमणि रामभक्त तुलसीदासजी के चरण–कमलों में 'सरल' का कोटि–कोटि नमन।

चलते रहने से ही सफलता है, रुका हुआ तो पानी भी बेकार हो जाता है।

रिपुसूदन पद कमल नमामी

पं. दिनेशचन्द्र शर्मा, समिति के अध्यक्ष

श्री शत्रुघ्नजी के विषय में प्रायः लोग यह प्रश्न करते हैं कि श्रीरामचरितमानस में इनका स्वतंत्र चरित्र कहीं नहीं दीखता और गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी इनके विषय में विशेष वर्णन नहीं किया। क्या इनके चरित्र के विषय में गोस्वामीजी की उपेक्षा दृष्टि है? अथवा शत्रुघ्नजी के चरित्र की ही न्यूनता है?

वास्तव में न तो गोस्वामीजी की इनके चरित्र के प्रति उपेक्षा दृष्टि है और न ही इनके परमोज्ज्वल चरित्र में कहीं पर तनिक भर भी न्यूनता ही है, अपितु गोस्वामीजी ने संक्षेप में इनके चरित्र की महत्ता अपेक्षित स्थान पर वर्णन की है और जहाँ पर मौन से प्रतीत हो रहे हैं, वहाँ पर मौन रहना ही एक अवर्णनातीत चरित्र की महत्ता को प्रकट करना है।

जैसे शरीर का आधार प्राण है, भवन का आधार नींव है, श्रीकृष्ण चरित्र एवं श्रीमद्भागवत की परमाधार श्रीराधाजी हैं, वैसे ही श्रीराम चरित्र का परमाधार श्रीशत्रुघ्नजी का चरित्र है। शत्रुघ्नजी के चरित्र का सांकेतिक रूप में संक्षिप्त वर्णन करना गोस्वामी तुलसीदासजी का काव्य–कौशल एवं शत्रुघ्न–चरित्र की महत्ता है :–

सेवा रूपी शत्रुहन, भरत भगति के रूप।
ज्ञान रूप रघुवंशमणि लखन विराग स्वरूप।।

श्रीराम सामान्य, लक्ष्मण विशेष, भरत विशेषतर एवं शत्रुघ्न विशेषतम धर्म के सूक्ष्म स्वरूप हैं। इसी कारण इनके विषय में कवि का मौन रहना ही अवर्णनातीत चरित्र की परम गौरव गरिमा को व्यक्त करता है।

बालकांड में गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस के सभी पात्रों की सूक्ष्म रूप से वंदना एवं महिमा गाई है। इस प्रसंग के माध्यम से ही 'मानस' के प्रत्येक पात्र की विशद व्याख्या की जा सकती है, क्योंकि यह समस्त पात्रों की पात्रता की सूची है। श्रीरामचरितमानस के वंदना प्रकरण में गोस्वामी तुलसीदासजी श्रीशत्रुघ्न की वंदना करते हुए कहते हैं :–

रिपुसूदन पद कमल नमामी। सूर सुसील भरत अनुगामी।। (1/17/9)

अर्थात् मैं उन श्रीशत्रुघ्नजी के चरण–कमलों में नमन करता हूँ जो सूर, सुशील एवं भरत अनुगामी हैं। शत्रुघ्नजी की यह संक्षिप्त वंदना, अल्प शब्दों में होते हुए भी अत्यधिक गंभीर अर्थ से परिपूर्ण है। शत्रुघ्न के रूप में इनका नामकरण अनोखा सा प्रतीत होता है। 'शत्रुघ्न' शब्द का अर्थ शत्रु को विनष्ट करने वाला है।

शत्रुघ्न नाम की सार्थकता यदि किन्हीं पात्रों से हो सकती थी तो वे पात्र थे श्रीराम, श्रीलक्ष्मण अथवा श्रीभरत। परन्तु यह अद्भुत व्यंग्य जान पड़ता है कि जिन श्रीशत्रुघ्न ने जीवन में कभी युद्ध नहीं किया (श्रीरामचरितमानस के अनुसार), उन्हें ही शत्रुघ्न नाम दिया गया। सबसे छोटे राजकुमार का शत्रुघ्न नाम रखते हुए गुरु वसिष्ठ ने इस नाम की व्याख्या इस प्रकार की है :–

जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा।। (1/197/8)

जिसके स्मरण मात्र से ही शत्रुओं का नाश हो जाता है, वे वेद–प्रकाशित श्रीशत्रुघ्न हैं। श्रीरामचरितमानस की दृष्टि में शत्रु केवल बाहर ही नहीं, अपितु व्यक्ति के अन्तःकरण में भी हैं, अतः सच्चा वीर वही है जो अन्तःकरण के शत्रुओं पर भी विजय प्राप्त कर लेता है। यद्यपि सभी आन्तरिक शत्रु बड़े प्रबल हैं, पर उनमें भी सर्वाधिक बलवान शत्रु अहंकार है। शत्रुघ्न ने इस महान शत्रु को सच्चे अर्थों में परास्त किया। अहंकार व्यक्ति को लोगों के समक्ष लाने के लिए उत्सुक रहता है, यानी अहंकारी व्यक्ति अपनी प्रशंसा का भूखा और आत्म–प्रदर्शन का इच्छुक होता है, परन्तु शत्रुघ्न ने कभी भी स्वयं को आगे लाने की चेष्टा ही नहीं की।

सूर, सुशील, भरत अनुगामी तीन विशेषणों द्वारा शत्रुघ्न चरित्र का वर्णन किया गया। श्रीशत्रुघ्नजी के इन विशेषणों के पूर्व उनके नाम द्वारा भी चरित्र का वर्णन किया गया, जो कि रिपुसूदन शब्द से अभिप्रेत है।

रिपुसूदनः ''शत्रुघ्नोः नित्य शत्रुघ्नोः'' वाल्मीकि रामायण में वर्णन है कि शत्रुघ्नजी वास्तव में षड् विकारों के विनाशक हैं। ये षड् विकार तो विज्ञान के धाम मुनियों के भी मनों को पलभर में क्षुब्ध कर देते हैं।

मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ क्षोभ। (3/38क)

संसार में प्राणी बाहरी शत्रुओं से तो बच सकता है, किन्तु भीतरी शत्रु काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सरादि से नहीं बच सकता। संत लोग तो– **"षट् बिकार जित अनघ अकामा" (3/45/7)** होने के लिए पूर्ण प्रयास करते हैं, फिर भी कभी–कभी इनका प्रभाव उन पर पड़ ही जाता है। इसी कारण से भरतजी ने शत्रुघ्न को सर्वदा साथ रखा कि इनके साथ रहने पर षड् विकार नष्ट होते रहेंगे, फिर किसी प्रकार के भय की बात नहीं रहेगी, क्योंकि साधु को तो सर्वप्रथम "षट् बिकार जित अनघ अकामा" होना ही आवश्यक है। शत्रुघ्नजी को साथ रखने के कारण भरत समस्त विकारों पर विजय प्राप्त करके परम साधु कहलाये। वास्तव में मंथरा साधारण शत्रु नहीं है, अपितु चक्रवर्ती महाराज दशरथ की सारी राजनीति इसकी छोटी सी नीति के सामने परास्त हो जाती है। कार्य भी इसने छोटा नहीं किया। अपितु 'घालेसि सब जग बारहबाटा' यथा :–

नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकइ केरि।
अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि।। (2/12)

अन्तर्दृष्टि से मंथरा अयोध्या की परम शत्रु है। इसका चरित्र खलनायिकाओं में बड़ा ही महत्वपूर्ण है।

सूरः अकेली मंथरा ने इतना बड़ा अनर्थ करा डाला। आज तो घर–घर में इस प्रकार की मंथरायें मिलेंगी, तब राष्ट्र का क्या होगा? इन मंथराओं ने देश का विनाश कर डाला है। श्रीराम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, कौसिल्या, सुमित्रा, कैकेई, दशरथजी, श्री वसिष्ठजी आदि सर्वगुण सम्पन्न लोगों के संग का भी प्रभाव इस मंथरा पर नहीं पड़ा, अपितु इसकी कुटिल नीति का प्रभाव सब पर पड़ा, तो क्या यह साधारण शत्रु थी?

श्रीशत्रुघ्न ने सोचा अभी इसकी नीति का श्रीगणेश मात्र ही है और इतना प्रभाव। कहीं आगे और भी भयंकर दुष्परिणाम न भोगना पड़े, अतः इसे दंड देकर ठीक कर देना चाहिए। यद्यपि श्रीलक्ष्मणजी भी इससे सावधान रहते थे, किन्तु राज्याभिषेक की तैयारी में व्यस्त रहने के कारण इसकी ओर से ध्यान हटने पर इसने अपना चमत्कार दिखा दिया।

दीन्ह लखन सिख अस मन मोरें। (2/13/7)

लक्ष्मणजी इसकी कुटिलता को समझ तो गये थे, किन्तु वन जाते समय दंड देने की इच्छा होने पर भी दंड नहीं दे पाए थे। उन (शेष) के शेष कार्य को विशेष रूप से शत्रुघ्नजी ने पूरा किया, क्योंकि लघु भाई तो उनके ही ठहरे :–

लखि रिस भरेउ लखन लघु भाई। (2/163/3)

तेहि अवसर कुबरी तहँ आई। बसन बिभूषन बिबिध बनाई।।
लखि रिस भरेउ लखन लघु भाई। बरत अनल घृत आहुति पाई।।
हुमगि लात तकि कूबर मारा। परि मुह भर महि करत पुकारा।।
कूबर टूटेउ फूट कपारू। दलित दसन मुख रुधिर प्रचारू।।
(2/163/2–5)

अन्तर्दृष्टि से अयोध्या की मूल शत्रु मंथरा को शत्रुघ्न ने दंड दिया, क्योंकि वह रामराज्य की बाधा थी। शत्रुघ्नजी मंथरा को यही सोचकर चित्रकूट भी नहीं ले गए कि यह वहाँ पर भी किसी प्रकार का अनर्थ न कर दे। साथ ही एक बात चित्रकूट न ले जाने में यह भी थी कि **"कूबर टूटेउ फूट कपारू"** हो जाने पर जाती भी कैसे?

भयउ पाखु दिन सजत समाजू। तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू।। (2/19/3)

मंथरा झूठ बोल रही है और अपने दंड विधानार्थ भी कह रही थी कि :–

जौं असत्य कछु कहब बनाई। तौ बिधि देइहि हमहि सजाई।। (2/19/5)

फोरै जोगु कपारु अभागा। (2/16/2)

जैसी बोली उसके अनुसार फल भी वैसा ही मिला। विधि अर्थात् ब्रह्मावतार श्री शत्रुसूदनजी ने दंड दिया। जिस मुख–कूबर–सिर के द्वारा उसने अनर्थ किया ब्रह्मा (रिपुसूदनजी) ने उन्हीं अंगों को समुचित दंड दिया। न्याय भी यही था, क्योंकि रिपुसूदन होने के साथ ही साथ वे सूर (वीर) भी तो हैं।

सुशीलः दूसरा विशेषण है 'सुशील'। वास्तव में शत्रुघ्न ऐसे सुशील हैं कि परिवार, पुरजन, प्रजाजन एवं गुरुजनों के सामने कभी बोले ही नहीं, क्योंकि इनके बोलने के दायित्व को इनके तीनों भाई विशेष कर समीपस्थ बन्धु श्रीभरत ही निभा लेते थे। अपने गुरुजनों की जो आज्ञा हुई उसका तुरन्त ही पालन किया। तर्क तो किया हीं नहीं, क्योंकि :–

गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।।
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू।।
(2/177/3–4)

वास्तव में इन सिद्धांतों को जीवन में शत्रुघ्नजी ने क्रियात्मक रूप में संसार के सामने करके दिखाया। यद्यपि लक्ष्मणजी भी काल कर्म वश विवश होकर आज्ञा पालन कर नहीं पाए, किन्तु शत्रुघ्नजी ने अपने दायित्व का पूर्ण सफलता के साथ निर्वाह किया। श्रीलक्ष्मणजी को प्रभु ने आज्ञा दी थी कि :–

सीता केरि करेहु रखवारी। बुधि बिबेक बल समय बिचारी।। (3/27/9)

फिर भी सीताजी की रक्षा न कर सके। सीता–हरण हो ही गया। परिणाम स्वरूप श्रीराम ने लक्ष्मण को आज्ञोल्लंघन का दोष लगा ही दिया :–

जनकसुता परिहरहु अकेली। आयहु तात बचन मम पेली।। (3/30/2)

किन्तु शत्रुघ्नजी को श्रीराम द्वारा आज्ञा दी गई कि :–

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू। सिय समीप राखे रिपुदवनू।। (2/243/1)

शत्रुघ्नजी ने पूर्ण रक्षा की, साथ ही साथ उन्हें सावधान भी नहीं करना पड़ा। वे सेवा में परम सावधान स्वयं ही हैं।

मौन का कारण: वास्तव में मौन से ही अजात शत्रुता होती है। जो बोलेगा नहीं, उसका कोई शत्रु होगा ही नहीं। **'बोल्यो और मरयो'** कहावत प्रसिद्ध ही है। संसार में सारे झगड़े की मूल जीभ ही है। इस पर नियंत्रण जिसने कर लिया उसे कहीं पर भी किसी प्रकार के राग द्वेषादि बन्धन में नहीं बाँध सकते। इसी कारण इस मर्म के मर्मज्ञ सन्त मौन व्रत धारण करते हैं, क्योंकि **'मौनं सर्वार्थ साधनम्'** यही शत्रुघ्नजी के जीवन का परम लक्ष्य था। मौन रहने का दूसरा कारण यह भी है कि शत्रुघ्न अर्थ हैं, श्रीराम मोक्ष, श्रीभरत धर्म और श्रीलक्ष्मण काम। तो अर्थ का बोलना अनर्थ कारक होता है। अर्थ के बोलने पर भाई, पिता, मित्र, पड़ौसी, राजा, चोर, डाकू सभी लोग द्वेष करने लगते हैं। जहाँ भी अर्थ बोला, वहीं अनर्थ होता देखा गया।

सभी भाइयों के परम लाड़ले वीर हैं न, इसीलिए सभी ने समस्त दायित्व को संभाल ही लिया था। इस कारण बड़े भाइयों के बीच में इनके बोलने की कोई आवश्यकता ही नहीं थी। केवल–**"आज्ञा सम न सुसाहिब सेवा"**, व्रत का ही सावधानी से पालन किया। यह तो इनकी सुशीलता का उज्ज्वल उदाहरण है, क्योंकि राम, लक्ष्मण, भरत क्रमशः मोक्ष, काम, धर्म रूप हैं। धर्मार्थ काम मोक्ष के मूल में अर्थ ही गुप्त रूप से कार्य करता है।

भरत अनुगामीः शत्रुघ्न भरतजी की सेवा काया की छाया की भाँति करते रहे। समस्त भरत चरित्र शत्रुघ्न चरित्र है, क्योंकि वे भरत अनुगामी जो ठहरे। जो अग्रगामी का चरित्र होगा, वही तो अनुगामी का होगा। भरतजी का सारा कार्य शत्रुघ्न करते रहे तो ये वस्तुतः प्रतिबिम्ब हैं। श्रीभरतजी बिम्ब हैं। जो बिम्ब का चरित्र है, वही प्रतिबिम्ब का होगा।

श्रीभरतजी तो राज्य से सर्वथा अनासक्त होकर नन्दिग्राम में साधनरत रहे :–

मागि मागि आयसु करत राज काज बहु भाँति। (2/325)

इस भाव को पूर्ण चरितार्थ तो इन्होंने ही किया है, क्योंकि यही कार्यवाहक राष्ट्रपति (राजा) 14 वर्ष के थे। प्रधान के सारे दायित्व को उपप्रधान ही निभाता है। सत्य तो यह है जैसे श्रीराम की यश–पताका का लक्ष्मणजी का यश दंड बना, उसी प्रकार श्रीभरत की यश–पताका का शत्रुघ्न का यश दंड न बनता तो फिर भरत पताका का पता कैसे चलता?

श्रीशत्रुघ्न चरित्र को समुचित रूप में समझने के लिए गोस्वामीजी के द्वारा इनकी महिमा वर्णन में – **सूर, सुशील, भरत अनुगामी तीनों विशेषणों का गंभीरता से अध्ययन, कवि के मन्तव्य के साथ करना चाहिए। गोस्वामीजी की दृष्टि से तीनों ही विशेषण परम साभिप्राय हैं।**

गीता में संसार को दुःखालय अशाश्वत कहा गया है। दुःखों का स्थान है, पर एक–सा रहने वाला नहीं है, बदलता ही रहता है। संसार से अलग हटकर संसार को समझा जा सकता है। भगवान के निकट रहकर उनमें मन लगाकर भगवान को समझा जा सकता है। कष्ट आता है प्रभु की याद दिलाने के लिए। जो भी कष्ट हमको मिल रहा है, वह हमारे कर्मों के फलस्वरूप ही मिल रहा है, दूसरा कोई हमको सुख–दुःख देने वाला नहीं है। अपना मन संसार में आसक्त होता है तो दुखद होता है, संसार से विरक्त हो जाये तो मन सुखों का दाता है।

लोग बुराई करें और आप दुःखी हो जायें, लोग तारीफ करें और आप सुखी हो जाएँ। समझो आपके सुख–दुख का स्विच लोगों के हाथ में है, कोशिश करें ये स्विच आपके हाथ में हो।

मानस में शिव–चरित्र

श्री सचिन शर्मा, होशियारपुर, सैक्टर–51, नोएडा, मो0–9310555665

'मानस' का पूरा नाम है – श्रीरामचरितमानस। 'श्रीरामचरितमानस' का अर्थ है – मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के परम पावन चरित्रों का मानसरोवर। स्वयं मानसकार ने श्रीरामचरितमानस को दिये मानसरोवर के रूपक में लिखा है :–

तेइ एहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारि। (1/36)

इस श्रीरामचरितमानस रूपी पवित्र और सुंदर सरोवर के चार घाट हैं। वे चार घाट कौन से हैं? श्रीरामचरितमानस में जो चार संवाद हैं, वे संवाद ही इस मानसरोवर के चार मनोहर घाट हैं। उन चार घाटों के नाम इस प्रकार हैं – शिव–पार्वती–संवाद, याज्ञवल्क्य–भरद्वाज–संवाद, काकभुशुंडि–गरुड़–संवाद और तुलसीदास–संत–संवाद। इस मानसरोवर की फलश्रुति में मानसकार ने आगे कहा है :–

सादर मज्जन पान किए तें। मिटहिं पाप परिताप हिए तें।। (1/43/6)

इस श्रीरामचरितमानस रूपी पावन मानसरोवर में स्नान करने से और इसका जल पीने से हृदय में रहने वाले सब पाप–ताप मिट जाते हैं। यहाँ इस श्रीरामचरितमानस में 'मज्जन' और इसका 'जल–पान' करने का तात्पर्य है – इस पावन श्रीरामचरितमानस महाकाव्य को भक्तिभाव से पढ़ना और इसके अनुसार आचरण करना।

मानस में मर्यादापुरुषोत्तम भगवान राम के पावन चरित्रों का विशद सरस वर्णन तो है ही, साथ ही इसमें शिव–चरित्र का भी वर्णन है, वह भी रामचरित्र से पहले।

अब यहाँ प्रश्न उठता है कि मानस में शिव–चरित्र क्यों?

इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व मेरे मन में एक और प्रश्न उठा–**शिव कौन हैं?**

अब पहले इसी प्रश्न का उत्तर देते हैं–हिन्दुओं के तेंतीस करोड़ देवताओं में तीन देवता मुख्य हैं। उन त्रिदेवों में ही शिव की गणना की जाती है। वे त्रिदेव हैं – ब्रह्मा, विष्णु और शिव। ब्रह्मा जगत की रचना करते हैं, विष्णु जगत का पालन करते हैं और शिव

जगत का संहार करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि शिव संहारक–शक्ति हैं यानी संहार के देवता हैं, परन्तु इस संहारक–शक्ति के दो रूप हैं – शिव और रुद्र। वे शिव रूप से लोकमंगल करते हैं और रुद्र रूप से लोक–संहार करते हैं।

अब पहले शिव के अलौकिक स्वरूप की एक झलक देखिए– भगवान शिव सदाशिव (सर्वोपरि सत्ता का नाम है सदाशिव), निर्गुण, निराकार, परब्रह्म हैं। वे एक, अखंड, अनन्त, अनादि, अव्यक्त, अजन्मा, अविनाशी, सर्वव्यापक, निरीह (इच्छारहित), तुरीय (तीनों गुणों से परे), मायारहित, मन–वाणी से परे, स्वयंज्योति और सच्चिदानंदमय हैं :–

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं। चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।।
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
(7 / 108 / रुद्राष्टक–1–3)

वही निर्गुण शिव जगत की उत्पत्ति के लिए सगुण हो जाते हैं। सदाशिव के सगुण रूप को ही भगवान शिव कहते हैं, अतः शिव निष्कल (निराकार) और सकल (साकार) दोनों हैं। शिवलिंग शिव के निराकार स्वरूप का प्रतीक है और उनका विग्रह (शिवमूर्ति) शिव के साकार स्वरूप का प्रतीक है। शिवभक्त शिव के दोनों स्वरूपों (लिंग और मूर्ति) की पूजा करते हैं।

भगवान शिव हिन्दुओं के प्राचीन देवता हैं। वे केवल पौराणिक देवता ही नहीं, अपितु पंचदेवों (गणेश, शिव, दुर्गा, सूर्य और विष्णु) में भी प्रधान देवता हैं। वही इस भव्य जगन्नाटक के निर्माता और नायक हैं। वही सम्पूर्ण विद्याओं और कलाओं के विधायक हैं। वे सदा लोकमंगल करने में तत्पर रहते हैं। जब–जब जगत पर संकट आते हैं, तब–तब वही संकटों को दूर करते हैं।

जब समुद्र–मंथन के समय समुद्र से निकले प्रथम रत्न के रूप में भयंकर हलाहल (विष) से संसार झुलस रहा था और सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ था, तब भगवान शिव ने ही उस विष को पीकर संसार की रक्षा की थी। जगत में व्याप्त विष को भी पीकर शिव जगत का मंगल करते हैं।

जब भगवान शिव की पहली पत्नी भगवती सती ने पिता प्रजापति दक्ष के द्वारा किए गए पति शिव के अपमान से व्यथित होकर अपना तन योगाग्नि में जला दिया था, तब योगीश्वर शिव सती के वियोग में हजारों वर्ष भटकते रहे और फिर वे चिरकाल के लिए

समाधिस्थ हो गए। जब तारकासुर के आतंक से देवगण आतंकित थे। वह असुर किसी के मारे नहीं मर रहा था, क्योंकि उसे यह वरदान प्राप्त था कि वह शिव–पुत्र के हाथों ही मारा जाएगा, तब देवकार्य के लिए भगवान शिव को समाधि से जगाना अत्यावश्यक था। देवताओं के विनय करने पर कामदेव ने वहाँ जाकर भगवान शिव की समाधि–भंग करने के लिए अपना प्रभाव फैलाया और वह काम के पंच बाणों से शिव की समाधि–भंग करने में सफल हुआ, परन्तु जैसे ही शिव–समाधि भंग हुई और उनकी दृष्टि कामदेव पर पड़ी, वैसे ही शिव की क्रोधाग्नि में कामदेव भस्म हो गया।

देवताओं के विनय करने पर आशुतोष शिव लोकमंगल के लिए पुनः पार्वती से विवाह कर लेते हैं और वे योगीश्वर कामारि विरागी फिर से अनुरागी बन जाते हैं। उनसे बढ़कर प्रेमी पति संसार में और कोई नहीं है। यद्यपि भगवान शिव का जीवन विषमताओं से भरा हुआ है, फिर भी उन जैसा आदर्श और किसी में नहीं है।

भगवान शिव इतने भोले हैं कि चुल्लू भर जल चढ़ाने से ही शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं, इसीलिए तो वे **आशुतोष** कहलाते हैं। रामेश्वर में शिवलिंग की प्राण–प्रतिष्ठा कर भगवान राम स्वयं अपने मुखारविन्द से कहते हैं :–

जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहि। सो सायुज्य मुक्ति नर पाइहि।। (6/3/2)

(जो मनुष्य रामेश्वर में प्रतिष्ठित शिवलिंग पर गंगाजल चढ़ाएगा, वह मनुष्य सायुज्य मुक्ति पाएगा।)

वेदों ने भगवान शिव को परमतत्व, अव्यक्त, स्वयंभू, शान्त, प्रपंचातीत, अजन्मा, सबका कारण, जगत का स्रष्टा–पालक–संहारक और ईश्वर के भी ईश्वर यानी महेश्वर कह कर उनका गुणगान किया है। भगवान शिव की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वे पक्षपात रहित निष्पक्ष देवता हैं। वे अवढरदानी हैं। स्वयं दिगम्बर रहते हैं, परंतु रंकों को इन्द्र बना देते हैं, इसी कारण सुर, असुर, यक्ष, मनुष्य आदि सभी प्राणी भक्ति भाव से भगवान शिव की आराधना करते हैं और भगवान शिव निष्पक्ष भाव से उन सबकी अभिलाषायें पूर्ण करते हैं, इसलिए वे **देवों के देव महादेव हैं।**

अब मैं लौटकर पुनः उसी मुख्य प्रश्न पर आता हूँ कि **श्रीरामचरितमानस में शिव–चरित्र क्यों?**

तुलसीदासजी के समय देश में बड़ी विषम परिस्थितियाँ थीं। प्रथम तो यह कि हमारा देश परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। यहाँ विदेशी आक्रान्ताओं का शासन था अर्थात् मुगलों का राज्य था। समूचा देश मुगलों के अत्याचारों से संत्रस्त था। हिन्दू–संस्कृति को समूल नष्ट करने का कुचक्र रचा जा रहा था और हमारे देशवासी गुलामी की बेड़ियों में जकड़े विवश थे। गुलामी की त्रासदी के अतिरिक्त हमारे देशवासियों (हिन्दुओं) में बहुत मतभेद थे। हिन्दू–समाज सम्प्रदायों और अखाड़ों में बँटा हुआ था। शैव–वैष्णवों में मतभेद और बढ़ते ही जा रहे थे।

शैव (शिव–भक्त) भगवान शिव को बड़ा मानते थे और वैष्णव (विष्णु–भक्त) भगवान विष्णु को बड़ा मानते थे। इसी बात को लेकर दोनों सम्प्रदायों में आए दिन टकराव होता रहता था। निराश लाचार दुखी जनता आकाश की ओर देख रही थी। देश की ऐसी विषम परिस्थिति के समय संत तुलसीदासजी का आविर्भाव हुआ। उन्होंने समाज में फैली विषमता की खाइयों को समन्वय की बालू से पाटने का बीड़ा उठाया। अपने इसी अभियान के अन्तर्गत संतशिरोमणि तुलसीदास ने शैव–वैष्णवों के मतभेद की खाई को पाटने के लिए भगवान शिव और भगवान विष्णु में समानता दिखलायी। शिव और विष्णु के अवतार राम में समानता की स्पष्ट झलक तुलसीकृत महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में सर्वत्र मिलती है। इसमें शिव और राम दोनों को जगदीश्वर, अन्तर्यामी, व्यापक ब्रह्म, कालभक्षक और दोनों के धामों को मोक्षदाता बतलाया है, उदाहरणार्थ :–

मानस में शिव–राम में समानता

क्रम संख्या	शिव	राम
1.	संकरु जगत बंद्य **जगदीसा**	रामाख्यं **जगदीश्वरं**
2.	हर **अन्तरजामी** सब जानी	रघुवर सब उर **अन्तरजामी**
3.	विभुं **व्यापकं ब्रह्म** वेदस्वरूपं	राम **ब्रह्म व्यापक** जग जाना
4.	करालं **महाकाल कालं** कृपालम्	भुवनेस्वर **कालहुँ कर काला**
5.	कांसी मरत **परम पद** लहहीं	अवध तजे तनु **नहिं संसारा**

इसी प्रकार भगवती पार्वती और भगवती सीता में समानता दिखलायी है। दोनों को ही जगदम्बा, आदिशक्ति, उद्भवादिकारिणी बतलाया है, जैसे :–

क्रम संख्या	पार्वती	सीता
1.	**जगदम्बा** तव सुता भवानी	**जगदम्बा** जानहु जिय सीता
2.	अजा **अनादि सक्ति** अबिनासिनि	**आदि सक्ति** जेहि जग उपजाया
3.	**जग संभव पालन लय कारिनि**	**उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं**

श्रीरामचरितमानस का दोनों सम्प्रदायों (शैव–वैष्णवों) पर गहरा प्रभाव पड़ा, फलस्वरूप इन दोनों सम्प्रदायों के मतभेद समाप्त हुए। अब मानस को शिवभक्त भी उतना ही महत्व देते हैं, जितना की विष्णुभक्त।

उक्त प्रमाणों से यह भली–भाँति प्रमाणित हो चुका है कि शिव और राम एक ही तत्व हैं। शिव के परम उपास्य राम और राम के परम उपास्य शिव हैं। एक ही तत्व दो रूप होकर लीलार्थ लोक में विचरण करता है अर्थात् जो राम हैं, वही शिव हैं। उपनिषद, शास्त्र और पुराणों के अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि शिव और राम अभिन्न हैं, परन्तु अभिन्न होने पर भी भक्तों को आनन्दित करने के लिए दोनों में उपास्य–उपासक भाव से लीला चलती रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि ये दोनों परस्पर स्वामी भी हैं, सखा भी हैं और सेवक भी हैं :–

सेवक स्वामि सखा सिय पी के। (1/15/4)

अब मानस में वर्णित शिव–चरित्र पर भी संक्षिप्त प्रकाश डालते हैं :–

महर्षि अगस्त्य से रामकथा सुनने और सत्संग करने से मानस में शिव–चरित्र प्रारंभ होता है। जब कुछ दिनों के बाद भगवती सती (भगवान शिव की पूर्व पत्नी) सहित भगवान शिव वहाँ से कैलास को लौट रहे थे, तब उन्हें दंडकवन में पत्नी–विरह–व्याकुल भगवान राम के दर्शन हुए। भगवान शिव ने अपने इष्टदेव श्रीराम को 'जय सच्चिदानंद' कहकर प्रणाम किया और उनके हृदय में आनंद का सागर उमड़ने लगा। शिव की यह दशा देखकर सती को भ्रम हो गया। वे मन ही मन सोचने लगीं, 'भगवान शिव ने एक राजपुत्र को भक्ति भाव से सच्चिदानंद कहकर प्रणाम क्यों किया? यदि राम सच्चिदानंद ब्रह्म हैं तो सर्वज्ञ ब्रह्म विरही मनुष्य की तरह रोता हुआ वन–वन क्यों भटकेगा? परन्तु भगवान शिव की वाणी भी असत्य नहीं हो सकती।'

भगवती सती के मन में राम के प्रति यह संदेह गहरे तक बैठ गया। सर्वज्ञ अन्तर्यामी शिव ने सती की मनोदशा ताड़कर समझाने का प्रयास भी किया, परन्तु सती को विश्वास नहीं हुआ, इसलिए वे भगवान राम की परीक्षा लेने गयीं, परन्तु उस दौरान वे बहुत बड़ी भूल कर बैठीं। वह भूल थी–भगवान राम की परीक्षा लेने के लिए सीता का रूप धारण करना। अपनी इस भूल का सती को बहुत बड़ा खामियाजा भोगना पड़ा। पहले तो पति द्वारा परित्याग किए जाने का दुख भोगा, वह भी दो–चार वर्ष नहीं, अपितु 87,000 वर्ष तक दुख भोगा। फिर पिता के यज्ञ में पति के मना करने पर भी हठपूर्वक जाने पर वहाँ पिता द्वारा अपना अनादर और अपने आराध्य पति भगवान शिव का अपमान सहन न कर पाने के कारण दक्ष–शुक्र–निर्मित शरीर को योगाग्नि में जलाकर अपनी जीवन–लीला ही समाप्त करनी पड़ी। प्राण–त्यागते समय उन्होंने अगले जन्म में शिव की पत्नी बनने की ही इच्छा की। प्रकृति के नियमान्तर्गत अपनी अन्तिम इच्छा के अनुसार उन्होंने पार्वती के रूप में अगला जन्म लिया और पुनः शिव को पाने के लिए घोर तप किया।

तपोरत पार्वती की कड़ी परीक्षा लेने के लिए शिव ने सप्तर्षियों को भेजा। उन्होंने पार्वती को डिगाने का भरसक प्रयास किया, किन्तु दृढ़संकल्पा पार्वती अपने लक्ष्य से डिगी नहीं और अन्ततोगत्वा भगवान शिव की पुनः पत्नी बनीं। विवाह के बाद पिता के घर से विदा होकर जब वे अपने पति के धाम कैलास आयीं, तब उन्होंने लोकमंगल के लिए अपने पूर्व जन्म में अधूरे रहे कार्य को पूर्ण करने के उद्देश्य से भगवान शिव के मन में रखे 'श्रीरामचरितमानस' को बाहर निकलवाने के लिए भगवान शिव से अनेक प्रश्न कर भगवान राम के पावन चरित्र सुनने की जिज्ञासा व्यक्त की। पार्वती के प्रश्नों के उत्तर में उनकी लोकमंगलमयी जिज्ञासा शान्त करने के लिए भगवान शिव ने पार्वती को स्वरचित सम्पूर्ण श्रीरामचरितमानस सुनाया।

श्रीरामचरित्र में शिवचरित्र लिखने का एक यह भी कारण है कि शिवतत्व को समझे बिना रामतत्व को समझा नहीं जा सकता, अतः रामतत्व को समझने के लिए शिवतत्व को समझना आवश्यक है। मानसकार ने मानस के प्रारंभ में ही इस भाव की ओर संकेत किया है :–

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्।। (1/मंगलाचरण)

श्रद्धा–विश्वास के स्वरूप पार्वती–शंकर के बिना सिद्धजन अपने हृदय में भगवान राम को नहीं देख सकते। इसी बात को संतशिरोमणि तुलसीदासजी ने भगवान श्रीराम के मुखारविन्द से भी कहलवाया है :–

संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि। (7/45)

भगवान शिव के भजन बिना मनुष्य मेरी (राम की) भक्ति नहीं पा सकता।

यही विचार कर तुलसीदासजी ने मानस में रामचरित्र लिखने से पूर्व शिवचरित्र लिखा है। अब सुधी पाठकों की समझ में यह बात भली–भाँति आ गयी होगी कि शिव–कृपा से भगवान राम की भक्ति प्राप्त करने और शैव–वैष्णवों के बीच पड़ी मतभेद की खाई को पाटने के उद्देश्य से ही समन्वयवादी संतशिरोमणि लोकनायक कवि तुलसीदासजी ने समन्वय के स्रोत श्रीरामचरितमानस में रामचरित्र लिखने से पूर्व शिवचरित्र लिखा है।

दुनिया की सबसे ताकतवर चीज कौन सी है ?

दुनिया की सबसे ताकतवर चीज है "लोहा" जो सबको काट डालता है।

लोहे से ताकतवर है "आग" जो लोहे को पिघला देती है।

आग से ताकतवर है "पानी" जो आग को बुझा देता है।

पानी से ताकतवर है "इंसान" जो उसे पी जाता है।

इंसान से भी ताकतवर है "मौत" जो उसे खा जाती है।

मौत से भी ताकतवर है "दुआ" जो मौत को भी टाल सकती है।

वक्त बीत जाये तो लोग भुला देते हैं, बेवजह लोग अपनों को भी रुला देते हैं।
जो दिया रात भर रोशनी देता है, सुबह होते ही लोग उसे भी बुझा देते हैं।।

बारिश की बूँदें भले ही छोटी हों, लेकिन उनका लगातार बरसना बड़ी नदियों का बहाव बन जाता है। इसी प्रकार हमारे छोटे–छोटे प्रयास भी जिन्दगी में बड़ा परिवर्तन ला सकते हैं।

श्रीरामचरितमानस : भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार

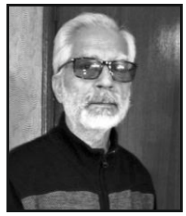

श्री देवेन्द्र शर्मा, गुरुग्राम, फोनः 9810199441
(समिति की स्मारिका के अंक 28 के पृष्ठ 102 से आगे)

यहाँ पर विचार करने योग्य तथ्य यह है कि प्रभु के **नाम–रूप–लीला–धाम** इन चारों का सुमिरन, ध्यान, श्रवण और चिन्तन जो हमारे मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के समस्त विकारों अथवा आध्यात्मिक शत्रुओं का हनन करके हमें प्रभु प्राप्ति कराने वाले हैं, ये सब परम कल्याणकारी पदार्थ हमें श्रीभगवान की कथाओं के श्रवण और पठन से प्राप्त हो जाते हैं, जबकि प्रभु के रूप, लीला और धाम के प्रत्यक्ष दर्शन की तो कल्पना करना भी एक असम्भव सा कार्य है। तो फिर ऐसी विषम स्थिति में हम जैसे दीन–जनों के पास दो ही साधन बचते हैं और वे हैं....**प्रभु के कल्पतरु समान नाम का विश्वासपूर्वक सुमिरन और प्रभु की पतितपावनी कथाओं का श्रद्धापूर्वक श्रवण**। विचारणीय है कि इन दोनों परम कल्याणकारी पदार्थों की प्राप्ति हेतु प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद श्रीगोस्वामीजी हमें श्रीरामचरितमानसरूपी पावन सरोवर में निरन्तर गोता लगाने का उपदेश करते हुए लिखते हैं कि–

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।।
भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।।
(1 / 10 / 1 तथा 1 / 28 / 1)

अर्थात् श्रीरामचरितमानस में गोता लगाने से हमें पतितपावन एवं कल्पतरु समान श्रीराम–नाम और इसकी अनन्त महिमा के ज्ञान–विज्ञान की उपलब्धि स्वतः ही हो जाएगी। जो भाव–कुभाव–अनख और आलस्य किसी प्रकार से जपने पर सदा मंगल (शुभ–फल) ही प्रदान करता है। ये अक्षरों के रूप में दिखाई देने वाला, लेकिन अनंत महिमा वाला श्रीराम–नाम भी ''बिधि हरि हर मय बेद प्रान सो'' (1 / 18 / 2), अर्थात् प्रभु श्रीराममय है और उन्हीं की भाँति उदार है–

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीनपर राम सरिस कोउ नाहीं।। (विनय–पत्रिका–162 / 1)

श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।। (1 / 32 / 2)

अर्थात् भव–बन्धन काटने वाली तथा प्रभु सन्मुख करने वाली इस श्रीरामचरितमानस में संसार के समस्त प्राणियों का मंगल करने वाले, प्रभु–भक्ति रूपी अक्षय धन प्रदान करने वाले, एक आदर्श जीवन के धर्म का उपदेश करने वाले, भव–सागर से मुक्ति प्रदान करने वाले और उससे भी ऊपर/अधिक परम आराध्य प्रभु श्रीराम का धाम प्रदान करने वाले, श्रीभगवान के गुणों (लीला कथाओं) का भण्डार है, जो पतितपावन दीनवत्सल प्रभु श्रीराम के नाम, रूप, लीला, धाम और प्रभु प्रतापमय है और इस तथ्य की पुष्टि करते हुए श्रीगोस्वामीजी लिखते हैं कि–

जदपि कबित रस एकउ नाहीं। राम प्रताप प्रगट एहि माहीं।। (1/10/7)

उपर्युक्त पंक्ति में श्रीगोस्वामीजी लिखते हैं कि आपके समक्ष ये जो श्रीरामचरितमानस है, हो सकता है कि इसमें हरेक पाठक की रुचि के अनुसार कविता का रस न हो, लेकिन इसमें एक विशेषता अवश्य है और वह यह है कि इसमें अनंतकोटि ब्रह्माण्डनायक, सर्वाधार, सर्वशक्तिमान, भक्तवत्सल और दीनानाथ मेरे प्रभु श्रीराम का प्रताप समाया हुआ है अर्थात् यह श्रीरामचरितमानस प्रभु श्रीराम के प्रबल प्रताप से ओत–प्रोत है। अब विचार करें कि प्रभु श्रीराम का प्रताप तो उनका स्वयं का प्रताप है। ये तो उनकी अपनी ऐश्वर्य सम्पत्ति है, तो इस प्रभु श्रीराम के प्रताप की हम संसारी जीवों के जीवन में क्या उपयोगिता है, तो इस परम कल्याणकारी प्रश्न का उत्तर हमें भक्त विभीषण के द्वारा मिलता है, यथा–

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना।।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा।।
ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी।।
तब लगि बसति जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं।।
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे।।

(5/47/1–5)

अर्थात् भक्त विभीषणजी प्रभु श्रीराम के प्रति निवेदन करते हैं कि हे प्रभो! इस दीन हीन के हृदय में ये सब दोष–दुर्गुण रूपी राक्षस/उल्लू तभी तक बसते हैं, जब तक कि जीव के हृदय में धनुष–बाणधारी स्वरूप में आपका वास नहीं हो जाता और साथ ही जीव के हृदय के समस्त अंधकार को नष्ट करने हेतु उसके हृदय में आपके प्रतापरूपी सूर्य का उदय नहीं हो जाता है। भक्त विभीषण आगे और भी निवेदन करते हैं कि हे प्रभु! आपके परम दुर्लभ दर्शन व शरणागति प्राप्त होने के बाद अब मैं सब प्रकार के भयों से मुक्त हो गया और मेरी सब प्रकार कुशल हो गयी है।

अपने जीवन को सार्थक बनाने की इच्छा रखने वाले जीव की अभिलाषा भी यही होती है कि उसकी सब प्रकार कुशल हो जाए। तो फिर विश्वासपूर्वक यह स्वीकार किया जा सकता है कि

सर्वशक्तिमान, भक्तवत्सल प्रभु जिस हेतु सत्ययुग, त्रेतायुग तथा द्वापर आदि युगों में अनेक रूप धारण करके अवतार लिया करते हैं, कलियुग में जीव का वह हेतु प्रभु श्रीराम के प्रताप से युक्त श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ से ही सध जाता है।

पूर्व में यह निवेदन किया जा चुका है कि गुरु, ग्रन्थों और सत्संग के माध्यम से हमें यह ज्ञान मिलता है कि–''भगत भूमि भूसुर सुरभि और सुर–संत'' के हित–हेतु, श्रीभगवान अवतार लेकर, धर्म को भ्रष्ट–नष्ट करने वाले रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद और इनके सहायक राक्षसों के भौतिक स्वरूप का तो नाश कर देते हैं, लेकिन प्रकृति के गुणों और/अथवा अविद्या–माया से उत्पन्न होने वाले तथा इसके वशीभूत रहने वाले–

ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटकु प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड।। (7/71 क)

अर्थात् भक्ति–ज्ञान–वैराग्य तीनों ही मार्गियों के आध्यात्मिक शत्रु–''कामादि भट दंभ कपट पाखंड'' स्वरूप राक्षसों का पूर्णरूप से नाश नहीं हो पाता, जिसका कारण भी एक ही बताया गया है कि–

कहहिं बेद इतिहास पुराना बिधि प्रपंचु गुन अवगुन साना।।
जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।।
(1/6/4 तथा 1/6)

निवेदन है कि प्रभु के अवतार काल में तो ये दोष–दुर्गुण रूपी राक्षस अपना पूरा प्रभाव नहीं दिखा पाते हैं, लेकिन प्रभु के परमधाम गमन के बाद ये राक्षस पुनः प्रबल हो जाते हैं और कलियुग में तो इन राक्षसों की प्रबलता अत्यधिक ही होती है और सभी प्रकार के मार्गियों को नाना प्रकार से पीड़ित करते हैं–

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ।। (3/38 क)

लेकिन जिस प्रकार प्रभु श्रीराम अपने अवतार काल में जीव को आश्वस्त करते हैं कि–

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।। (5/44/2)

उसी प्रकार से प्रभु श्रीराममय, उनके पतितपावन नाममय और ''सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना'' से युक्त श्रीरामचरितमानस भी हमें आश्वस्त करता है कि–

जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहि सुनिहहिं समुझि सचेता।।
मन करि बिषय अनल बन जरई। होइ सुखी जौं एहि सर परई।।
होइहहिं राम चरन अनुरागी। कलि मल रहित सुमंगल भागी।।

(1/15/10, 1/35/8 तथा 1/15/11)

अर्थात् प्रभु श्रीराम प्रतापमय इस पावन श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ में विराजमान प्रभु श्रीराम के ही विग्रह स्वरूप उनके पतितपावन "चरित" (अर्थात् उनकी पतितपावन लीला कथा) को स्नेह पूर्वक, सचेत होकर, भली प्रकार से समझकर कहेंगे और सुनेंगे तो यह प्रभु श्रीराम सम समर्थ, श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ, जीव/साधक के मन के समस्त विषय (दोष–दुर्गुण) रूपी वन को जलाकर भस्म कर देता है और विश्वासपूर्वक इसका **"दरस परस अरु मज्जन पाना"**, साधक/जीव को सब प्रकार के सुखों से सम्पन्न कर देगा अर्थात् **"सुखी होइ जौं एहि सर परई"** और आगे की अर्धालियों में जीव/साधक के मन–बुद्धि के जितने भी दोष–दुर्गुण रूप राक्षस कहे गए हैं, यथा–

निज संदेह मोह भ्रम हरनी। करउँ कथा भव सरिता तरनी।।
बुध बिश्राम सकल जन रंजनि। रामकथा कलि कलुष बिभंजनि।।
रामकथा कलि पंनग भरनी। पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी।।
रामकथा कलि कामद गाई। सुजन सजीवनि मूरि सुहाई।।
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि। भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि।।
असुर सेन सम नरक निकंदिनि। साधु बिबुध कुल हित गिरिनंदिनि।।
संत समाज पयोधि रमा सी। बिस्व भार भर अचल छमा सी।।
जम गन मुँह मसि जग जमुना सी। जीवन मुकुति हेतु जनु कासी।।
रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी। तुलसीदास हित हियँ हुलसी सी।।
सिवप्रिय मेकल सैल सुता सी। सकल सिद्धि सुख संपति रासी।।

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।।

रामचरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।।
जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।।
सदगुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के।।
जननि जनक सिय राम प्रेम के। बीज सकल ब्रत धरम नेम के।।
समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के।।
सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ उदधि अपार के।।

काम कोह कलमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के।।
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के।।
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।।
हरन मोह तम दिनकर कर से । सेवक सालि पाल जलधर से।।
अभिमत दानि देवतरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरि हर से।।
सुकबि सरद नभ मन उडगन से । रामभगत जन जीवन धन से।।
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधु लोग से।।
सेवक मन मानस मराल से । पावन गंग तरंग माल से।।

कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाषंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड।।

महामोहु महिषेसु बिसाला । रामकथा कालिका कराला।।

(1/31/4–14, 1/31, 1/32/1–14 तथा 1/47/6)

(विस्तार भय से श्रीमानस की उपर्युक्त पंक्तियों का शब्दशः अर्थ न लिखकर, यहाँ पर आगे केवल संकेत रूप में भाव ही लिखा गया है) यथा–

अर्थात् श्रीरामचरितमानस की उपर्युक्त पंक्तियों में जो क्रमवार–संदेह, मोह, भ्रम, कलि–कलुष, कलि–पन्नग (कलियुग रूपी सर्प), भय–भ्रम, यम गणों के मुख का दर्शन, भीमकाय–भव–रोग, पाप–संताप–शोक, भक्तों के मन को दूषित करने वाले काम और क्रोध, कलिमल (कलियुग के पाप) रूपी हाथी, विषय रूपी सर्प का विष, दुर्भाग्य (बुरा प्रारब्ध) आदि जो दोष, दुर्गुण और पाप बताए गए हैं, इन सबको जलाकर भस्म/नाश करने के लिए प्रभु श्रीराम प्रताप रूपी सूर्य के प्रकाश से प्रकाशवान, प्रभु श्रीराम समान श्रीरामचरितमानस में वर्णित श्रीराम गुन (अर्थात्–श्रीराम कथा) प्रचण्ड ईंधन के समान हैं। जिसके फलस्वरूप श्रीराम कथा विवेक युक्त जीव/साधक के मन को विश्राम (शान्ति), कामधेनु के समान मनोवांछित फल प्राप्ति का साधन, सुजनों के लिए संजीवनी, पृथ्वी पर अमृत सरिता, सुर–संतों का हित करने भगवती श्रीदुर्गा/श्रीपार्वती, जीव को मुक्ति प्रदान करने हेतु काशी समान, सद्गुन रूपी देवों की उत्पत्ति हेतु माँ अदिति के समान, प्रभु श्रीराम के प्रति प्रेम की सीमा, चिन्तामणि समान, संतों की सुबुद्धि रूपी युवती हेतु सौभाग्यप्रद सुन्दर श्रृंगार सामग्री, सभी श्रेणी के साधकों के लिए मुक्ति–धन–धरम–धाम की दानी, ज्ञानियों–वैरागियों–योगियों के लिए सद्गुरु समान, प्रभु श्रीराम के प्रति प्रेम उत्पन्न करने हेतु माता–पिता समान, लोक–परलोक की पालक, सुविचार (ज्ञान) रूपी राजा के चतुर मन्त्री, मनोवांछित फल प्रदान करने में कल्प वृक्ष समान, श्रद्धा से अनुपान करने पर श्रीहरि और श्रीहर के समान सुख देने वाली, प्रभु श्रीराम के भक्तों के तो जीवन (प्राण) समान, पाप धोने हेतु श्रीगंगाजी के समान (आदि–आदि) सिद्ध होगी और (मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला, अर्थात्)

महामोह रूपी विशाल महिषासुर के नाश हेतु ''निज संदेह मोह भ्रम हरनी''– प्रभु श्रीराम की यह श्रीरामचरितमानस रूपी पावन कथा विकराल रूप में भगवती श्रीकाली के समान है।

श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ की उपर्युक्त पंक्तियों में पूज्य श्रीगोस्वामीजी ने श्रीराम कथा के जो गुण, सामर्थ्य और उनके लाभ बताये हैं, वे इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि जिस प्रकार से श्रीभगवान–

तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

(1/21/8)

अर्थात् जिस प्रकार से श्रीभगवान विविध शरीर धारण करके, विप्र धेनु सुर संतों का कष्ट हरण करके उन्हें अनेक प्रकार के जो सुख (आनन्द) प्रदान करते हैं, वैसे ही सुख का और कष्टों तथा मन–बुद्धि के विकार रूपी राक्षसों से मुक्ति का लाभ, इस कलियुग में श्रीराम के ''ग्रन्थावतार श्रीरामचरितमानस'' के सेवन अर्थात् ''अनूपान श्रद्धा मति पूरी'' के द्वारा श्रीरामचरितमानस के ''दरस परस अरु मज्जन पाना'' के माध्यम से भी सुलभ हो सकता है, क्योंकि प्रभु के अवतार हेतु शरीर धारण करने की विविधता भी उन अनन्त प्रभु के समान ही असीम और अनन्त है।

अब विचारणीय है कि युगों–युगों में जो प्रयोजन श्रीभगवान के अवतार धारण से सिद्ध होता है, कलियुग में आध्यात्मिक स्तर पर यदि वही प्रयोजन श्रीरामचरितमानस से सिद्ध होता हो तो हमें श्रीरामचरितमानस को निश्चित रूप से इस कलियुग में प्रातः स्मरणीय पूज्य गोस्वामी तुलसीदासजी के माध्यम से प्रभु श्रीराम का ग्रन्थावतार ही मानना चाहिए, क्योंकि श्रीरामचरितमानस जैसे ''सनातन–ग्रन्थ'' ही सन्त तथा सत्संग का दूसरा स्वरूप होते हैं, जिनसे हमें विवेक युक्त ज्ञान–वैराग्य तथा पतितपावनी श्रीहरि कथाओं का आनन्द और प्रभु शरणागति प्रदायिनी भक्ति के साधनों का ज्ञान प्राप्त होता है और अन्ततोगत्वा जिनके माध्यम से हमारा–

बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि।। (7/120ख)

अर्थात्–''मद लोभ मोह रिपु मारि'' के फलस्वरूप ''जय पाइअ सो हरि भगत'' का परम कल्याणकारी प्रयोजन सिद्ध होता है। अब श्रीरामचरितमानस को कलियुग में प्रभु श्रीराम का ग्रन्थावतार मानने हेतु एक और बिन्दु पर विचार करते हैं और वह इस प्रकार है कि–

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।। (मंगलाचरण–1)

श्रीरामचरितमानस के उपर्युक्त प्रथम मंगलाचरण के सन्दर्भ में अब यदि कोई पूज्यपाद श्रीगोस्वामीजी से यह पूछे कि अपने श्रीरामचरितमानस का आरम्भ वर्णों, अर्थों, रसों और छन्दों

की वन्दना से ही क्यों किया, जिसमें कि उन्होंने वाणी की अधिष्ठात्री भगवती श्रीसरस्वतीजी और सकल मंगलमूल श्रीगणेशजी को भी श्रीरामचरितमानस के प्रथम मंगलाचरण श्लोक–1 में प्रयुक्त हुए शब्दों के क्रम के अन्त में रखा। तो इस वाणी और भाषा विज्ञान, जिसके बिना न तो कोई कुछ बोल सकता है, न लिख सकता है और न ही कोई एक–दूसरे की बात समझ–समझा सकता है, तो जीवन के सुचारु रूप से निर्वहन हेतु इस अति आवश्यक प्रश्न और विषय का कल्याणप्रद उत्तर हमें श्रीगीताजी में मिलता है। हमें श्रीगीताजी में श्रीभगवान के वचनों पर ध्यान ही नहीं, अपितु विश्वास भी करना होगा, जिसमें भगवान अपने प्रिय सखा अर्जुन के प्रति कहते हैं कि–

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।।
अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु।।
"गिरामस्म्येकमक्षरम्"। अर्थात्–गिराम्, अस्मि, एकम्, अक्षरम्।
"गायत्री छन्दसामहम्"। अर्थात्–गायत्री, छन्दसाम्, अहम्।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च।।

(गीता 7/7, 10/33, 7/8, 10/25, 10/35 तथा 9/17)

अर्थात् हे धनञ्जय! (इस संसार में) मुझसे भिन्न दूसरा कोई भी (किसी भी हेतु का) परम कारण नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत सूत्र में, सूत्र के मणियों के सदृश मुझ (एकमात्र सूत्र) में गुँथा हुआ है (7/7)। इसी क्रम में अब वाणी, भाषा, विज्ञान के विषय में श्रीभगवान आगे कहते हैं कि हे अर्जुन! मैं अक्षरों में अकार हूँ और (अक्षरों को जोड़ कर शब्दों की रचना हेतु अनेक) समासों में मैं द्वन्द्व नामक समास हूँ (10/35)। सम्पूर्ण वेदों में मैं 'ओं' कार हूँ और आकाश में शब्द भी मैं ही हूँ (7/8) और (वाणी और भाषा के आधार) शब्दों में (वेद रूप) एक परम अक्षर 'ओं' कार मैं ही हूँ (10/25)। शब्दों को जोड़कर जो वाक्य बनते हैं अथवा (उत्तम) कवित्त बनते हैं, उन सब छन्दों में मैं गायत्री छन्द हूँ (10/35)। श्रीभगवान आगे कहते हैं कि–हे अर्जुन! जानने योग्य पवित्र 'ओं' कार तथा ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ (9/17)।

अर्थात् श्रीगीताजी में श्रीभगवान द्वारा उपदेशित उपर्युक्त वचन इस बात का अकाट्य प्रमाण हैं कि चाहे कोई एक अकेला अक्षर हो, चाहे तो अक्षरों की सन्धि से सृजित शब्द हों या फिर शब्दों से सृजित वाक्य अथवा छन्द–बद्ध कोई कविता हो या फिर सर्वोपरि वेद–वाक्य हों, इन सभी में निःसन्देह श्रीभगवान का ही वास है और निश्चित ही इसी आधार पर हमारे विज्ञान–वैज्ञानिक ऋषि–मुनियों ने "शब्द" को भी "ब्रह्म के रूप में" परिभाषित किया है और यही एकमात्र कारण लगता है कि–**"नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्" श्रीरामचरितमानस** को आरम्भ से

ही प्रभु श्रीराममय बनाने के लिए ही पूज्यपाद श्रीगोस्वामीजी ने सर्वप्रथम ''शब्द ब्रह्म'' अर्थात् वर्णों के द्वारा ''शब्दों'' की रचयिता, भाषा के वर्णों, अर्थों, रसों और छन्दों की वन्दना की है और फिर जब प्रत्येक अक्षर में उन सर्व–व्यापक प्रभु का ही वास है तो फिर इस न्याय से भी सम्पूर्ण श्रीरामचरितमानस स्वतः ही प्रभु श्रीराममय मान्य हो गया।

इस लेखन सेवा के समापन में सभी श्रद्धालुओं के प्रति एक और विनम्र निवेदन करना चाहूँगा कि श्रीरामचरितमानस के उच्चकोटि के विद्वानों के मुखारविन्द से सुना है कि श्रीमानस की कुछेक ही पंक्तियों/अर्धालियों को छोड़कर श्रीरामचरितमानस की शेष सभी पंक्तियाँ/अर्धालियाँ, प्रभु श्रीसीताराम नाम के चारों वर्णों–'र', 'म', 'स' और 'त' से युक्त हैं तो फिर इस तथ्यात्मक न्याय से भी ''श्रीरामचरितमानस–ग्रन्थ'' की मान्यता–कलियुग में ''प्रभु श्रीराम के ग्रन्थावतार'' के रूप में निश्चित होती है।

पुनश्च यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि कलियुग में प्रभु श्रीराम का श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ रूपी यह ग्रन्थावतार प्रातः स्मरणीय प्रभु श्रीसीतारामजी के परम भक्त पूज्यस्वामी श्रीतुलसीदासजी के माध्यम से–

संबत सोरह सै एकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा।।
नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।

(1/34/4–5)

अर्थात् श्रीविक्रम संवत् 1631 चैत्र शुक्ल नवमी तिथि दिन मंगलवार को प्रभु श्रीराम के अवतार दिवस पर प्रभु के अवतार स्थल श्रीअयोध्या धाम में हुआ।

रामचरितमानस एहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा।
भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहुँ दृढ़ नावा।।

(1/35/7 तथा 7/53/3)

बंदउ तुलसी के चरन जिन्ह कीन्ह्यो जग काज।
कलि समुद्र बूढ़त लख्यो बिरच्यो सप्त जहाज।।
प्रभु श्रीराम के ग्रन्थावतार श्रीरामचरितमानस की जय।

आपके मन में यदि किसी एक के लिए भी बैर है।
तो मंदिर जाना आपके लिए सिर्फ एक सैर है।।

धर्म और नीति की पराकाष्ठा रानी मन्दोदरी

आचार्य डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, दतिया (म0प्र0), फोनः 9826249448

अनेक उदार एवं उदात्त सद्‌गुणों से समन्वित एवं भारतीय संस्कृति के विशिष्ट वैशिष्ट्य **'सत्यं शिवं सुन्दरम्'** का मूलाधार 'भारतीय नारी–समाज' अपने सेवाभाव, परोपकार, सहनशीलता, सह्रदयता, शील, शालीनता और सज्जनता से अपनी गुरु गरिमा से उपेत है, अतएव उसे ही यथार्थ में 'गृह' कहा गया है, यथा :–

'न गृहं गृहयित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते'। (पंचतंत्र 3/146)

सब कुछ सहनकर अद्‌भुत समर्पणयुक्त भारतीय नारी का प्रलाघ्य सद्‌स्वभाव होता है। यहाँ श्रीरामचरितमानस में वर्णित दानवराज रावण की रानी मन्दोदरी के अनुकरणीय आदर्श लोकहिताय दृष्टव्य हैं।

'मन्दोदरी' एक कुलीन परिवार से थीं। स्वर्ग में हेमा नाम की एक अप्सरा थी। उसे देवताओं ने दिति के पुत्र मय को गृहिणी के रूप में प्रदान किया था। यथोक्त है किः–

हेमा नामाप्सरास्तात श्रुतपूर्वा यदि त्वया।।

देवतौर्मय सा दत्ता पौलोमीव शतक्रतोः। (वाल्मीकि रामायण 7/12/6, 7)

एवं स कृत्वा दारान् वै लंकाया ईश्वरः प्रभुः।। (वाल्मीकि रामायण 7/12/22)

हेमा और मय दानव के संसर्ग से ही एक पुत्री का जन्म हुआ। उसका नाम मन्दोदरी विश्रुत हुआ। मयासुर ने अपनी उक्त पुत्री मन्दोदरी का विवाह दशग्रीव (रावण) से कर दिया। मंदोदरी के साथ दारपरिग्रह (विवाह) करके दानवराज रावण लंकापुरी में राज्य करने लगा।

रावण महर्षि पुलस्त्य का पौत्र और ऋषि विश्रवा का पुत्र था। यह भी उच्च कुल में ही जन्मा था, लेकिन अपने तप–बल से ब्रह्मा से अनेक वरदान और उपलब्धियाँ प्राप्त कर

रावण अहंकारी हो गया और लोक को आतंकित करने लगा, किंतु पत्नीधर्म निभाने में 'मन्दोदरी' परम दक्ष साध्वी, सुन्दरी, गुणी और भली महिला के रूप में श्रीरामचरितमानस में निरूपित है, यथा :–

मय तनुजा मंदोदरि नामा। परम सुंदरी नारि ललामा ।।
सोइ मयँ दीन्हि रावनहि आनी। होइहि जातुधानपति जानी ।।
हरषित भयउ नारि भलि पाई । पुनि दोउ लंघु बिआहेसि जाई ।।
(मानस 1/178/ 2–4)

इस कुलीन और भद्र महिला ने अपने पति के हित में नैतिकता का आश्रय लेकर अपनी कुलीनता और सुचरित्रता का परिचय दिया है। श्रीरामचरितमानस में मन्दोदरी के हर एक प्रसंग में उसके धर्म और नीति के परिपालन का परिचय मिलता है।

'मानस' के सुन्दरकाण्ड का एक प्रसंग है कि रावण अपनी रानी मन्दोदरी को साथ लेकर अशोक वाटिका में विराजमान सीताजी को समझाने के लिए जाता है। वह सीताजी से कहता है कि हे सीते! तुम मुझे पति रूप में अपना लो, तो मन्दोदरी आदि सभी रानियाँ तुम्हारी अनुचरी के रूप में सेवा करेंगी। उल्लेख है कि :–

तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा।।
बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा।।
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी।।
तव अनुचरीं करउँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा।। (5/9/2–5)

सीताजी द्वारा बुरी तरह तिरस्कृत होने पर जब रावण सीताजी को मारने के लिए उद्यत हुआ, तब उसकी रानी मन्दोदरी ने उसे नीति–वचनों से समझाया और अपने पति को अनुचित कार्य करने से रोका, यथोल्लेख है कि :–

सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझावा।। (5/10/7)

मन्दोदरी द्वारा उक्त धर्मनीति को अपनाया जाना उनका वह आदर्श है, जिसके अनुकरण से प्रत्येक महिला अपने स्वाभिमान से अपने शिर को उन्नत करने में सामर्थ्यवती होती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार मंदोदरी अपने पति को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने में अपनी परम कुशलता का परिचय देती हैं तथा पति पर और उसके परिवार पर कोई

विपत्ति आने न पाये, इसके लिए पति को सचेत करती रहती हैं। यथा निर्दिष्ट है कि श्रीहनुमानजी द्वारा जब लंका–दहन किया गया, तो लंका में हाहाकार मच गया। दूतों से जब यह दुर्घटना मन्दोदरी ने सुनी, तो वह व्याकुल हो उठी। उसने बड़ी विनम्रता से अपने पति रावण को समझाने का सुयत्न किया। मन्दोदरी ने उन्हें श्रीराम के अतुल प्रताप से भी परिचित कराया, यथोक्त है कि :–

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयउ कपि लंका।।
दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी।।
रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी।।
कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हियँ धरहू।।
समुझत जासु दूत कइ करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी।।
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु भलाई।।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।।
(5/36/1,4–8 एवं 10)

इस प्रसंग से मंदोदरी की विद्वत्ता, दूरदर्शिता, ज्ञान, विवेक, आत्मीयता पतिप्रेम आदि का तो परिचय मिलता ही है, साथ ही उनकी कल्याणकारी एवं लोकहितैषिणी विचारधारा का भी प्रत्यक्षीकरण होता है और यहाँ मन्दोदरी की राजनीतिक चिन्तन की दक्षता का भी परिज्ञान होता है। वह पति की नैतिक विचारधारा की उपेक्षा से बहुत चिन्तित भी है, यथाः–

मंदोदरी हृदयँ कर चिंता । भयउ कंत पर बिधि बिपरीता।। (5/37/6)

उपर्युक्त चौपाई से यह भी स्पष्ट होता है कि कर्म के साथ भाग्य की भी महत्ता रानी मन्दोदरी को मान्य थी, क्योंकि उसके बार–बार प्रबोधन पर भी रावण द्वारा उसकी उपेक्षा की जा रही थी। रानी मन्दोदरी का रावण को सजग करने का 'नीतिपूर्ण व्यवहार', राजनीति में दक्षता प्राप्त एक अच्छे मंत्री जैसा प्रत्यक्ष होता है। वस्तुतः एक परमगुणान्विता, सुशिक्षिता तथा बहुज्ञानोपेता नारी की 'सद्सीख' उसके पति के हित में श्रेष्ठ सहायिका सिद्ध होती है। पति को कल्याणप्रद सद् उपदेश प्रदानी के रूप में मन्दोदरी उक्त महानता को अपने अन्तस् में सँजोये हुए है तथा उसने **"कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे"** काव्य प्रकाश (मम्मट) (1–2) के निष्कर्ष पर अपने आपको सार्थक सिद्ध किया है।

महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी के 'श्रीरामचरितमानस' महाकाव्य के लंकाकाण्ड के प्रारम्भ में रानी मन्दोदरी अपने पति रावण को श्रीराम से युद्ध न करने के लिए पुनः आगाह करती है, जब श्रीराम सेतु–बन्धन कर सेना सहित समुद्र पार हुये। उसने श्रीराम द्वारा कौतुक में ही समुद्र–बन्धन की बात को सुना, तो पुनः अपने पति रावण को बड़ी ही आत्मीयता से, अत्यन्त विनम्रता से परम हितैषी के रूप में कान्ता या पत्नी के रूप में, राजनीतिज्ञा के रूप में और एक श्रेष्ठ मंत्री के रूप में जो ज्ञान दिया, वह अनूठा और अद्वितीय है, यथोल्लेख है कि :–

मंदोदरीं सुन्यो प्रभु आयो। कौतुकहीं पाथोधि बँधायो।।
कर गहि पतिहि भवन निज आनी। बोली परम मनोहर बानी।।
चरन नाइ सिरु अंचलु रोपा। सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा।।
नाथ बयरु कीजे ताही सों। बुधि बल सकिय जीति जाही सों।।
तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा। खलु खद्योत दिनकरहि जैसा।।
अतिबल मधु कैटभ जेहिं मारे । महाबीर दितिसुत संघारे ।।
जेहिं बलि बाँधि सहसभुज मारा। सोइ अवतरेउ हरन महि भारा।।
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जाकें हाथा।। (6/6/2–8)

रामहिं सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राज समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ।।
अस कहि नयन नीर भरि गहि पद कंपित गात।
नाथ भजहु रघुनाथहि अचल होइ अहिवात।। (6/6 तथा 6/7)

रानी मन्दोदरी की उपर्युक्त उक्तियाँ व्यक्तिगतहित, समाजहित, विश्वहित एवं लोक के सुचिन्तन को सहज ही अभिव्यक्त करती हैं। रानी मन्दोदरी का सहज–सरल स्वभाव, शील–सौष्ठव एवं उनकी शालीनता परम श्लाघनीय है। उनका निरहंकारिता में विश्वास है। वे अपने पति रावण के अहंकार को काल की प्रेरणा मानकर अहंकार की उपेक्षा करती हैं, यथा :–

मंदोदरीं हृदयँ अस जाना। काल बस्य उपजा अभिमाना।। (6/8/6)

वे अपने पति की अनैतिक आकांक्षा और जिद से बड़ी दुखी और चिन्तित हैं और पति के हित में दृढ़ संकल्पित हुईं। बार–बार अपने पति को उनकी जिद और अभिमान से मुक्ति के लिए प्रयत्न करती हैं। जब श्रीराम ने अपने एक ही बाण से मन्दोदरी के

श्रवण–ताटंक तथा रावण के छत्र और मुकुट धरती पर गिरा दिए, तब इस घटना को परम अपशकुन मानकर मन्दोदरी ने एक बार पुनः अपने पति राक्षसराज रावण को श्रीराम से वैर छोड़ने के लिए अत्यंत विनयपूर्वक आग्रह किया, यथा :–

मंदोदरी सोच उर बसेऊ। जब ते श्रवनपूर महि खसेऊ।।
सजल नयन कह जुग कर जोरी। सुनहु प्रानपति बिनती मोरी।।
कंत राम बिरोध परिहरहू। जानि मनुज जनि हठ मन धरहू।।

(6/14/6–8)

रानी मन्दोदरी में पृथ्वी जैसी क्षमा एवं सहनशीलता है। रावण के द्वारा उसकी बार–बार अवहेलना किये जाने पर भी वे अपना आपा नहीं खोती हैं। वे रावण की जिद को काल या समय की ही प्रतिकूलता स्वीकार करती हैं, यथा :–

मंदोदरि मन महुँ अस ठयऊ। पियहि काल बस मति भ्रम भयऊ।। (6/16क/8)

बालि के पुत्र अंगद के द्वारा अत्यधिक अपमानित हुये रावण को मंदोदरी एक बार पुनः राम से विरोध छोड़ देने की विनम्र सीख प्रदान करती हैं, यथा :–

साँझ जानि दसकंधर भवन गयउ बिलखाइ।
मंदोदरीं रावनहि बहुरि कहा समुझाइ।। (6/35ख)

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही । सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही।।
रामानुज लघु रेख खचाई। सोउ नहिं नाघेहु असि मनुसाई।।
पिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा। जाके दूत केर यह कामा।।
(6/36/1–3)

अब पति मृषा गाल जनि मारहु। मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु।। (6/36/7)

काल दंड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा।। (6/37/7)

दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु ।
कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु।। (6/37)

उपर्युक्त उल्लेख से स्पष्ट है कि रानी मन्दोदरी नीति और धर्म की अनुगामिनी थीं। वे पथ्य की अर्थात् परम हितकारी बात को कहती थीं। उनकी विचारधारा में स्वहित और परहित दोनों का समन्वित रूप सहज ही दृष्टव्य है। राजनीति के चार गुण–साम, दाम, दंड और भेद उनके चिन्तन में सार्थक रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। रानी मन्दोदरी का लोक–व्यवहार भी स्मरण के योग्य एवं परम आचरणीय है।

श्रीराम के द्वारा युद्ध में रावण का सिर काट दिया गया। मंदोदरी ने जब अपने पति का कटा हुआ सिर देखा, तो वे मूर्च्छित हो गईं और अपना उर ताड़ित कर नाना प्रकार से रुदन करने लगीं। उन्होंने इस दुःखद परिस्थिति को राम की विमुखता तथा काल का वैपरीत्य रूप ही माना, यथा :–

पति गति देखि ते करहिं पुकारा। छूटे कच नहिं बपुष सँभारा।।

उर ताड़ना करहिं बिधि नाना। रोवत करहिं प्रताप बखाना।। (6/104/3–4)

राम बिमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा।। (6/104/10)

काल बिबस पति कहा न माना। अग जग नाथु मनुज करि जाना।। (6/104/13)

निष्कर्ष यह है कि श्रीरामचरितमानस में मन्दोदरी एक महामनस्विनी श्रेष्ठ नारी के रूप में वर्णित हैं। वे पितृ–भक्त तो हैं ही, साथ ही महान शक्ति सम्पन्न पौरुषयुक्त श्रेष्ठ सन्तति उत्पन्न करने वाली महिमामण्डित महिला के रूप में भी समादृता हैं। अपने पति के प्रति उनकी पूर्णरूपेण निष्ठा है। अपने पति के कल्याण हेतु वह पति के लिए सुभग सन्मार्ग प्रशस्त कर अपने पातिव्रत का सुपरिचय भी देती हैं। अपने धर्म और नीति के सुचिन्तन तथा ज्ञान से मन्दोदरी एक परम श्रेष्ठ विदुषी के रूप में श्रीरामचरितमानस में वर्णित हैं। अपनी प्रज्ञा, विद्वत्ता, विनम्रता, शील, सौहार्द, शालीनता, सुन्दरता, स्वाभिमान तथा सत्य आदि सद्गुणों से मन्दोदरी परम आदर्श नारी के रूप में प्रत्यक्ष ही परिदृष्ट हैं। **वर्तमान युग में नारी समाज द्वारा मन्दोदरी के सद्गुण तथा कर्तव्यनिष्ठा पूर्ण सदाचरण अनुकरणीय एवं आचरणीय हैं।**

'उपलब्धि' और 'आलोचना' एक दूसरे के मित्र हैं।
'उपलब्धियाँ' बढ़ेंगी तो निश्चित ही आपकी आलोचना बढ़ेगी।।

मुसीबत सब पर आती है, कोई बिखर जाता है और कोई निखर जाता है।

हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी

डॉ. रामगोपाल तिवारी, ग्रा.–निवादा, जि.–बाँदा (उ.प्र.)

जड़–चेतन, व्यक्त–अव्यक्त, दृश्य–अदृश्य, देह–प्राण, क्षर–अक्षर का संयोग ही सृष्टि का सृजन और जीव का जीवन है। हमारे जीवन में जड़ तत्व निर्मित पंचभौतिक दृश्य शरीर का स्वस्थ एवं सबल रहना जितना महत्वपूर्ण है, उससे भी अधिक शरीर में अदृश्य प्राण संचारित होना भी अत्यावश्यक है। शरीर के रख–रखाव, सुख–सुविधा, सम्मान, सम्पत्ति, पद, प्रतिष्ठा, स्वास्थ्य, शक्ति प्राप्त करने के लिए जहाँ एक ओर हमारा कर्तव्य पुरुषार्थ कर्म ही प्रमुख साधन है, वहीं दूसरी ओर शरीर में चेतन आत्मा प्राणों के संचार के लिए किसी भी प्रकार का प्रयास पुरुषार्थ हमारे हाथ में नहीं है। इसी कारण ज्ञानी–अज्ञानी, पंडित–मूर्ख, राजा–रंक, धनी–निर्धन, निर्बल–सबल, संत–असंत, ऊँच–नीच, स्वस्थ–रोगी आदि सभी शरीरधारी अंत में शरीर को प्राणहीन होना (मृत्यु को) अपरिहार्य, निरुपाय मानकर चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं। हिरण्यकशिपु, तारकासुर, रावण, कंस आदि मृत्यु को टालने का असफल प्रयास करके ये सिद्ध कर चुके हैं कि शरीर से किया गया पुरुषार्थ तो हमारे वश में है, लेकिन शरीर में प्राण संचार तो केवल एक मात्र हरि कृपा से ही संचालित है। इस प्रकार हम इन दोनों सिद्धान्तों को मिलाकर सम्पूर्ण सृष्टि और जीवन के लिए एक ही वाक्य में यह बल पूर्वक कह सकते हैं कि अपनी शारीरिक बौद्धिक क्षमतानुसार कर्म पुरुषार्थ के साथ ईश्वर की कृपा अत्यन्तावश्यक है।

श्रीरामचरितमानस में प्रत्येक सिद्धान्त को किसी न किसी पात्र, प्रसंग और घटना के रूप में प्रयोग करके सरलता से समझने समझाने के लिए प्रबन्ध काव्य में प्रस्तुत किया गया है। पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज कहते हैं:–

बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी। बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी।। (1/206/2)

विश्वामित्रजी महामुनि हैं, ज्ञानी हैं। इतना ही नहीं पौराणिक घटनाओं के अनुसार उन्होंने एक बार महाराज त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग भेजकर यह सिद्ध कर दिया था कि ब्रह्माजी के पुत्र ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के असम्भव कहकर टाल दिये जाने वाले चामत्कारिक कार्य को भी मैं अपने विद्या, बल, पुरुषार्थ, तप से संभव करके प्रस्तुत कर सकता हूँ। महाराज

त्रिशंकु के स्वर्ग से गिरते समय विश्वामित्रजी ने एक अलग नए स्वर्ग की रचना करके अपने सृजनात्मक सामर्थ्य को भी सृष्टि में स्थापित कर दिया था। अनुज लक्ष्मण सहित राम को अपने यज्ञ रक्षार्थ ले जाते समय उन्होंने विद्यानिधि राम को विद्या देकर अपने बौद्धिक विद्या के अलौकिक भण्डार तथा रामजी को सम्पूर्ण दिव्यास्त्र देकर अद्वितीय शस्त्र बल शक्ति संग्रह से पुरुषार्थ की पराकाष्ठा को भी सिद्ध कर दिया था।

जैसे किसी भी युग में किसी युद्ध में कोई कैसा भी योद्धा या सैनिक युद्ध करेगा तो उसके शारीरिक धर्म में आवश्यक भूख–प्यास की पूर्ति के लिए भोजन–पानी आदि की व्यवस्था तो अत्यन्तावश्यक रूप से करनी ही पड़ती है। इस दृष्टि से विश्वामित्रजी की व्यवस्था का दायित्व सर्वाधिक गुरुतर हो जाता है, क्योंकि राम–लक्ष्मण कोई सामान्य सैनिक नहीं, बल्कि चक्रवर्ती नरेन्द्र महाराज दशरथ के प्राणप्रिय पुत्र हैं। तात्पर्य यह कि विश्वामित्रजी तो त्याग तपस्या का जीवन व्यतीत करने वाले हैं अब उनके पास राम–लक्ष्मण के लिए राजसी उत्तमोत्तम भोग पदार्थ उपलब्ध कराना एक कठिनतम व्यवस्था की चुनौती थी। इस समस्या के समाधान के लिए विश्वामित्रजी ने रामजी को ऐसी विद्या दे दी, जिससे रामजी की भूख–प्यास ही समाप्त हो गई। इस बात को बाह्य व्यवहार में समझने के साथ दार्शनिक, आध्यात्मिक, साधनात्मक दृष्टि से समझें तो ये कहें कि व्यक्ति सांसारिक भोग पदार्थ प्राप्त करने की भूख–प्यास तृप्त करने के लिए जन्म–जन्मान्तर लगा देता है, लेकिन आशा, तृष्णा, स्पृहा, इच्छा की भूख–प्यास कभी तृप्त नहीं होती। अब दैहिक दृष्टि से एक सामान्य बात है कि यदि किसी की भूख–प्यास बन्द हो जाये तो उसे शारीरिक क्षीणता, निर्बलता अवश्यमेव होगी ही। तो जब महर्षि विश्वामित्रजी की विद्या के प्रभाव से रामजी की भूख–प्यास बन्द हो गई तो अब प्रश्न उठता है कि भूख–प्यास न लगने से रामजी में भी शारीरिक बल की कमी हो गई क्या? तो गोस्वामीजी लिखते हैं कि विश्वामित्रजी की विद्या का यही तो चमत्कार है कि भूख–प्यास भी बन्द मतलब यज्ञरक्षक रामजी के भोजन–पानी की व्यवस्था का भार भी समाप्त और राम में 'अतुलित बल', शरीर में तेज, स्फूर्ति, प्रकाश, प्रभाव की वृद्धि भी हो गई। तत्पश्चात् रामजी को अपने आश्रम में लाकर जीवन में परम पुरुषार्थ से प्राप्त दिव्यातिदिव्य सभी अस्त्र–शस्त्र एवं उनके प्रयोग की पूरी युक्ति विधि सब रामजी को दी।

तब रिषि निज नाथहि जियँ चीन्ही। बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही।।
जाते लाग न छुधा पिपासा। अतुलित बल तनु तेज प्रकासा।।

आयुध सर्ब समर्पि कै प्रभु निज आश्रम आनि।
कंद मूल फल भोजन दीन्ह भगति हित जानि।।
(1/209/7–8 तथा 1/209)

तात्पर्य यह है कि जब हम अपने किये गये कर्म और पुरुषार्थ को भगवान को समर्पित कर देते हैं, तब प्रभु कृपा करके हमारे जीवन से दुर्गुण रूपी निशाचरों का विनाश कर देते हैं। **इसीलिए गोस्वामीजी रामजी से उनकी कृपा की याचना करके कहते हैं कि** विश्वामित्रजी की तरह मैं भी आपके चरणों के प्रेम प्राप्ति का यज्ञ करना चाहता हूँ, परन्तु कलि के दोष रूपी निशाचरों से भयभीत हूँ। सुग्रीव रूपी कर्म (पुरुषार्थ) बलशाली बालि से त्रस्त है जो आपकी कृपा के बिना नियंत्रित होना सम्भव नहीं है। इसीलिए आपकी कृपा की छत्र छाया में ही रहना चाहता हूँ :–

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिये।
मोको और ठौर न, सुटेक एक तेरिये।। 1।।

सहस सिलातें अति जड़ मति भई है।
कासों कहौं कौन गति पाहनहिं दई है।। 2।।

पद-राग-जाग चहौं कौसिक ज्यों कियो हौं।
कलि-मल खल देखि भारी भीति भियो हौं।। 3।।

करम -कपीस बालि–बली, त्रास–त्रस्यो हौं।
चाहत अनाथ–नाथ! तेरी बाँह बस्यो हौं।। 4।।

महा मोह–रावन बिभीषन ज्यों हयो हौं।
त्राहि, तुलसीस! त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं।।5।। (विनय पत्रिका 181)

जनकपुर में धनुष–यज्ञ के अवसर पर धनुष तोड़ने की प्रतियोगिता में श्री लक्ष्मणजी अपना यथार्थ पुरुषार्थ सामर्थ्य व्यक्त करते हुए कहते हैं कि मैं ब्रह्माण्ड को गेंद की तरह उछाल सकता हूँ, घड़े के समान सहज में ही फोड़ सकता हूँ, सुमेरु पर्वत को मूली की तरह तोड़ सकता हूँ, शिव धनुष पिनाक को कमल की मुलायम नाल की तरह तोड़–मरोड़ सकता हूँ और शिव धनुष को लेकर सैकड़ों योजन तक दौड़ सकता हूँ, इस शिव धनुष

को छत्रक दंड (कुकुरमुत्ते की डंडी) की तरह तोड़ सकता हूँ, परन्तु यह सब करने में (प्रभु रामजी) आपकी अनुमति अर्थात् आपकी कृपा अति आवश्यक है :–

जौं तुम्हारि अनुसासन पावौं। कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं।।
काचे घट जिमि डारौं फोरी। सकउँ मेरु मूलक जिमि तोरी।।
तव प्रताप महिमा भगवाना। को बापुरो पिनाक पुराना।।
नाथ जानि अस आयसु होऊ। कौतुकु करौं बिलोकिअ सोऊ।।
कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं। जोजन सत प्रमान लै धावौं।। (1/253/4–8)

तोरौं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ।
जौं न करौं प्रभु पद सपथ कर न धरौं धनु भाथ।। (1/253)

इसी प्रकार जब श्री भरतजी, रामजी के चरणों में समर्पण के उद्देश्य से चित्रकूट जा रहे थे, तब देवताओं को आशंका हुई कि भरतजी के प्रेम के संकोचवश रामजी चित्रकूट से अयोध्या लौट जाएँगे तो सब काम बिगड़ जाएगा। इसके उपाय में देवताओं ने बुद्धि की देवी सरस्वती से प्रार्थना की कि जब आपने एक बार मंथरा की मति में परिवर्तन करके राम को राजा बनने से बदलकर वनवासी बना दिया था तो अब पुनः भरतजी की मति परिवर्तन करके भरत का स्वभाव बदल दीजिए, जिससे भरत का रामजी के प्रति प्रेम कम हो जाए और भरतजी, रामजी को अयोध्या लौटने का प्रस्ताव न कर सकें। इसके उत्तर में देवी शारदा ने भी यही स्पष्ट किया कि मंथरा की बुद्धि का परिवर्तन रामजी की प्रेरणा–इच्छा से ही हुआ था। अब यदि रामजी की कृपा के बिना कुछ भी परिवर्तन का प्रयास किया जाएगा तो परिणामतः अपने प्रयास के विपरीत अपना ही भारी अहित हो जाएगा, यथा :–

तब किछु कीन्ह राम रुख जानी। अब कुचालि करि होइहि हानी।। (2/218/3)

चित्रकूट में गुरु वसिष्ठजी ने जब श्री भरतजी से पूछा कि रामजी से किस उद्देश्य से वार्ता की जाये, तो श्री भरतजी ने कहा कि गुरुजी आप तो इतने समर्थ हैं कि विधाता के लेख को भी रोक कर आप जो करना चाहते हैं वही होता है, लेकिन अब आप मुझसे ही समस्या का समाधान पूछ रहे हैं तो यह भी मेरा ही दुर्भाग्य ही है, क्योंकि अभी तक मैं निश्चिन्त था कि यदि विधाता भी वाम हो जाएगा तब भी मेरा अहित नहीं होगा, क्योंकि मेरी सुरक्षा के लिए ब्रह्मा की भी लेखनी बदल देने वाले समर्थ सद्गुरु मेरे सिर पर छत्रछाया किए हुए हैं, लेकिन आप जब मुझसे ही पूछने लगे तो यह मेरा दुर्भाग्य ही है।

तब वसिष्ठजी ने स्पष्ट किया कि रामजी की कृपा से ही मेरे सामर्थ्य की बात सत्य है, परन्तु हे भरत! रामजी की कृपा के विपरीत स्वप्न में भी किसी भी कार्य की सफलता सम्भव नहीं है:–

दलि दुख सजइ सकल कल्याना। अस असीस राउरि जगु जाना।।
सो गोसाइँ बिधि गति जेहिं छेंकी। सकइ को टारि टेक जो टेकी।।
(2/255/7–8)

बूझिअ मोहि उपाउ अब सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेहमय बचन गुरु उर उमगा अनुरागु।। (2/255)

तात बात फुरि राम कृपाहीं। राम बिमुख सिधि सपनेहुँ नाहीं।।
(2/256/1)

सेना सहित रामजी सागर पार करके लंका पहुँचना चाहते थे, जिसके लिए समुद्र ने स्वयं उपाय बताया कि नल–नील को एक ऋषि का आशीर्वाद प्राप्त है तो उनके स्पर्श से बड़े–बड़े पत्थर भी जल के ऊपर तैरते हैं, अतः उनके पुरुषार्थ से सागर में सेतु रचना का प्रयास तो हो सकता है, लेकिन पूर्ण सफलता तो आपकी कृपा से ही सम्भव है :–

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसिष पाई।।
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे।।
(5/60/1–2)

श्री लक्ष्मणजी के पुरुषार्थ–पराक्रम पर रामजी को बड़ा गर्व और विश्वास था। रामजी स्वयं सुग्रीवजी से कह रहे थे कि लक्ष्मण जगत के सम्पूर्ण निशाचरों का पलक झपकते संहार कर सकते हैं :–

जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते।। (5/44/7)

परन्तु मेघनाद से युद्ध करते हुए लक्ष्मणजी वीरघातिनी शक्ति के प्रहार से मूर्च्छित हो गये, जो बड़ी कठिनाई से पुनः चेतन स्थिति प्राप्त करते हैं। आशय यह है कि केवल अकेला पुरुषार्थ (लक्ष्मण) निशाचर (मेघनाद) का वध नहीं कर सकेगा, लेकिन मेघनाद के समक्ष अगले युद्ध में श्री लक्ष्मणजी (पुरुषार्थ) रामजी (की कृपा) के प्रताप का स्मरण करते हुए सर संधान करके अजेय मेघनाद को काल कवलित कर देते हैं :–

सुमिरि कोसलाधीस प्रतापा। सर संधान कीन्ह करि दापा।।
छाड़ा बान माझ उर लागा। मरती बार कपटु सब त्यागा।।
(6/76/15–16)

अतः लेख का सार यह है कि विश्वामित्रजी जब अपनी यज्ञ–रक्षा के लिए लक्ष्मण सहित रामजी को लिवा लाए, तब विश्वामित्रजी ने ही रामजी को विद्या, बल, तेज, स्फूर्ति, अस्त्र–शस्त्र आदि प्रदान किए। ऐसे में यह जिज्ञासा है कि विद्या, बल, तेज, स्फूर्ति, अस्त्र–शस्त्र आदि सब कुछ विश्वामित्रजी ने ही रामजी को समर्पित किए तो महर्षि विश्वामित्रजी स्वयं ही निशाचरों का संहार कर लेते, लेकिन उनके एक इस निर्णयात्मक महावाक्य ने सृष्टि का अत्यन्त अकाट्य सिद्धान्त स्पष्ट कर दिया कि मुझे पुरुषार्थ से सब कुछ प्राप्त है, इसलिए मैं अयोध्या में सैन्य, शस्त्र, बल, विद्या आदि की सहायता याचना के लिए नहीं गया था, बल्कि राम को माँगने गया था :–

असुर समूह सतावहिं मोही। मैं जाचन आयउँ नृप तोही।।
अनुज समेत देहु रघुनाथा। निसिचर बध मैं होब सनाथा।।(1/207/9–10)

महर्षि विश्वामित्रजी का तात्पर्य यह है कि पुरुषार्थ इतना करो कि सम्पूर्ण विद्या, बल, शक्ति, शस्त्र आदि सब आपकी मुट्ठी में हो जायें, **ये है पुरुषार्थ, लेकिन इसके बाद भी जब तक रामजी की कृपा नहीं होगी, तब तक दुर्गुण–निशाचरों का संहार नहीं होगा।** ईश्वर की कृपा के बिना जीव के माया का बन्धन नहीं कटेगा और जीव को लक्ष्य प्राप्त नहीं होगा, इसीलिए विश्वामित्रजी के मन में यह चिंता थी :–

गाधितनय मन चिंता ब्यापी। हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी।। (1/206/5)

नित्य संत के पास सत्संग–सभा में उपस्थित रहने से भक्त–भगवान की चर्चा सुनते–सुनते धीरे–धीरे मनका मैल दूर होगा। अपने जीवन में कोई सुधार प्रत्यक्ष न भी दिखायी पड़े तो भी सत्संग को व्यर्थ नहीं समझना चाहिए। अनजाने हमारा अज्ञान कम हो रहा है। आगे चलकर अनुभव होगा। सत्संग में रहते हैं तो उतनी देर कुसंग से तो बचते हैं। यह सबसे बड़ा लाभ है। सज्जन के साथ रहना, उससे प्रभु कथा का श्रवण करना, सुने हुए को याद रखना, उसका अभ्यास करके उसे अपने जीवन में उतारना चाहिए, तब मन–बुद्धि पर असर पड़ेगा।

ग्यानी मूढ़ न कोइ

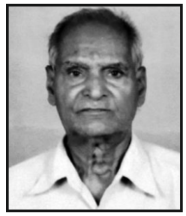

डॉ0 शंकर शरण तिवारी, झाँसी, फोन–9795127788

श्रीरामावतार के कुछ हेतुओं के विषय में भगवान् शंकर पार्वतीजी से कहते हैं :–

नारद श्राप दीन्ह एक बारा। कलप एक तेहि लगि अवतारा।। (1/124/5)

ऐसा सुनकर भगवती प्रश्नशील होती हैं :–

नारद बिष्णुभगत पुनि ग्यानी तथा कारन कवन श्राप मुनि दीन्हा।
का अपराध रमापति कीन्हा।। (1/124/6–7)

इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए भगवान् आशुतोष कहते हैं–

बोले बिहसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ।। (1/124)

ऊपर से देखने पर यह सूक्ति सत्य नहीं प्रतीत होती, क्योंकि व्यावहारिक– सामाजिक जीवन में ज्ञानी और मूढ़ दोनों की ही स्थिति भिन्न है। उदाहरणार्थ–भगवान वासुदेव का उद्घोष हैः–

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।। (गीता 7/17)

अर्थात् अनन्य प्रेमा भक्तियुक्त ज्ञानी मुझे प्रिय है। इसी प्रकार 'मूढ़' व्यक्ति की विशेषता बताते हुए उनका कथन है :–

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्।। (गीता 9/11)

अर्थात् मूढ़ लोग ईश्वर को तुच्छ समझकर उनका अपमान करते हैं। मूढ़ व्यक्ति वह है जो ईश्वर के परम स्वरूप को नहीं जानता और उन्हें सामान्य मानव समझकर उनका

निरादर करता है। इस प्रकार ज्ञानी और मूढ़ दोनों की स्थिति लोकजीवन में है और वे अपनी–अपनी आस्था के अनुसार प्रेय या श्रेय की उपलब्धि करते हैं। ज्ञानी प्रभु के साथ सायुज्य स्थापित कर लेता है तो मूढ़ बेचारा अपने अज्ञान या मोह के परिणामस्वरूप मूढ़योनियों (कीट, पतंग, पशु आदि) में विचरण करता रहता है :–

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसंगिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते।। (गीता 14/15)

इस प्रकार का सिद्धान्त वस्तुतः कर्म का अटल सिद्धान्त है। ज्ञानी का कर्म निष्काम–भाव से युक्त होता है, जबकि मूढ़ का कर्म मोह या तमोगुण का परिणाम होता है। ज्ञानी हजारों–लाखों में एक होता है, जबकि मूढ़ बहुसंख्यक होते हैं। ज्ञानी प्रभु की आत्मा होता है, पर मूढ़ उनका शरीर भी नहीं बन पाता।

अब भगवान् भूतभावन की उक्ति पर विचार करना उचित होगा। उनका कथन विशेषतः नारदजी के संदर्भ में है। वे नारद जिनके भक्ति युक्त ज्ञान के समक्ष कामदेव पराजित हो चुका था, परन्तु इस प्रकार की विजय से नारद के मन में उस समय अहंकार–सदृश दुःखद मनोवृत्ति नहीं उत्पन्न हुई। कामदेव अवश्य भयभीत हो गया कि कहीं ईश्वर के परम भक्त नारद उसे शापित न कर दें :–

काम कला कछु मुनिहि न ब्यापी। निज भयँ डरेउ मनोभव पापी।। (1/126/7)

परन्तु नारदजी ने **"वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।"** (गीता 7/19) के अनुसार कामदेव का प्रिय वचनों से सम्मान किया। ईश्वरेच्छावश यह स्थिति स्थायी नहीं रह सकी। उनके हृदय में काम–विजयजन्य गर्व उत्पन्न हुआ, जिसका विज्ञापन देवराज इन्द्र तथा भगवान् शंकर के प्रति कर भी दिया। भूतभावन की वर्जना के पश्चात् भी नारदजी ने यथावत् आत्म–श्लाघा का प्रकाशन भगवान् विष्णु के प्रति भी कर दिया। देवर्षि को सन्मार्ग पर अधिष्ठित करने के लिए प्रभु ने विश्वमोहिनी की लीला योजना की और उससे विवाह न कर पाने की स्थिति में नारद ने प्रभु को शाप दे दिया। यह नारद–मोह प्रसंग का अपर पक्ष था। इससे पूर्व कामदेव की दुष्चेष्टा के पश्चात् भी नारदजी शान्तभाव में ही स्थित रहे। यह अवस्था उस साधक की है जो ज्ञान–प्राप्ति की दिशा में अग्रसर होता है। प्रमाण अवलोकनीय है :–

प्रशान्त चित्ताय जितेन्द्रिभाय प्रहीण दोषाय यथोक्तकारिणे।
...प्रदेयमेतद्सततं मुमुक्षुवे।। (वेदान्तसार 26)

संस्कृत के एक कवि ने ऐसे शान्तभाव को प्राप्त जीवनमुक्त महापुरुष के स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया है :–

अहौ वा हारे वा कुसुमशयने का दृषदि वा।
मजौ वा लोष्ठे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा।।
तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशो यान्ति दिवसाः।
क्वचित् पुण्यारण्ये शिव शिवेति प्रलपतः।। (काव्य प्रकाश श्लोक 44)

इस पद्य में जिस ज्ञानी पुरुष का चित्रण है वह साँप और मुक्ताहार, फूलों की सेज तथा प्रस्तर–शिला, मणि और ढेले, बलवान् शत्रु तथा मित्र आदि में समबुद्धि रखता है। यही कारण है कि मुनिवर नारदजी ज्ञान–विरोधी मनोविकार से अछूते रह सके, पर इसके अनन्तर उनके हृदय में जो अहंकार उत्पन्न होता है, वह उन्हें मूढ़ की कोटि में स्थित कर देता हैः–

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।। (गीता 3/27)

मुनि का यह अहंकार वस्तुतः मोहरूप ही है। इसके पश्चात् तो वे अपनी मूढ़ता के अनेक प्रमाण प्रस्तुत करते चले गये और दुलहिन रूप विश्वमोहिनी भगवान् विष्णु के आश्रय को प्राप्त हो गयी और तब वे अत्यंत क्रोधित हो गए। काम–क्रोध–लोभ सभी दुर्गुण एक के पीछे एक चलते रहते हैं। यही नारदजी के साथ हुआ।

नारदजी के ऐसे अन्तर्विरोध से युक्त क्रियाकलापों की आलोचना न करते हुए उन्हें ज्ञानी और भक्त प्रमाणित कर देना भगवान् भूतभावन को उचित प्रतीत नहीं हुआ, क्योंकि ऐसा घोषित करना अवतारवाद के सिद्धान्तों का विरोधी था, अतः उन्होंने अपना विशिष्ट निष्कर्ष दे दिया– **''ग्यानी मूढ़ न कोइ।''** शुद्ध रूप में निःसंदेह भगवती पार्वती का उक्त कथन सत्य है– अर्थात् नारदजी विष्णु–भक्त और ज्ञानी हैं, पर उन्हें अहंकार से मुक्त करने के उद्देश्य से प्रभु की 'इच्छा' का आरोपण होने पर वे न तो ज्ञानी रह पाते हैं और न भक्त।

मानस के अन्य पात्रों के ऊपर भी प्रभु का यह आरोपण देखा जा सकता है :–

(1) नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकइ केरि।
अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि।। (2/12)

(2) तुम्ह गलानि जियँ जनि करहु समुझि मातु करतूति।
तात कैकइहि दोसु नहिं गई गिरा मति धूति।। (2/206)

(3) हरि इच्छा भावी बलवाना। हृदयँ बिचारत संभु सुजाना।। (1/56/6)

(4) जेहिं बिधि मोहि दुख दुसह सहाए। लछिमन कहुँ कटु बचन कहाए।। (6/99/8)

(5) सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूषन। उर प्रेरक रघुबंस बिभूषन।। (7/113क/1)

इन उद्धरणों में रेखांकित शब्द **'हरि इच्छा'** के ही बोधक हैं।

मानस के अंतर्गत कैकयदेश के राजा प्रतापभानु की कथा उपर्युक्त प्रसंगों से नितान्त भिन्न है, जहाँ सांसारिक जीवन जीने वाले एक राजा को प्रभु अपनी लीला सम्पादन के लिए रावण के रूप में अवतरित करते हैं। यह चयन भी प्रभु के नियम के अन्तर्गत है :–

**नाथयात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
चमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्।। (कठोपनिषद् 2/23)**

उक्त आख्या से यह सिद्ध होता है कि प्राकृत जनों के संदर्भ में भी भगवान् शंकर का प्रासंगिक उद्घोष सत्य है। राजजनोचित धर्म का निर्वाह करने वाला प्रतापभानु भी उक्त विधान के समक्ष अभिभूत, विवश या आकृष्ट हो जाता है। गोस्वामीजी ने इस विधान का अपर नाम 'भवतव्यता' दिया है, जो सारगर्भित है :–

**तुलसी जसि भवतब्यता तैसी मिलइ सहाइ।
आपुनु आवइ ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ।। (1/159ख)**

'भवतव्यता' का पर्याय 'प्रारब्ध' नहीं हो सकता, क्योंकि प्रारब्ध पूर्वकृत शुभाशुभ कर्मों का अवश्यं–भावी परिणाम होता है, पर यह 'ईश्वरेच्छा' से भिन्न अन्य कुछ नहीं है। इसी 'भवतव्यता' के परिणामस्वरूप निष्काम भाव को प्राप्त प्रतापभानु पुनः लोकैषणा में लौटने की इच्छा करने लगा जो राजसी और दुःख मूलक था। इसी स्थिति को तुलसी 'मूढ़ता' कहते हैं:–

तुलसी देखि सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।

सुंदर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन अहि।। (1/161ख)

रावण के रूप में अवतरित होने के लिए यह अपरिहार्य हो गया था कि संवत मध्य प्रतापभानु या सत्यकेतु के कुल का नाश हो जाये और वैसा ही हुआ। रावण के रूप में अवतरित होने पर उसका मोक्षमार्ग प्रशस्त हो गया। इस प्रकार यहाँ भी सिद्ध हो जाता है कि प्रतापभानु का ज्ञान स्थिर नहीं रह पाया और वह 'प्रबल भावी' के अधीन होकर ऐसा कर बैठा जो ज्ञान की दशा में वह कर ही नहीं सकता था। सिद्धान्त अथवा नीति के अनुसार न तो उसे मृगया के लिए प्रयास करना चाहिए था और न कपटी मुनि पर विश्वास करके असंभाव्य (असंभव) वर की याचना ही करनी चाहिए थी।

यहाँ यह ध्यान रखने योग्य है कि लौकिक जीवनयापन करने वाले व्यक्ति के लिए कर्म की प्रधानता का अकाट्य नियम क्रियाशील रहता है और इस प्रकार का कर्म इतना प्रबल होता है कि ईश्वर भी इसमें हस्तक्षेप नहीं करते, क्योंकि ईश्वर को भी कर्म की शीर्ष स्थिति को स्वीकार कर अवतरित होकर धर्म का राज्य स्थापित करना पड़ता है। महर्षि भर्तृहरि ने यही तो कहा है :—

ब्रह्मायेन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे
विष्णुर्येन दशावतार गहने क्षिप्तो महासंकटे।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे।। (नीति. 95)

कर्म के प्रति 'नमन' यहाँ इसलिए है कि 'हरि इच्छा' का वैशिष्ट्य यहाँ नहीं है। सामान्य मनुष्य के जीवन में 'कर्म का भोग, भोग का कर्म' यही नियम क्रियाशील रहता है। स्पष्ट है यहाँ 'हरि इच्छा', 'भावी', 'विधाता', 'सरस्वती', 'आकाशवाणी', 'रघुवंश बिभूषन' आदि की दुर्निवार्य बाध्यता नहीं है और श्रीरामचरितमानस के अनुसार इसमें ईश्वर तटस्थ या सम है :—

जद्यपि सम नहिं राग न रोषू। गहहिं न पाप पूनु गुन दोषू।। (2/219/3)

इस प्रकार से पार्वतीजी की आश्चर्यजनक आशंका का निराकरण करते हुए भगवान शिवजी ने उचित ही कहा है कि :—

'ग्यानी मूढ़ न कोइ'

अगर बुरी आदत समय पर न बदली जाये तो बुरी आदत समय बदल देती है।

इस मानस में स्नान करो

पं. राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी, उ.प्र., फोन–9451131195

रामचरितमानस अति पावन, इस मानस में स्नान करो।

उलझन सारी सुलझेंगी यदि, तुम एक यह काम करो।
रामचरितमानस में मानव, तुम जाकर स्नान करो।।
वक्ता, श्रोता और रचयिता हैं भोले बाबा।
भवसागर से शीघ्र तरन का है उनका दावा।।
परम वैष्णव बोध गुरू का, सदा हृदय में ध्यान करो।
रामचरितमानस अति पावन, इस मानस में स्नान करो।।1।।

मातृ पिता और भ्रात गुरु का, है कैसा नाता।
कौन कर्तव्य कर्म करना है, जो जग को हो भाता।।
सुन्दर शिक्षा रामायण से, चुन–चुन करके ग्रहण करो।
रामचरितमानस अति पावन, इस मानस में स्नान करो।।2।।

श्रीराम के आदर्शों पर, तुमको है जीवन जीना।
शिवजी की तरह जन हितार्थ ही, पड़े जहर भी पीना।।
संस्कार शुभ सौम्य भाव का, सदा सुमंगल गान करो।
रामचरितमानस अति पावन, इस मानस में स्नान करो।।3।।

पति–पत्नी का धर्म है क्या, यह मानस में पढ़ना।
कर्म करो निष्काम भाव से, प्रगति शिखर पर चढ़ना।।
जीवन का उद्देश्य श्रेष्ठ हो, नहीं कभी अभिमान करो।
रामचरितमानस अति पावन, इस मानस में स्नान करो।।4।।

जिस प्रकार नीबू के रस की एक बूँद हजारों लीटर दूध को बर्बाद कर देती है, उसी प्रकार 'मनुष्य का अहंकार' भी अच्छे से अच्छे संबंधों को बर्बाद कर देता है।

सायक एक नाभि सर सोषा

श्री अवध किशोर दूबे, झारखण्ड, फोन–8409925271

श्रीराम–रावण युद्ध का एक अपूर्व–आश्चर्यजनक दृश्य, श्रीरामजी ने तीस बाणों से रावण के दसों सिर एवं बीसों भुजाएँ काट दीं, पर आश्चर्य! तुरंत दसों सिर एवं बीसों भुजाएँ पुनः उसके शरीर पर ऐसी स्थिति में दिखाई देती हैं मानो कुछ हुआ ही नहीं।'' एक–दो बार नहीं, अनेक बार श्रीरामजी ने उसके सिर–बाहु छेदन किए, किंतु बार–बार नवीन होते गए। कुछ श्रमित से हुए श्रीरामजी और तब विभीषण की ओर देखा अर्थात् पूछा कि इसका क्या रहस्य है? इसके उत्तरस्वरूप विभीषण ने बताया कि रावण के नाभिकुण्ड में अमृत सरोवर है, इसी से यह जीवित है। जब तक नाभिकुण्ड स्थित अमृत सरोवर को नहीं सुखाया जाएगा, तब तक रावण का अंत संभव नहीं है। यह सुनकर श्रीरामजी ने इकतीस बाण छोड़े, जिसमें एक विशेष बाण था, जिसने पहले तुरंत रावण के नाभिकुण्ड स्थित अमृत सरोवर को सोखा और शेष तीस बाणों ने पूर्व की भाँति दस सिर एवं बीस भुजाओं को काट दिया। इस प्रकार से श्रीरामजी ने अजेय–रावण पर जय प्राप्त की। वह विशेष बाण कौन सा था, इसी पर इस प्रस्तुति में विचार किया गया है।

खैंचि सरासन श्रवन लगि छाड़े सर एकतीस।
रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस।। (6/102)

सायक एक नाभि सर सोषा। अपर लगे भुज सिर करि रोषा।। (6/103/1)

'सायक एक' अर्थात् रामजी द्वारा रावण पर संधानित इकतीस बाणों में से एक विशेष बाण, जो अमृत की एकाध बूँद नहीं, बल्कि रावण की नाभि स्थित अमृत के सरोवर को सोख लेता है, तो वह कौन है जिसने मृत को जीवित करने में सक्षम अमृत सरोवर को सुखा दिया/रामजी की इच्छा से समाप्त कर दिया? जीव को (जीवात्मा को नहीं) मृत करने/मारने की शक्ति काल में है तथा अमृत मृत को जीवित करने की शक्ति रखता है, ये सामान्य सिद्धांत है। चूँकि रावण ने परम उग्र तप बल के माध्यम से ऐसा सामर्थ्य प्राप्त कर लिया था कि काल, यम को अपने वश में कर एवं अमृत को अपनी नाभि में संचित कर एक प्रकार से अजेय हो गया था। रावण–वध के बाद दशरथजी स्वर्ग से आए तो उनका यही भाव था कि अजेय पर जय कैसे प्राप्त की और तब श्रीरामजी ने कहा :–

तात सकल तव पुन्य प्रभाऊ। जीत्यों अजय निसाचर राऊ।। (6/112/3)

रावण ने मान लिया था कि वह विधाता के लेख से ऊपर उठ चुका है, इसलिए कौन मारेगा उसे, लेकिन वह अभिमान की अति में यह भूल गया कि उससे भी ऊपर कोई शक्ति है। रावण ने भले ही काल को, यम को अपने वश में कर लिया, लेकिन वह सहस्रसीस, अहीश, शेषनाग, जो सकल जगत के आधार हैं, उन काल के भक्षक से कैसे पार पाएगा। दृश्य लंकाकांड में युद्धभूमि का है जब रावण के सम्मुख लक्ष्मण पहुँचे और कहा कि–रावण! मुझे अच्छी प्रकार से (ठीक से) देख लो। रावण ने आश्चर्य से कहा कि तुझे ठीक से देखने की क्या आवश्यकता है?

लक्ष्मण ने कहा कि आवश्यकता पड़ेगी, इसलिए कह रहा हूँ कि मुझे ठीक से देख लो, क्योंकि मैं तेरा काल हूँ।

रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि बिलोकु तोर मैं कालू।। (6/83/1)

यह सुनकर रावण अट्टहास करने लगा अर्थात् उपहास भरे भाव से जोर–जोर से हँसने लगा और कहा कि काल मेरे वश में है तो ये नया और उससे बड़ा काल बनकर तू कहाँ से आ गया? लक्ष्मण ने कहा कि अभी हँस लो, लेकिन ठीक से देख लो रावण, क्योंकि तेरा अंत मैं ही करूँगा। अब आगे के प्रसंग की ओर चलते हैं जब (रामचरित रन रंगा में) राम–रावण में भयंकर संग्राम होने लगा और रामजी रावण पर एक बार में एक साथ तीस तीर संधान करते हैं :–

तीस तीर रघुबीर पबारे। भुजन्हि समेत सीस महि पारे।। (6/92/10)

तीसों तीरों के माध्यम से रामजी रावण के दसों सिर एवं बीसों भुजाओं को काट देते हैं, लेकिन आश्चर्य की बात है कि जितनी बार काटे रावण के सिर एवं भुजाएँ पुनः उग जाते हैं :–

काटतहीं पुनि भए नबीने। राम बहोरि भुजा सिर छीने।। (6/92/11)

जैसे पौधे में नवीन कोंपलें आती हैं, लेकिन कुछ विलंब से, पर रावण के सिर एवं भुजाएँ कटने में देर लगती, उगने में नहीं। रामजी हजारों बार उसके सिर एवं भुजाओं को काटते हैं और पुनः नए उग आए, बारम्बार नए। इस प्रकार काटते–काटते रामजी श्रमित से हो गए, तब उन्होंने विभीषण के मुख को नहीं, बल्कि तन देखा, यथा :–

मरइ न रिपु श्रम भयउ बिसेषा। राम बिभीषन तन तब देखा।। (6/102/2)

शरीर देखने का उद्‌देश्य यही कि तूने अपने परिचय में कहा था ना कि :–

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता।। (5/45/7)

तो किस मिट्‌टी से बने हो तुम लोग? कुंभकर्ण को मार रहा था तो वह भी सिर एवं भुजाओं के काटने पर भी नहीं मरा, बल्कि उसके धड़ के दो टुकड़े करने पड़े और ये रावण तो उससे भी आगे है। कैसी संरचना है तुम लोगों की? इसलिए **राम विभीषण तन तब देखा।**

चूँकि पूछना होता है तो मुख की ओर देखा जाता है, शरीर की ओर नहीं? उदाहरणार्थः–

भरत, शत्रुघ्न आदि।

प्रभु मुख कमल बिलोकत रहहीं। कबहुँ कृपाल हमहि कछु कहहीं।। (7/25/2)

और देखिए कि विभीषण ने रावण की मृत्यु का कारण क्या बताया, बल्कि उलझन भरी बातें कह दीं, यथा :–

नाभिकुंड पियूष बस याकें। नाथ जिअत रावनु बल ताकें।। (6/102/5)

बात स्पष्ट है कि अमृत को कौन मार सकता है? उस अमृत सरोवर को कौन सोख सकता है? एकाध बूँद अमृत मृत को जीवित कर सकता है और रावण की नाभि में न जाने कितने घड़े अमृत है और आज तक कोई ऐसा बाण नहीं बना जो अमृत सरोवर को सुखा सके। इसलिए विभीषण समाधान नहीं, बल्कि पूछ रहे हैं कि क्या आपके पास कोई ऐसा बाण है जो अमृत सरोवर को सुखा सके?

यदि नहीं तो फिर परिश्रम व्यर्थ है। उसी समय लक्ष्मण आगे आते हैं और कहते हैं कि–प्रभु! यदि आपकी इच्छा हो तो आपके वचन सत्य सिद्ध कर दूँ? आपने सुग्रीव से कहा था ना कि :–

जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते।। (5/44/7)

और जब मैं रावण के द्वारा चलाई शक्ति से मूर्च्छित हुआ था, तब आपने कहा था ना कि :–

कह रघुबीर समुझु जियँ भ्राता। तुम्ह कृतांत भच्छक सुर त्राता।। (6/84/6)

आपकी आज्ञा हो तो उस क्रोधानल का उस अमृत सरोवर पर प्रयोग कर दूँ जो चौदहों भुवन को जला सकता है :–

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारइ भुवन चारिदस आसू।। (6/55/1)

इसलिए आप इस बार भी अपने धनुष पर तीस बाणों को संधान करें और मैं भी एक तीर बनकर आपके धनुष के माध्यम से अपना कार्य संपन्न करता हूँ। वे रावण के सिर एवं भुजाओं को बाद में काटेंगे, उसके पहले उन्हें जिससे शक्ति मिलती है, मैं उस स्रोत को सुखा दूँगा। और हुआ भी यही कि :–

सायक एक नाभि सर सोषा। अपर लगे भुज सिर करि रोषा।। (6/103/1)

जहाँ से पोषण मिलता है, फणीस, सहससीस, अहीस के अवतार लक्ष्मण ने रावण की नाभि स्थित अमृत सरोवर को सुखाया और तत्पश्चात् उन तीस तीरों ने रावण के सिर एवं भुजाओं को काट डाला। अब चूँकि रावण की नाभि में अमृत नहीं था, अतः रावण का सिर–भुज हीन शरीर उसी प्रकार तड़पने लगा जैसे बलि–पशु सिर काटने पर तड़पता है। अब रावण के छटपटाते/तड़पते विशालकाय शरीर को यदि टुकड़ों में विभक्त नहीं किया जाए तो चूँकि निशाचर सेना जो कुछ बची हुई थी वह पलायन कर चुकी है और वहाँ केवल वानरी सेना है उसकी हानि होगी, अतः रामजी ने बाण प्रहार द्वारा उसके दो टुकड़े कर दिए और रावण की लीला समाप्त हो गई। लेकिन सोचिए – रावण का प्राणांत किया किसने? वही सायक एक –अर्थात् फनीस/अहीस, लखन सचराचर धनी ने। इस प्रकार से लक्ष्मणजी ने रावण दूत सुक सारक के माध्यम से रावण को भेजे अपने संदेश को सत्य कर दिखाया, यथा :–

कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा कालु तुम्हार।। (5/52)

और युद्ध भूमि में भी :–

रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि बिलोकु तोर मैं कालू।। (6/83/1)

तात्पर्य यह कि शेषावतार लक्ष्मण ने ही विशेष बाण बनकर (मानहु काल फनीस), रावण के प्राण अवशेष कर दिए। इस प्रकार रावण का काल बनने वाला वह फनीश स्वयं लक्ष्मण ही हैं।

धर्म चिंतन

हनुमानजी जब संजीवनी बूटी का पर्वत लेकर लौटते हैं तो भगवान से कहते हैं :– ''प्रभु आपने मुझे संजीवनी बूटी लेने नहीं भेजा था, बल्कि मेरा भ्रम दूर करने के लिए भेजा था और आज मेरा यह भ्रम टूट गया कि मैं ही आपका राम नाम का जप करने वाला सबसे बड़ा भक्त हूँ''।

भगवान बोलेः– वह कैसे?

हनुमानजी बोलेः– वास्तव में मुझसे भी बड़े भक्त तो भरतजी हैं, मैं जब संजीवनी लेकर लौट रहा था, तब मुझे भरतजी ने बाण मारा और मैं गिरा तो भरतजी ने न तो संजीवनी मंगाई, न वैद्य बुलाया। कितना भरोसा है उन्हें आपके नाम पर उन्होंने कहा कि यदि मन, वचन और शरीर से श्रीरामजी के चरण–कमलों में मेरा निष्कपट प्रेम हो, यदि रघुनाथजी मुझ पर प्रसन्न हों तो यह वानर थकावट और पीड़ा से रहित होकर स्वस्थ जो जाए। उनके इतना कहते ही मैं उठ बैठा। सच कितना भरोसा है भरतजी को आपके नाम पर। श्रीरामचरितमानस के अनुसार :–

जौं मोरें मन बच अरु काया। प्रीति राम पद कमल अमाया।।
तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला। जौं मो पर रघुपति अनुकूला।।
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा। कहि जय जयति कोसलाधीसा।। (6/59/6–8)

शिक्षा –हम भगवान का नाम तो लेते हैं, पर भरोसा नहीं करते, भरोसा करते भी हैं तो अपने पुत्रों एवं धन पर कि बुढ़ापे में बेटा ही सेवा करेगा, धन ही साथ देगा। उस समय हम भूल जाते हैं कि जिस भगवान का नाम हम जप रहे हैं वे हैं, पर हम भरोसा नहीं करते। बेटा सेवा करे न करे, पर भरोसा हम उसी पर करते हैं।

दूसरी बात प्रभु – बाण लगते ही मैं गिरा, पर्वत नहीं गिरा, क्योंकि पर्वत तो आप उठाए हुए थे और मैं अभिमान कर रहा था कि मैं उठाए हुए हूँ। मेरा दूसरा अभिमान भी टूट गया।

शिक्षा – हमारी भी यही सोच है कि अपनी गृहस्थी के बोझ को हम ही उठाए हुए हैं, जबकि सत्य यह है कि हमारे नहीं रहने पर भी हमारा परिवार चलता ही है।

सारांश

जीवन के प्रति जिस व्यक्ति की कम से कम शिकायतें हैं, वही इस जगत में अधिक से अधिक सुखी है। यह राम नाम बहुत ही सरल, सरस, मधुर, अति मन भावन एवं कल्याणकारी है–जीवन के साथ भी और जीवन के बाद भी।

मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी

डॉ0 भगवान दास पटैरया, समिति के महासचिव

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान ने अपने व्यवहार से अधिकांश प्रसंगों में यह चरितार्थ करके दिखाया कि सामान्य जन भी उनके आचरण से शिक्षा ग्रहण करके मानव से महामानव बन सकता है। बहुत ही कम प्रसंगों में उन्होंने भगवत्ता दर्शायी है, जबकि लीला पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण ने जन्म से ही चमत्कार दिखाया है। कब किसके साथ कैसा व्यवहार करना है, विशेषकर अपने से वरिष्ठ और गुरुजनों के समक्ष किस प्रकार से बोलना है, यह श्रीरामजी के व्यवहार से ज्ञात होता है। कब संकेत देने के उद्‌देश्य से मन ही मन मुस्कराना है, कब प्रत्यक्ष रूप से मुस्कराना है, यह भी श्रीरामजी का अनुकरणीय आदर्श है। उल्लेखनीय है कि त्रेता युग में अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम ने जो मानव चरित्र चरितार्थ किया है, वही अनुकरणीय है, पर उन्हीं प्रभु ने द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण के रूप में श्रीमद्भगवद्गीता में या अन्य प्रसंगों में जो उपदेश दिए हैं, वे ही अनुकरणीय हैं। लीलाएँ तो उन्होंने अपने भक्तों को परमानंद प्रदान करने के लिए की हैं, वे अनुकरणीय न होकर भक्तिभाव प्राप्त करने हेतु हैं। **इस परिप्रेक्ष्य में किस प्रसंग में कब किसके साथ किस प्रकार का व्यवहार मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम ने मुस्करा कर संकेत रूप में किया है, इसके कुछ उदाहरण श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार से वर्णित हैं :–**

1. मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी

मुनि विश्वामित्र की यज्ञ–रक्षा में मारीच को सौ योजन दूर समुद्र तट पर फेंकने और सुबाहु का संहार करने के पश्चात् श्रीराम–लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र के साथ जनकपुर पहुँचे और उनकी इच्छानुसार एक आम्रवाटिका में डेरा डाल दिया। राजा जनक यह समाचार सुनते ही विश्वामित्र के स्वागतार्थ आए और श्रीराम–लक्ष्मण को देखकर स्तब्ध रह गए। उन्होंने कहा कि इन दोनों बालकों को देखकर उनका स्वाभाविक ही वैराग्यमय मन बरबस ही ब्रह्मसुख को त्यागकर इस प्रकार से मोहित हो रहा है जैसे चंद्रमा को देखकर चकोर। इसलिए पूछ रहा हूँ कि ये कौन हैं, आप सच–सच बताइएगा, यथाः–

सहज बिरागरूप मनु मोरा। थकित होत जिमि चंद चकोरा।।
ताते प्रभु पूँछउँ सतिभाऊ। कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ।।
इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा। बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा।। (1/216/3–5)

यह सुनकर मुनि विश्वामित्र उनका परिचय देते हुए कहते हैं कि राजन! आपने सत्य ही कहा है, जहाँ तक प्राणिमात्र का संबंध है ये सभी को इसी प्रकार से प्रिय हैं। श्रीरामजी समझ गए कि अब मुनि महाराज रहस्योद्घाटन करने वाले हैं। मेरा यह अवतार तो गुप्त रूप से है। इस तथ्य को अगस्त्य ऋषि से श्रीराम कथा श्रवण करने के पश्चात् लौटते हुए मार्ग में श्रीरामजी की विरह–लीला देखकर शिवजी ने इस प्रकार से प्रकट किया था :–

हृदयँ बिचारत जात हर केहि बिधि दरसनु होइ।
गुप्त रूप अवतरेउ प्रभु गएँ जान सबु कोइ।। (1/48क)

मुनि विश्वामित्रजी इस रहस्य को प्रकट न कर दें, इस हेतु संकेतस्वरूप श्रीरामजी मुनिजी की ओर देखकर मन ही मन मुस्कराने लगे, यथा–

ए प्रिय सबहि जहाँ लगि प्रानी। मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी।। (1/216/7)

श्रीरामजी के संकेत को समझकर मुनि विश्वामित्र ने केवल यही परिचय दिया कि ये दोनों महाराज दशरथ के पुत्र राम–लक्ष्मण हैं, उन्होंने मेरे यज्ञ की रक्षा हेतु इन्हें भेजा है।

2. परम बिनीत सकुचि मुसुकाई

महाराज जनक श्रीराम–लक्ष्मण के साथ मुनि विश्वामित्र को अपने महल में ले जाते हैं। वहाँ दोपहर को भोजन–विश्राम के पश्चात् श्री लक्ष्मणजी जनकपुर देखना चाहते हैं, पर कुछ कहते नहीं, मन ही मन मुस्करा रहे हैं। श्रीरामजी उनके मन की बात समझ जाते हैं और गुरु विश्वामित्रजी से उनकी आज्ञा पाकर बड़े संकोच से परम विनम्रतापूर्वक मुस्कराकर इस बात को इस प्रकार से कहते हैं, यथा :–

राम अनुज मन की गति जानी। भगत बछलता हियँ हुलसानी।।
परम बिनीत सकुचि मुसुकाई। बोले गुर अनुसासन पाई।।
नाथ लखनु पुर देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।। (1/218/3–6)

इस प्रकार बड़ी ही विनम्रता से गुरु–आज्ञा पाकर दोनों भाई जनकपुर देखने चले गए। लौटने में थोड़ा सा विलम्ब हो गया, ऐसा समझकर श्रीरामजी कुछ डरे हुए से, अत्यंत संकोच से, प्रेम सहित विनम्रतापूर्वक गुरु चरणकमलों में सिर झुकाकर, आज्ञा पाकर बैठ गए, यथा–

सभय सप्रेम बिनीत अति सकुच सहित दोउ भाइ।
गुर पद पंकज नाइ सिर बैठे आयसु पाइ।। (1/225)

श्रीरामजी का आदर, प्रेम और विनम्रता का यह उदाहरण सर्वोपरि है।

3. मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ

जनकपुर में धनुष–भंग के पश्चात् उसकी विश्वव्यापी तीव्र ध्वनि सुनकर महेन्द्र गिरि पर तप कर रहे परशुरामजी का ध्यान भंग हो गया और वे तुरंत आयोजन स्थल, जनकपुर आ धमके। राजा जनक, मुनि विश्वामित्र आदि से उग्र भाव से ही मिलने की औपचारिकता पूर्ण करते हुए रोषपूर्ण वाणी में बोले कि अरे जनक! बता शिव धनुष किसने तोड़ा है? जब किसी ने कोई उत्तर न दिया, तब श्रीरामजी ने बड़ी ही शान्त–गम्भीर भावमुद्रा में उनसे सम्वाद प्रारंभ किया, पर लक्ष्मणजी इस वार्ता में बीच में ही कूद पड़े। बहुत नोक–झोंक होने पर परशुरामजी को इतना क्रोधित कर दिया कि वे श्रीरामजी को युद्ध के लिए ललकारने लगे और उनके ऊपर अपना फरसा उठाकर अनाप–शनाप वार्ता करने लगे, पर श्रीरामजी उनके समक्ष सिर झुकाए मन ही मन मुस्करा रहे हैं, यथा :–

भृगुपति बकहिं कुठार उठाएँ। मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ। (1/281/4)

इस समय श्रीरामजी मुस्कराकर मानो परशुरामजी को संकेत कर रहे हैं कि श्रीमान् जी बहुत हो गया, अब तो वास्तविकता को समझ लीजिए।

4. रामु मनहिं मुसुकाहिं

श्रीरामजी अपने सभी भाइयों के साथ विवाह के उपरान्त जब अयोध्या के राजभवन में जाते हैं, तब तीनों माताएँ लोकरीति के अनुसार वर–दुल्हनों के साथ व्यवहार करती हैं, उनकी आरती उतारती हैं। इससे चारों दूल्हा–दुल्हन संकोच में पड़ जाते हैं, पर श्रीरामजी इतना अत्यधिक मोद–विनोद देखकर मन ही मन मुस्कराते हैं, यथा :–

लोक रीति जननीं करहिं बर दुलहिनि सकुचाहिं।
मोदु बिनोदु बिलोकि बड़ रामु मनहिं मुसुकाहिं।। (1/350ख)

श्रीरामजी मन ही मन मुस्कराकर माताओं को मानो भविष्य का संकेत कर रहे हैं।

5. मन मुसुकाइ भानुकुल भानू

अपने चारों पुत्रों के विवाह के उपरान्त महाराज दशरथ बड़े आनन्द में थे, पर एक दिन उन्होंने कानों के समीप अपने सफेद बाल देखे। इससे उनके मन में विचार आया कि अब मेरा वृद्धापन मानो उपदेश दे रहा है कि 'राम' को राज्यभार सौंपकर शेष जीवन आत्म कल्याणार्थ बिताओ। वे तुरंत गुरु वसिष्ठजी के पास गए और अपना मन्तव्य सुनाया। गुरुजी ने सहमति व्यक्त करते हुए मुहूर्त के नाम पर यह कहा :–

बेगि बिलंबु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु।
सुदिन सुमंगलु तबहिं जब रामु होहिं जुबराजु।। (2/4)

यह सुनकर दूसरे ही दिन राज्याभिषेक की तैयारी होने लगी, यद्यपि भरत–शत्रुघ्न उस समय अपनी ननिहाल में थे। इधर देवतागण व्याकुल थे कि रावण का संहार कैसे होगा। यह तभी संभव है जब रामजी का वन–गमन हो। इस कार्य के लिए सरस्वतीजी की सहायता से मंथरा की बुद्धि भ्रमित कर दी गई और उसने महारानी कैकेयी को भी भ्रम में डालकर उनके मन में ही सौतिया डाँह उत्पन्न कर उन्हें प्रेरित किया कि महाराज से आज रात में ही उनके द्वारा प्रदत्त अपने दो वरदान इस प्रकार से माँग लो –

सुतहि राजु रामहि बनबासू। देहु लेहु सब सवति हुलासू।। (2/22/6)

महाराज दशरथ संध्या समय आनंदपूर्वक कैकेयी के महल में गए, पर कोप भवन की बात सुनकर चौंक जाते हैं। महारानी कैकेयी को मनाते हुए श्रीरामजी की शपथ लेकर कहते हैं कि जो माँगो दूँगा। कैकेयी अपने पुत्र भरत को राजतिलक और श्रीराम को चौदह

वर्ष का वनवास माँग लेती हैं। सच्ची बात समझकर महाराज दशरथ मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं और पूरी रात 'राम–राम' रटते रहे। प्रातःकाल जब महाराज महल से बाहर नहीं आए, तब मंत्री सुमंत्र उनके पास जाते हैं और महाराज की दशा देखकर समझ जाते हैं कि कुछ गड़बड़ हो गई है। कैकेयी के कहने पर और महाराज की सम्मति समझकर वे श्रीरामजी को बुलाकर उस कक्ष में आते हैं। श्रीरामजी पिताश्री की हालत देखकर माँ कैकेयी से इसका कारण पूँछते हैं। उन्हें पूरी बात बता दी जाती है, तब श्रीरामजी मन ही मन मुस्कराते हैं, यथा :–

मन <u>मुसुकाइ</u> भानुकुल भानू। रामु सहज आनंद निधानू।। (2/41/5)

6. सकुचि राम मन महुँ मुसुकाने

माता कैकेयी द्वारा महाराज दशरथ से अपनी थाती के रूप में रखे दो वरदान (एक से भरत को राजतिलक और दूसरे से राम को 14 वर्ष का वनवास) माँगने के कारण श्रीराम अपनी भार्या सीता और भाई लक्ष्मण के साथ वन को चल दिए। महाराज दशरथ ने मंत्री सुमंत्र को बुलाकर कहा कि राम–सीता–लक्ष्मण को रथ में बैठाकर और वन दिखाकर कुछ दिनों बाद लौटा लाना। श्रीरामजी के रथ के पीछे–पीछे प्रजाजन चलने लगे जिन्हें श्रीरामजी तमसा नदी के किनारे सोते हुए छोड़कर निषादराज का आतिथ्य स्वीकार करके उनके साथ गंगाजी पार करके तीर्थराज प्रयाग पहुँचे और मुनि भरद्वाज से मिले। वहाँ से यमुना नदी तक निषादराज साथ रहे, इसके आगे वे अकेले ही चले और महर्षि वाल्मीकि के आश्रम पहुँचे। वाल्मीकिजी से उनका सम्वाद हुआ। उन्होंने श्रीरामजी का वास्तविक स्वरूप पहचान लिया। श्रीरामजी के पूछने पर कि कोई ऐसा स्थान बताएँ, जहाँ पर किसी मुनि–तपस्वी को कष्ट न हो, वहाँ पर हम पर्णकुटी बनाकर वनवास काल बिताना चाहते हैं। इसके उत्तर में वाल्मीकिजी उनके अखिल ब्रह्माण्ड नायक ब्रह्म के स्वरूप की महिमा बताते हुए यह कहते हैं :–

पूँछेहु मोहि कि रहौं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ।। (2/127)

मुनि वाल्मीकिजी के मुख से प्रेम रस से सनी अपनी महिमा सुनकर श्रीरामजी को संकोच हुआ और मन ही मन मुस्कराने लगे, यथा :–

सुनि मुनि बचन प्रेम रस साने। सकुचि राम मन महुँ मुसुकाने।। (2/128/1)

इस प्रसंग में भी मन ही मन मुस्कराकर श्रीरामजी वाल्मीकिजी को संकेत कर रहे हैं कि वे गुप्त रूप से अवतरित हुए हैं, अतः इस रहस्य को अपने तक ही सीमित रखें। इतना संकेत मिल जाने पर भी वाल्मीकिजी ने जनकल्याणार्थ श्रीराम के चौदह प्रकार के भक्तों का वर्णन करते हुए कहा कि हे राम! आप इनके मन/हृदय में बास करें और अंत में मानव लीला के अनुरूप श्रीरामजी को चित्रकूट में प्रवास करने को कहा।

7. तब रघुपति बोले मुसुकाई

सीता–हरण के पश्चात् उनकी खोज करते, जटायु का उद्धार कर भक्तमती शबरी के कथनानुसार श्रीरामजी ने सुग्रीव से मित्रता की। बालि का वध करके सुग्रीव का राजतिलक करा दिया और किष्किंधा जाते समय सुग्रीव से कहा कि वर्षाकाल के तुरंत बाद आना ताकि हम सीतान्वेषण प्रारंभ कर सकें। सुग्रीव भोग–विलास में इतने लिप्त हो गए कि उन्हें समय का ध्यान नहीं रहा। इससे श्रीरामजी कुपित हो गए, पर लक्ष्मणजी को यह कहकर किष्किंधा भेजा –

तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुना सींव।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव।। (4/18)

श्री लक्ष्मणजी किष्किंधा जाकर भय एवं प्रीति दिखाकर सुग्रीव को लेकर आते हैं, तब सुग्रीव अपनी भूल को स्वीकारते हुए श्रीरामजी से यह निवेदन करते हैं :–

अतिसय प्रबल देव तव माया। छूटइ राम करहु जौं दाया।।
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पावँर पसु कपि अति कामी।।
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा।।
लोभ पाँस जेहिं गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया।।
यह गुन साधन तें नहिं होई। तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई।। (4/21/2–5)

यह सुनकर श्रीरामजी मुस्कराते हुए बोले कि अगर तुम्हारे ऐसे विचार हैं तो तुम मुझे भाई भरत के समान प्रिय हो, यथा :–

तब रघुपति बोले मुसुकाई। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई।। (4/21/7)

इस प्रकार से श्रीरामजी जब भी मुस्कराए, कुछ न कुछ रहस्य उनकी मुस्कराहट में रहा है, जैसा कि उपर्युक्त सात प्रसंगों में वर्णन किया गया है।

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम ने अधिकांश प्रसंगों में अपनी भगवत्ता छिपाई है और जहाँ कहीं किसी ऋषि–मुनि या ब्रह्मवेत्ता ने इसे प्रकट करने का प्रयास किया है, वहाँ उन्होंने मुस्कराकर यह संकेत दिया कि वे इस गोपनीय रहस्य को उजागर न करें, क्योंकि वे समाज को यह संदेश देना चाहते हैं कि जन सामान्य भी विकट से विकट परिस्थिति में भी अपने पुरुषार्थ, धैर्य एवं बड़ों–गुरुजनों के आशीर्वाद से अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।

- **कल न हम होंगे न गिला होगा, सिर्फ सिमटी हुई यादों का सिलसिला होगा।
जो लम्हे हैं चलो हँसकर बिता लें, जाने कल जिन्दगी का क्या फैसला होगा।।**

- **कल शीशा था, सब देख–देख कर जाते थे, आज टूट गया, सब बच–बच कर जाते हैं। समय के साथ देखने और इस्तेमाल का नजरिया बदल जाता है।।**

- **सीख तो उस बालक से लेनी चाहिए जो अपनों से मार खाके भी अपनों से ही लिपट जाता है।**

- **इच्छाओं के रहते हुए प्राण चले जाएँ तो समझिए मृत्यु हो गई, पर यदि प्राण के रहते हुए इच्छाएँ चली जाएँ तो समझिए मुक्ति हो गई।**

- **पहाड़ों पर बैठकर तप कर लेना सरल है, किंतु परिवार में रहकर धीरज बनाए रखना सबके बस की बात नहीं।**

- **'घमंड' और 'पेट' जब ये दोनों बढ़ते हैं, तब 'इंसान' चाह कर भी किसी को गले नहीं लगा सकता।**

श्रीरामचरितमानस : जीवन जीने का नीतिशास्त्र

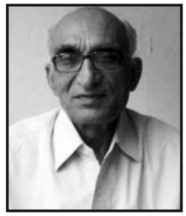

पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत', भांडेर, (दतिया) म.प्र., फोन–8770436182

जीवन के सुचारु संचालन के लिए कुछ नियम–धर्म तथा सामाजिक कार्यों, घटनाओं आदि के समाधान हेतु कुछ सूत्र आवश्यक हैं। यह जीवन–विज्ञान का एक हिस्सा है। हमारे ऋषि–मुनि–महात्माओं ने अपने अनुभूत सूत्र हमें वेद, शास्त्रों, पुराणों के माध्यम से सुझाए हैं, जिनका प्रयोग कर हम समृद्ध जीवन जी सकते हैं और तमाम मानसिक, शारीरिक व्याधियों से बच सकते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस की रचना करके जीवनोपयोगी सूत्र प्रदान कर हमारे मानव–समाज पर इतना बड़ा उपकार किया है कि हम जीवन भर उनके ऋणी रहेंगे। जन सामान्य की भाषा में उन्होंने वेद–पुराणों–शास्त्रों का निचोड़ हमें दिया है। आज भारत क्या दुनियाँ के जन–जन तक इसकी मान्यता, प्रतिष्ठा और सम्मान है और यही कारण है कि गाँव से लेकर शहर और देश से लेकर विदेश तक श्रीरामचरितमानस का गहरा प्रभाव और इसके प्रति अटूट श्रद्धा है। कौन लिख सकता है इसकी महिमा, जब भी पढ़ो प्रत्येक बार एक नवीन विचार नए–नए भावों में उभर कर स्वतः ही आ जाते हैं, कारण है कि महात्मा तुलसीदासजी ने जीवन के 77 वर्षों के अध्ययन के बाद श्रीरामचरितमानस का लेखन प्रारंभ किया, जो ज्ञान का भंडार है। इसके साथ ही उन पर शिवजी की कृपा रही जिसका प्रमाण वे प्रारम्भ में इस प्रकार से लिखते हैं :– **संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। (1/36/1) तथा भनिति मोरि सिव कृपाँ बिभाती। (1/15/9)।**

गोस्वामीजी की विनम्रता देखिए ''**स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा–भाषा निबन्धमतिमञ्जुलमातनोति''' (1/श्लोक 7)**

सात खंडों में विभक्त मानस की एक चौपाई तो क्या एक शब्द का विमर्श भी जीवन को बदलने की क्षमता रखता है। श्रीरामचरितमानस के सातों काण्डों में जीवनोपयोगी सूत्रों का भंडार है। इस लेख में सुंदरकाण्ड तथा अयोध्याकाण्ड के कुछ सूत्रों का वर्णन किया गया है।

प्रसंग देखिए, वनवास का प्रथम दिवसः सचिव और माता सीता सहित दोनों भाई शृंगवेरपुर पहुँचे और निषादराज गुह से भेंट हुई, रात्रि विश्राम के क्षण हैं। निषादराज गुह

ने कुश और कोमल–कोमल पत्तों को बिछाकर सुंदर साँथरी सजाकर बिछावन बना दिया।

सीता सचिव सहित दोउ भाई। सृंगवेरपुर पहुँचे जाई।। (2/87/1)
गुहँ सँवारि साँथरी डसाई। कुस किसलयमय मृदुल सुहाई।। (2/89/7)

भगवान श्रीराम सीताजी सहित विश्राम कर रहे हैं, वह भी कुश की साँथरी पर निद्रामग्न निश्चिंत होकर सो रहे हैं। यही है स्थिति और परिस्थितियों को स्वीकार करने का सूत्र। कहाँ एक दिन पहले राजभवन में सुंदर पलँगों पर अनेक कोमल वस्त्रों पर सोने वाले आज वन में इस दशा में सो रहे हैं और वह भी निश्चिंत होकर। इस बात का प्रमाण यह है कि दूसरे क्षण ही परिवर्तित परिस्थितियों को यदि हम स्वीकार कर लें तो फिर कष्ट कहाँ? इधर मानव मन के कमजोर चिंतन को भी तुलसीदासजी ने बड़े ही सुंदर ढंग से निषादराज गुह के माध्यम से, वह पीड़ा जो हम सबको भी परेशान करती है, दर्शायी है।

अपने कर्मों के जनित फलों से उत्पन्न ही सुख–दुख का कारण है, लेकिन हम सदैव दुख के लिए दूसरों को ही दोषी ठहराते हैं। यदि कर्म का रहस्य समझ में आ जाए कि यह जो हो रहा है उसके लिए मेरे कर्म ही जिम्मेदार हैं तो फिर विषाद कहाँ रहेगा। निषादराज गुह भैया लक्ष्मण से यही बात कह रहा है कि माता कैकेई ने बड़ी कुटिलता की है। श्रीराम और जनकनंदिनी को सुख के समय दुख दिया है, लेकिन उस समय भ्राता लक्ष्मणजी की ज्ञान और वैराग्य की सीख है, वह चाहे स्वयं अपने पिता तुल्य भाई के लिए ही क्यों न कही गई हो। नीति सदैव समान व्यवहार करती है, श्रीरामचरितमानस में लक्ष्मणजी ने जब भी, जहाँ भी अन्याय और अकारण तथ्यों को पाया, देखा और सुना तुरंत स्पष्ट कहने में कोई संकोच नहीं किया। गोस्वामी तुलसीदासजी के लेखन की यही विशेषता है कि वह नीतिगत बातों को चरित्रों के माध्यम से कहलवाते हैं। प्रामाणिक शास्त्रगत नीतियों का इससे अच्छा क्या उपदेश हो सकता है। भाई लक्ष्मण निषादराज गुह की पीड़ा भरे भावनात्मक विचारों को सुन रहे हैं, लेकिन फिर लक्ष्मणजी द्वारा कही गई बात देखिए। यह कितना बड़ा जीवन जीने का सूत्र है कि यदि इस पर विचार, मंथन और स्वीकार किया जाए, तब जीवन के सभी क्लेश नष्ट ही समझिए और तब सभी प्रकार के आरोप–प्रत्यारोप भी समाप्त हो जाएँगे। भाई लक्ष्मणजी निषादराज गुह से कह रहे हैं किः–

बोले लखन मधुर मृदु बानी। ग्यान बिराग भगति रस सानी।।
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता।।
(2/92/3–4)

अर्थात् हे भाई! कोई किसी को सुख–दुख देने वाला नहीं है, सब अपने ही किए हुए कर्मों का फल भोगते हैं। बात कड़वी है, लेकिन यह कथन सूत्र हमारे जीवन के अशांत अंतर्मन को नियंत्रित करने में कितना सहायक है, विचारणीय है। श्रीरामचरितमानस में जीवन जीने के नीति–सूत्रों का वर्णन जीवन जीने का सुखद मार्ग है। यदि हम इन सूत्रों को अपने जीवन में उतार लें, स्वीकारोक्ति का रास्ता अपना लें, तब जीवन धन्य ही समझिए। एक सूत्र भी जीवन में उतार लें, तब भी कल्याण निश्चित रूप से हो जाएगा। भगवान के नर रूप धारण करने का यह भी एक कारण है, यथा :–

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल।। (2/93)

2. सुंदरकाण्ड क्यों न हो सुंदर, माता सीता का पता पाकर जहाँ रघुकुलनंदन, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम मानव लीला करते हुए प्रसन्नता से भर गए हों। यही इस काण्ड की सुंदरता है। प्रसंग सागर पार जाने का है, विभीषण का सुझाव और भाई लक्ष्मण का क्रोध। विभीषण कहते हैं, प्रभु आपके बाणों में सागर सोखने की शक्ति है, लेकिन नीति कहती है कि निवेदन करें, प्रथम निवेदन करना कर्तव्य है। यदि निवेदन से बात पूरी न हो तभी बल का प्रयोग करना उचित है।

कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव सायक।।
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई।। (5/50/7–8)

जब हमारे पास बल होता है तो विचार प्रबल होकर क्रोध के माध्यम से नीति के विपरीत चला जाता है, भाई लक्ष्मणजी के साथ यही हो रहा है, लेकिन प्रभु श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं उनसे यह चूक संभव नहीं।

मंत्र न यह लछिमन मन भावा। राम बचन सुनि अति दुख पावा।।
कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा।।

(5/51/2 एवं 4)

देखिए! क्रोध किसी अप्रिय घटना को अंजाम न दे दे, अतः शांत करने का सूत्र है कि तुरंत उस पर प्रतिक्रिया न की जाए, जैसा कि श्रीरामजी ने भ्राता लक्ष्मण से कहा :–

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा। ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा।। (5/51/5)

यदि आज हम इन सूत्रों को अपने व्यवहार में लाएँ तो बड़ी से बड़ी घटनाएँ टल सकती हैं। इससे राग–द्वेष में कमी आएगी, समाज में समरसता का वातावरण बनेगा। पाठ करें मानस का बहुत अच्छी बात है, लेकिन प्रसंगों से हमें कुछ हासिल भी करना चाहिए।

इस प्रसंग को आगे देखिए–अनुनय–विनय जब निष्फल हो जाएँ और बल प्रयोग कर हितकारी निर्णय लेना पड़े, तब फिर मर्यादा भंग नहीं मानी जाएगी। तुलसी साहित्य की यही विशेषता है कि नीतिपरक बात प्रसंगाधीन बन जाती है। वे लिखते हैं :–

सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती।।
ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।।
क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा।।
(5/58/2–4)

जड़ समुद्र भी चेतन होकर प्रभु श्रीराम के समक्ष उपस्थित हो गया और ज्ञान की बात भगवान को बता रहा है, यह हम सब की प्रवृत्ति है। अल्प ज्ञानी, ज्ञानी को नीति बताता है। समुद्र कहता है कि हे प्रभो :–

गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी।। (5/59/2)

लेकिन चतुराई का सूत्र देखिए जब हम किसी बड़े प्रभावशाली–बलशाली व्यक्ति का कुछ छोटा सा काम करते हैं और उसकी प्रसन्नता देखते हैं, तब हमारे मन में अपनी समस्या के समाधान का हल करवाने का भी मौका मिल जाता है और हम उसका फायदा उठाते हैं। यही समुद्र ने भी किया और भगवान श्रीराम ने उसकी पीड़ा समझ कर उत्तर तट बासी दुष्टों का संहार बिना किसी प्रश्न के कर दिया।

एहिं सर मम उत्तर तट बासी। हतहु नाथ खल नर अघ रासी।। (5/60/5)

श्रीरामचरितमानस में दिए गए सूत्र हमारी जिंदगी बदल सकते हैं, **बशर्ते** दिल तक उतर जाएँ और इसके लिए भगवत्शरण होकर मानस का सतत–अध्ययन, मनन, पाठ करना आवश्यक है। एक–एक चौपाई संजीवनी का काम करती है। केवल थोड़ा समय हमें अपने जीवन के क्षणों से निकालना है, अभ्यास करना है और अभ्यास जब हो जाए तो जीवन की समग्रता को कोई रोक नहीं सकता। साथ ही साथ हम उन विकारों से भी बच सकते

हैं जो जीवन को निरर्थक बनाते हैं। स्वीकारोक्ति यदि जीवन में आ जाए तो फिर कष्ट कहाँ? **चिंतन की धारा तो केवल श्रीरामचरितमानस के सूत्र ही बदल सकते हैं।**

वक्त बदलते देर नहीं लगती

बाहर बारिश हो रही थी और अन्दर क्लास चल रही थी। तभी अध्यापक ने बच्चों से पूछा–अगर तुम सभी को 100–100 रुपए दिए जाएँ तो तुम सब क्या–क्या खरीदोगे? किसी ने कहा– मैं वीडियो गेम खरीदूँगा, किसी ने कहा–मैं क्रिकेट का बेट खरीदूँगा, किसी ने कहा–मैं अपने लिए प्यारी सी गुड़िया खरीदूँगी तो किसी ने कहा–मैं बहुत सी चॉकलेट्स खरीदूँगी।

एक बच्चा कुछ सोच में डूबा हुआ था, अध्यापक ने उससे पूछा–तुम क्या सोच रहे हो, तुम क्या खरीदोगे? बच्चा बोला–मेरी माँ को थोड़ा कम दिखाई देता है तो मैं अपनी माँ के लिए एक चश्मा खरीदूँगा। अध्यापक ने पूछा–तुम्हारी माँ के लिए चश्मा तो तुम्हारे पापा भी खरीद सकते हैं, तुम्हें अपने लिए कुछ नहीं खरीदना? बच्चे ने जवाब दिया उससे उनका भी गला भर आया। बच्चे ने कहा–मेरे पापा अब इस दुनिया में नहीं हैं। मेरी माँ लोगों के कपड़े सिलकर मुझे पढ़ाती है। कम दिखाई देने की वजह से वे ठीक से कपड़े नहीं सिल पाती हैं, इसीलिए मैं उनको चश्मा देना चाहता हूँ, ताकि मैं अच्छे से पढ़ सकूँ, बड़ा आदमी बन सकूँ और माँ को सारे सुख दे सकूँ।

अध्यापक–बेटा तेरी सोच ही तेरी कमाई है। ये 100 रुपए मेरे वादे के अनुसार और ये 100 रुपए और उधार दे रहा हूँ। जब कभी कमाओ तो लौटा देना। मेरी इच्छा है, तू इतना बड़ा आदमी बने कि तेरे सर पर हाथ फेरते वक्त मैं धन्य हो जाऊँ।

20 वर्ष बाद :– अचानक स्कूल के आगे जिला कलेक्टर की बत्ती वाली गाड़ी आकर रुकती है, स्कूल स्टाफ चौकन्ना हो जाता है। स्कूल में सन्नाटा छा जाता है। मगर ये क्या? जिला कलेक्टर एक वृद्ध अध्यापक के पैरों में गिर जाते हैं और कहते हैं – सर मैं, उधार के 100 रुपए लौटाने आया हूँ। पूरा स्कूल स्टॉफ स्तब्ध।

वृद्ध अध्यापक झुके हुए नौजवान कलेक्टर को उठाकर भुजाओं में कस लेता है और रो पड़ता है। **वक्त बदलते देर नहीं लगती। शहंशाह को फ़कीर और फ़कीर को शहंशाह बनते, देर नहीं लगती।**

चले मरुत उनचास

पं. राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी, फोन–9451131195

श्रीहनुमानजी सीतान्वेषण हेतु लंका जाते हैं और भक्त विभीषण द्वारा बताई गई युक्ति के अनुसार माँ सीता का दर्शन करते हैं। वे उनसे आज्ञा लेकर अशोक वाटिका में फल खाने के बहाने ऐसा उपद्रव करते हैं कि रावण की आज्ञा से मेघनाद उन्हें ब्रह्मपाश में बाँधकर दरबार में ले जाता है। विभीषण की सलाह से रावण उन्हें मृत्यु दंड न देकर पूँछ में आग लगाने की आज्ञा देता है। उनकी पूँछ में आग लगते ही हरि–प्रेरणा से 'उनचास पवन' चल पड़े। इन उनचास पवनों के संदर्भ में तथा हनुमानजी द्वारा लंका–दहन का दृश्य इस लेख में वर्णन किया गया है।

हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास।। (5/25)

रामदूत हनुमानजी को बाँधकर नगर में घुमाया गया और फिर उनकी प्रिय पूँछ में आग लगा दी गयी। तब हनुमानजी ने मन में विचार किया कि अब हमें क्या करना चाहिए। प्रभु श्रीरामजी की क्या आज्ञा है। भगवान श्रीराम ने देखा कि मेरे भक्त हनुमानजी को पीड़ा पहुँचाई जा रही है, तो उन्हें क्रोध आ गया क्योंकि :–

जो अपराधु भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई।। (2/218/5)

जो भगवान के भक्त के प्रति अपराध करता है वह उनकी क्रोधाग्नि से जल जाता है। लंका में भक्त का अपमान हुआ तो लंका को जलना ही चाहिए था। इसलिए प्रभु की प्रेरणा से उनचास मरुत गण एक साथ चल पड़े। दूसरा भाव संत जन यह बतलाते हैं कि उनचास मरुत गण लंकेश के बंदीगृह में बंद थे। उनको श्रीराम भक्त हनुमानजी ने मुक्त किया। जब उन्होंने देखा कि श्रीहनुमानजी की पूँछ में आग लगा दी गयी है, तो वे सब के सब एक साथ क्रोधित हो कर लंका को जलाने के लिए चल पड़े। तीसरा भाव यह है कि जब पवनदेव ने देखा कि मेरे प्रिय पुत्र की पूँछ में आग लगा दी गयी है तो वे भी प्रभु से प्रेरणा लेकर प्रबल वेग से चल दिए। चौथा भाव यह कि प्रलय काल में उनचास मरुत गण प्रलय करने के लिए चलते हैं। प्रभु भक्त को पीड़ा पहुँचाने पर तो प्रलय ही आ जाना

चाहिए, इसलिए क्रोधित होकर मरुत गण प्रलय जैसी लीला करने के लिए चल पड़े।

एक भाव यह है कि हनुमानजी सोच रहे थे कि अब क्या करना चाहिए, प्रभु की क्या आज्ञा है। उस राक्षसी ने जो अपने स्वप्न की बात सुनाई थी, उसे ही सिद्ध करना है क्या? यह सोचकर प्रभु की आज्ञा लेने के लिए रामादल की ओर देखने लगे। तो प्रबल आज्ञा स्वरूप उनचास मरुत गण चलने लगे। यद्यपि मरुत गण देवराज इन्द्र की विमाता के पुत्र है। पुराणों में इन्हें कश्यप और दिति का पुत्र बतलाया गया है, जिसे इनके वैमात्रिक भाई इन्द्र ने गर्भ में ही सात खण्डों में काट दिया था। जब यह रोने लगे तब प्रत्येक को सात–सात खण्डों में काट दिया तो यह उनचास हो गए थे। वेदों में इनका स्थान अंतरिक्ष में बतलाया गया है। इनके अश्व का नाम प्रशित बतलाया गया है, लेकिन वह देवताओं के मित्र बन गए थे, इसलिए देवताओं की सहायतार्थ एक साथ चल पड़े।

इन मरुत गणों के नाम हैं–सत्त्वज्योति, आदित्य, सत्यज्योति, तिर्यग्ज्योति, सज्योति, ज्योतिष्मान, हरित, ऋतुजित, सत्यजित, सषेण, सेनजित, सत्यमित्र, अभिमित्र, हरिमित्र, कृत, सत्य, ध्रुव, धर्ता, विधर्ता, विधारय, ध्वान्त, धुनि, भीम, अभियु, साक्षिप, ईद्दक, अन्याद्दक, याद्दक, अन्याद्दक, प्रतिकृत ऋक्, समिति संरम्भ, ईद्दक्ष, पुरुष, अन्याद्दक्ष, चेतस, समिता, समिद्दक्ष, प्रतिद्दक्ष, मरुति, सरत, देव, दिश, यजुः, अनुद्दक, साम, मानुष और विश् (वायुपुराण अध्याय 67, श्लोक 123 से 130 तक)।

'**अट्टहास करके गर्जे**' का भाव यह है कि पहले "**भइ सहाय सारद मैं जाना**" (5/25/3) से सरस्वती की सहायता समझकर मुस्कराये थे और अब उनचास पवनों की सहायता मिली तब अट्टहास किया कि अब काम खूब अच्छा होगा। कार्य में विघ्न न पड़ जाए, इसलिए पहले मुस्कराए थे, फिर "**मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी**" (5/25/6) उस बहु हाँसी का बदला लेने के लिए अट्टहास किया। दूसरा भाव यह है कि अट्टहास कर गर्जे ताकि माता सीता को विश्वास हो जाए कि उनकी कृपा से मेरे लिए अग्नि शीतल हो गई है, मैं जल नहीं रहा हूँ, क्योंकि यदि जलता होता तो फिर हँसता कैसे? इसके साथ यह भी भाव था कि विप्र, सुर, संत आदि सभी को विश्वास हो जाए, आनंद आ जाए कि अब रावण का अंत होने वाला है, क्योंकि रावण को विस्मित करने के लिए कि यह (हनुमानजी) तो काल रूप धारण करके आया है।

रावण ने सीता माता को संताप दिया था, तो अब वह जान ले कि राम के भक्तों को संताप देने वाला तुरंत दुःख पाता है। श्रीराम नाम और रामभक्ति का प्रभाव देखे कि

अग्नि मुझे न जलाकर तेरे नगर को जला रही है। जो भगवान श्रीराम से विमुख हो उसे जलाने में संकोच नहीं करना चाहिए।

जरउ सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो राम पद करै न सहस सहाय।। (2/185)

श्री हनुमानजी पहले बन्धन से निकलने के लिए परम लघु हो गए थे और अब बढ़कर आकाश में जा लगे, जिससे राक्षस भय से निकट न आ सकें। उन्होंने भारी भयंकर स्वरूप धारण कर लिया। पहले एक अंग बढ़ाया– **''बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला'' (5/25/5)** और अब **''कपि बढ़ि लाग अकास''** अर्थात् पूँछ के योग्य शरीर को बड़ा कर लिया, ठीक उसी प्रकार जैसे कि :–

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा।। (5/2/9)

इस प्रकार से हनुमानजी ने अपना आकार अत्यधिक बड़ा कर लिया। जैसे लंका में राक्षस लोग हँसे थे और पूँछ में आग लगाकर कौतुक देखा था, तो श्री हनुमानजी ने वैसे ही अट्टहास किया, घर–घर में आग लगाई और सबको असली कौतुक दिखा दिया।

श्रीहनुमानजी ने जब लंका में प्रवेश किया तब अत्यंत छोटा रूप धारण किया था और लंका में आग लगाई तब विशालकाय रूप बनाया था। यह उन्हें प्राप्त अष्ट सिद्धियों से संभव हो सका। ये सिद्धियाँ तो उन्हें ईश्वर की कृपा से पहले से ही प्राप्त थीं, पर माता सीताजी के आशीर्वाद से अब वे इनके दाता भी बन गए। इसकी पुष्टि श्रीहनुमान चालीसा में की गई है :–

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता। अस वर दीन्ह जानकी माता।।

इन अष्ट सिद्धियों की विशेषता इस प्रकार से है :–

1. **अणिमा** : इससे शरीर को बहुत छोटा बनाया जा सकता है।
2. **महिमा** : इससे शरीर को बड़ा कर कठिन और दुष्कर कार्यों को आसानी से पूरा करने की सिद्धि प्राप्त होती है।
3. **लघिमा** : इस सिद्धि से शरीर छोटा होने के साथ–साथ हल्का भी बनाया जा सकता है।

4. **गरिमा** : शरीर का वजन बढ़ा लेने की शक्ति–अध्यात्म के नजरिए से अहंकार से दूर रहने की शक्ति भी मानी जाती है।

5. **प्राप्ति** : मनोबल और इच्छाशक्ति से मनचाही वस्तु पाने की सिद्धि।

6. **प्राकाम्य** : कामनाओं को पूरा करने और लक्ष्य पाने की सिद्धि।

7. **वशित्व** : वश में करने की सिद्धि।

8. **ईशित्व** : इष्ट सिद्धि और ऐश्वर्य सिद्धि।

अब मरुत गणों के संदर्भ में पुनः चर्चा करते हैं। मानव शरीर में प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान यह पाँच प्रधान वायु एवं नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनन्जय यह पाँच उप प्रधान वायु रहते हैं। इन दस प्राण वायु के भिन्न–भिन्न कार्य एवं स्थान इस प्रकार हैंः–

1. **प्राण** : इसका निवास स्थान हृदय है। श्वास बाहर निकालना, खाए हुए अन्न को पचाना इसका कार्य है।

2. **अपान** : इसका स्थान बड़ी आँत है। श्वास अंदर ले जाना, मल–मूत्र त्यागना, गर्भ बाहर निकालना इसके कार्य हैं।

3. **समान** : नाभि में रहता है। पचे हुए भोजन के रस को सब अंगों में बाँटना इसका कार्य है।

4. **उदान** : इसका निवास कंठ में होता है। जब भोजन करते हैं तब गाढ़े भाग और जल भाग को अलग–अलग करना इसका कार्य है। सूक्ष्म शरीर को स्थूल शरीर से बाहर निकालना और दूसरे लोक व दूसरे शरीर में ले जाना इसका काम है।

5. **व्यान** : इसका निवास स्थान सम्पूर्ण शरीर है। शरीर और उसके अंगों को फैलाना और सिकोड़ना इसका कार्य है।

6. **नाग** : इसका काम डकार लेना है।

7. **कूर्म** : इसका कार्य आँखों को खोलना व बंद करना है।

8. **कृकर** : इसका कार्य छींक लाना है।

9. **देवदत्त** : इसका कार्य जम्हाई लाना है।

10. **धनन्जय** : यह मृत्यु के बाद भी शरीर में रहता है, जिससे मृत शरीर फूल जाता है। एक ही प्राणवायु के भिन्न–भिन्न कार्यों के अनुसार अनेक भेद माने गए हैं।

उल्लेखनीय है कि वेदों में वायु की 7 शाखाओं के बारे में विस्तार से वर्णन मिलता है। अधिकतर लोग यही समझते हैं कि वायु तो एक ही प्रकार की होती है, लेकिन उसका रूप बदलता रहता है, जैसे कि ठंडी वायु, गर्म वायु और समान वायु, लेकिन ऐसा नहीं है। दरअसल, जल के भीतर जो वायु है उसका वेद–पुराणों में अलग नाम दिया गया है और आकाश में स्थित जो वायु है उसका नाम अलग है। अंतरिक्ष में जो वायु है उसका नाम अलग और पाताल में स्थित वायु का नाम अलग है। नाम अलग होने का मतलब यह है कि उसका गुण और व्यवहार भी अलग ही होता है। इस तरह वेदों में 7 प्रकार की वायु का वर्णन मिलता है। ये सात वायु इस प्रकार से हैं– 1. प्रवह, 2. आवह, 3. उद्वह, 4. संवह, 5. विवह, 6. परिवह और 7. परावह। इनके गुण–धर्म निम्नांकित हैं :–

1. **प्रवह :** पृथ्वी को लाँघकर मेघमंडलपर्यंत जो वायु स्थित है, उसका नाम प्रवह है। इस प्रवह के भी प्रकार हैं। यह वायु अत्यंत शक्तिशाली होती है और यही बादलों को इधर–उधर उड़ाकर ले जाती है। धूप और गर्मी से उत्पन्न होने वाले मेघों को यह प्रवह वायु ही समुद्र जल से परिपूर्ण करती है, जिससे ये मेघ काली घटा के रूप में परिणत हो जाते हैं और अतिशय वर्षा करने वाले होते हैं।

2. **आवह :** आवह सूर्यमंडल में बंधी हुई वायु है। इसी के द्वारा ध्रुव से आबद्ध होकर सूर्यमंडल प्रचालित है।

3. **उद्वह :** वायु की तीसरी शाखा का नाम उद्वह है, जो चन्द्रलोक में प्रतिष्ठित है। इसी के द्वारा ध्रुव से संबद्ध होकर यह चन्द्र मंडल का नियंत्रण करती है।

4. **संवह :** वायु की चौथी शाखा का नाम संवह है, जो नक्षत्र मंडल में स्थित है। ध्रुव से आबद्ध होकर सम्पूर्ण नक्षत्र मंडल इसी के प्रभाव से घूमता रहता है।

5. **विवह :** वायु की पाँचवीं शाखा का नाम विवह है और यह ग्रह मंडल में स्थित है। इसी के द्वारा ग्रह–चक्र ध्रुव से संबद्ध होकर घूमता रहता है।

6. **परिवह :** वायु की छठी शाखा का नाम परिवह है, जो सप्तर्षिमंडल में स्थित है। इसी के द्वारा ध्रुव से संबद्ध होकर सप्तर्षि आकाश में भ्रमण करते हैं।

7. **परावह :** वायु के सातवें स्कंध का नाम परावह है, जो ध्रुव में आबद्ध है। इसी के द्वारा ध्रुव चक्र तथा अन्यान्य मंडल एक स्थान पर स्थापित रहते हैं। इन्हीं सातों वायु के सात–सात गण हैं, जो निम्नांकित जगह में विचरण करते हैं :–

ब्रह्मलोक, इंद्रलोक, अंतरिक्ष, भूलोक की पूर्व दिशा, भूलोक की पश्चिम दिशा, भूलोक की उत्तर दिशा और भूलोक की दक्षिण दिशा। इस तरह 7 x 7 कुल 49 मरुत हो जाते हैं, जो देव रूप में विचरण करते रहते हैं।

भगवान की कृपा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है। उनकी प्रेरणा से ही सूर्य आदि ग्रह स्थिर या चलायमान हैं। मृत्यु व पवन आदि भी उन्हीं की प्रेरणा से अपना–अपना कार्य सम्पन्न करते हैं। इसीलिए जब हनुमानजी ने लंका को अग्नि के हवाले कर दिया तो भगवान की प्रेरणा से ही उनचास पवन चलने लगे, यथा :–

हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास।। (5/25)

अध्यापक–बेटा तेरी सोच ही तेरी कमाई है। ये 100 रुपए मेरे वादे के अनुसार और ये 100 रुपए और उधार दे रहा हूँ। जब कभी कमाओ तो लौटा देना। मेरी इच्छा है, तू इतना बड़ा आदमी बने कि तेरे सर पर हाथ फेरते वक्त मैं धन्य हो जाऊँ।

20 वर्ष बाद :– अचानक स्कूल के आगे जिला कलेक्टर की बत्ती वाली गाड़ी आकर रुकती है, स्कूल स्टाफ चौकन्ना हो जाता है। स्कूल में सन्नाटा छा जाता है। मगर ये क्या? जिला कलेक्टर एक वृद्ध अध्यापक के पैरों में गिर जाते हैं और कहते हैं – सर मैं, उधार के 100 रुपए लौटाने आया हूँ। पूरा स्कूल स्टॉफ स्तब्ध।

वृद्ध अध्यापक झुके हुए नौजवान कलेक्टर को उठाकर भुजाओं में कस लेता है और रो पड़ता है। **वक्त बदलते देर नहीं लगती। शहंशाह को फ़कीर और फ़कीर को शहंशाह बनते, देर नहीं लगती।**

करम प्रधान बिस्व करि राखा

श्री गोपाल कृष्ण फरलिया एवं श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी फरलिया
नई दिल्ली, फोनः 9810675219

इस अनन्त विश्व में हमारा दृश्य विश्व एक अणु के बराबर है। इस दृश्य विश्व में हमारी आकाश–गंगा एक कण के बराबर है। इस आकाश–गंगा में हमारा सौर–मण्डल एक कण के बराबर है। इस सौर–मण्डल में हमारी पृथ्वी एक बूँद के बराबर है। इस पृथ्वी में हम बूँद के बराबर हैं। हमारी पृथ्वी पर हमसे भी छोटे प्राणी, जैसे कि– छोटी–छोटी चींटियाँ एवं यहाँ तक की एक सैल के जीव विद्यमान हैं। इस अनन्त विश्व में तरह–तरह के प्राणी विद्यमान हैं। इन सबमें ईश्वर विद्यमान है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार :–

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।। (7/117/2)

इन सबके कार्यों का लेखा–जोखा उस परम शक्ति द्वारा रखा जाता है एवं तदनुसार प्रत्येक प्राणी को यथोचित परिणाम भुगतने होते हैं। गरुड़–पुराण एवं अन्य ग्रन्थों में वर्णन आया है कि मृत्यु के उपरान्त प्रत्येक प्राणी के सूक्ष्म शरीर को यमराज ले जाते हैं। इस सूक्ष्म शरीर में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार के साथ ईश्वरीय अंस रहता है और सभी संचित कर्मों का लेखा होता है। ईश्वर हमारे कर्मो के अनुसार यथोचित सुख–दुख आदि का प्रावधान करते हैं।

भगवान कर्मफल नहीं भोगते, क्योंकि वे कर्मबंधन से मुक्त हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार :–

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते।। (4/14)

अर्थात् श्रीकृष्णजी अर्जुन को कर्म का रहस्य समझाते हुए कहते हैं कि कर्मों के फल में मेरी स्पृहा नहीं है, इसलिए मुझे कर्म लिप्त नहीं करते–इस प्रकार जो मुझे तत्व से जान लेता है, वह भी कर्मों से नहीं बँधता।

श्रीरामचरितमानस में भगवान राम के अवतरण का आलेख कर्म–फल के अनुसार ही हुआ है। इसके कुछ उदाहरण श्रीरामचरितमानस के अनुसार इस लेख में वर्णित हैं।

(1) नारदमुनि द्वारा भगवान को शापित करना।

श्रीरामचरितमानस में वर्णन आया है कि जब नारद मुनि ने काम को जीत लिया, तब वे अपने अहंकार का प्रदर्शन करने के लिए भगवान शिव के पास गए। त्रिपुरारि को नारद मुनि ने पूरी कथा बताई। भगवान शिव ने नारदजी को समझाते हुए कहा कि वे भगवान विष्णु के सामने यह चर्चा न करें, किन्तु उन्होंने वह सब कथा प्रभु नारायण के सामने कह सुनाई। तब भगवान विष्णु ने नारदजी का हित चिन्तन करते हुए, उनके रास्ते में एक मायावी नगरी का निर्माण किया जिसके राजा की एक रूपवती बेटी का स्वयंवर होने जा रहा था। नारद मुनिजी उस नगर में गए और नगरवासियों से स्वयंवर का समाचार सुनकर कौतूहलवश, ईश्वरीय प्रेरणा से राजा के महल में गए। वहाँ राजा की सौन्दर्यमयी कन्या को और विशेषकर उसके गुण (हस्तरेखाओं में) देखकर वैराग्य भूलकर कन्या पर मोहित हो गए। श्रीरामचरितमानस में वर्णन आया है कि :–

जो एहि बरइ अमर सोइ होई। समरभूमि तेहि जीत न कोई।।
सेवहिं सकल चराचर ताही। बरइ सीलनिधि कन्या जाही।। (1/131/3–4)

इस प्रकार राजकन्या पर मोहित होकर, ऐसे रूप की प्राप्ति हेतु जिससे कि स्वयंवर में राजकुमारी उनका वरण कर ले। उन्होंने भगवान विष्णु से सहायता माँगी, पर भगवान ने उनके हित के लिए हरि (बंदर) का रूप दे दिया। जब राजकुमारी ने स्वयंवर में उनका भयानक रूप देखा तब आगे निकल गई। उस समय वहाँ उपस्थित शिवगणों ने हँसकर उनको जल में अपना रूप देखने को कहा। तब नारद मुनि ने अपना बन्दर का रूप देखकर दोनों गणों को शाप दिया कि जिसको श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार लिखा गया है :–

होहु निसाचर जाइ तुम्ह कपटी पापी दोउ।
हँसेहु हमहि सो लेहु फल बहुरि हँसेहु मुनि कोउ।। (1/135)

नारद मुनि का क्रोध शिवगणों को शाप देने के पश्चात् भी शान्त नहीं हुआ। अपना कपि रूप समाप्त होने पर भी भगवान को भी शाप देने चल पड़े, पर वे रास्ते में ही मिल गए। भगवान नारायण व लक्ष्मी रूपा राजकुमारी को साथ में देखकर उनका क्रोध चरम सीमा पर पहुँच गया और यह शाप दिया :–

कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।।
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी। नारि बिरहँ तुम्ह होब दुखारी।। (1/137/7–8)

तब प्रभु विष्णु ने नारद मुनि के शाप के अनुसार अवतार लिया, जिसका वर्णन श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार किया गया है :–

एक कलप एहि हेतु प्रभु लीन्ह मनुज अवतार।
सुर रंजन सज्जन सुखद हरि भंजन भुबि भार।। (1/139)

(2) मनु एवं शतरूपा को वरदान

मनु एवं शतरूपा को भगवान द्वारा वरदान रूपी आशीर्वाद दिया जाना भी श्रीरामजी के प्राकट्य का निमित्त रहा है। कथा इस प्रकार से है :–

वृद्धावस्था होने के पश्चात् भी मनु महाराज को विषयों से वैराग्य नहीं हुआ, तब एक दिन मनु महाराज को आत्मग्लानि हुई एवं उन्होंने अपने पुत्र को बरबस राज्य भार सौंप कर पत्नी सहित वन गमन किया। श्रीरामचरितमानस में इसका वर्णन इस प्रकार से आया है :–

बरबस राज सुतहि तब दीन्हा। नारि समेत गवन बन कीन्हा।। (1/143/1)

तब मनु महाराज एवं शतरूपा ने नैमिषारण्य में ईश्वर प्राप्ति के लिए घोर तप किया। भगवान ने प्रसन्न होकर उनसे वर माँगने को कहा। मनु महाराजजी ने उन्हीं (ईश्वर) के समान पुत्र माँगा। भगवान ने उनसे कहा कि सृष्टि में मेरा जैसा कोई नहीं है, अतः मैं ही स्वयं आपके पुत्र रूप में आऊँगा। रानी शतरूपा ने भी यही वर स्वीकार करते हुए यह वर और माँगा :–

जे निज भगत नाथ तव अहहीं। जो सुख पावहिं जो गति लहहीं।। (1/150/8)
सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति सोइ निज चरन सनेहु।
सोइ बिबेक सोइ रहनि प्रभु हमहिं कृपा करि देहु।। (1/150)

यह सुनकर भगवान ने कहा कि :–

अब तुम्ह मम अनुसासन मानी। बससु जाइ सुरपति रजधानी।।
तहँ करि भोग बिसाल तात गएँ कछु काल पुनि।
होइहहु अवध भुआल तब मैं होब तुम्हार सुत।। (1/151)

इस प्रकार से मनु–शतरूपा के शुभ कर्म और प्रेम से भगवान उनके पुत्र बने।

(3) सनकादिक ऋषियों का शाप

जय–विजय भगवान के वैकुण्ठ के दो द्वारपाल थे। एक समय सनकादिक मुनि वैकुण्ठ में श्रीनारायण से मिलने के लिए गए। द्वार पर जय और विजय द्वारपालों ने उन्हें अन्दर प्रवेश नहीं करने दिया, तब क्रोधित होकर उन्होंने दोनों को राक्षस होने का शाप दिया। प्रभु के समझाने पर ऋषियों ने कहा कि तुम दोनों बहुत शक्तिशाली राक्षस होंगे तथा प्रभु के हाथों ही तुम्हारा मरण होगा और तब तुम इस शाप से मुक्ति पा जाओगे। यह कथा भी कर्म के सिद्धांत को प्रतिपादित करती है।

(4) राजा प्रतापभानु को ब्राह्मणों का शाप

राजा प्रतापभानु ने पूरे विश्व के राजाओं को परास्त करके अपना राज्य स्थापित कर लिया था। श्रीरामचरितमानस में वर्णन आता है कि एक बार राजा प्रतापभानु आखेट के लिए वन को गए। वहाँ एक जंगली सुअर का पीछा करते हुए अपने सैनिकों से अलग होकर घने जंगल में पहुँच गए। उस समय रात्रि होने वाली थी कि तभी उन्होंने एक साधु की कुटिया देखी। उस कुटिया में राजा प्रतापभानु से पराजित एक राजा साधु भेष में रह रहा था। उन्होंने उस साधु से कहा कि उसे प्रभु कृपा से सब कुछ प्राप्त है, परन्तु वह अपना अखण्ड राज्य चाहता है। उस कपटी साधु ने कहा कि मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ, पर तुम्हें ब्राह्मणों को अपने वश में करना होगा। इस हेतु तुम्हें ब्राह्मण भोजन कराना होगा और जो–जो ब्राह्मण भोजन करेंगे और फिर उनके यहाँ जो–जो ब्राह्मण भोजन करेंगे, सभी तुम्हारे वश में हो जाएँगे और तब तुम इच्छानुसार जरा–मरण रहित अखण्ड राज्य कर सकोगे। कपटी साधु ने कहा कि आज से चौथे दिन वह आकर ब्राह्मणों के लिए भोजन बनाएगा। कपटी साधु ने भोजन में पशुओं और ब्राह्मणों का माँस मिला दिया। जब ब्राह्मण भोजन करने लगे तभी आकाशवाणी हुई कि ब्राह्मणो! इस भोजन में माँस मिला हुआ है, इसे खाओगे तो आपका धर्म भ्रष्ट हो जाएगा। तब ब्राह्मणों ने कुपित होकर राजा प्रतापभानु को परिवार सहित राक्षस हो जाने का शाप दिया :–

बोले बिप्र सकोप तब नहिं कछु कीन्ह बिचार।
जाइ निसाचर होहु नृप मूढ़ सहित परिवार।। (1/173)

फिर आकाशवाणी हुई कि ब्राह्मणो! माँस मिलाने में इस राजा का कोई दोष नहीं है, फिर भी उस शापवश वह राजा रावण बना, राजा का छोटा भाई अरिमर्दन बना कुम्भकर्ण और उसका मन्त्री धर्मरुचि हुआ रावण का सौतेला भाई विभीषण तथा राजा के पुत्र और

सेवक सभी राक्षस हुए। इस प्रकार से अपने किए का फल राजा प्रतापभानु के साथ उनके पूरे परिवार को भोगना पड़ा।

(5) श्रवणकुमार के माता–पिता द्वारा राजा दशरथ को शाप

जब श्रवणकुमार अपने अन्धे माता–पिता शांतनव व माता ज्ञानवती को तीर्थयात्रा कराने निकला, तब सरयू नदी के निकट उसके माता–पिता को प्यास लगी। श्रवणकुमार पानी लाने के लिए नदी पर पहुँचा। नदी से लोटे में जल भरने की आवाज हुई। अयोध्या के युवराज दशरथ ने जो कि शब्द–भेदी बाण चलाने में पारंगत थे, उस आवाज को किसी हिरण की आवाज समझकर तीर चला दिया। वह तीर श्रवणकुमार को लगा। तीर लगने पर जब श्रवणकुमार ने आह की आवाज की तब दशरथ को मनुष्य की आवाज सुनकर अपनी गलती का आभास हुआ। जब दशरथजी नदी किनारे पहुँचे तब उन्होंने तीर से आहत नवयुवक को देखा, जो श्रवण कुमार था। उसके बताने पर दशरथजी उसके अन्धे माता–पिता के पास पहुँचे। उसके माता–पिता ने दशरथजी को शाप दिया कि जैसे हम पुत्र–वियोग में तड़प–तड़प कर अपने प्राण छोड़ रहे हैं, उसी प्रकार तुम भी पुत्र–वियोग में तड़प–तड़प कर अपने प्राण छोड़ोगे। प्रभु ने पहले ही मनु महाराज को उनके कुल में जन्म लेने का वरदान दिया था। राजा दशरथ **अपने कर्मफल के अनुसार** रामचन्द्रजी के वियोग में तड़प–तड़प कर प्राण छोड़कर स्वर्ग सिधारे।

(6) सीताजी के जन्म का रहस्य

लक्ष्मीजी का अवतार प्रभु के अवतार के साथ ही निश्चित हो गया था। उनका अवतार कैसे हुआ, इस पर एक लोक कथा प्रचलित है। रावण के अत्याचारों से पीड़ित ऋषि मुनि त्रस्त हो गए थे। रावण के राक्षसों ने ऋषि–मुनियों को मारकर उनके रक्त को एक घड़े में संगृहीत कर लिया, तब आकाशवाणी हुई कि यही रक्त तुम राक्षसों की मृत्यु का कारण होगा। यह सुनकर राक्षसों ने डरकर उस घड़े को जनकपुर राज्य की जमीन में गाड़ दिया। जब जनकपुर में वर्षा के अभाव में भयंकर सूखा पड़ा, तब आकाशवाणी हुई कि यदि राजा जनक स्वयं हल चलायेंगे तब वर्षा होगी। राजा जनक ने स्वयं हल चलाया। हल के सीत (नुकीले भाग) से टकरा कर वह घड़ा टूट गया। तब उसमें से सीताजी का प्रादुर्भाव हुआ, जो कि रावण सहित सभी राक्षसों की मृत्यु का कारण बनी।

(7) सीताजी के गर्भावस्था में वन–गमन का कारण

एक लोक कथा के अनुसार जब सीताजी छोटी थीं, तब उन्होंने एक गर्भवती तोती को पकड़ लिया। तोती को बरबस एक सोने के पिंजरे में बन्द कर दिया। तोती ने मरते समय यह शाप दिया कि जिस अवस्था में तुमने मुझे तोते से वियोग करवाया है उसी तरह तुम भी ऐसी ही अवस्था में अपने पति से वियोग पाओगी। अगले जन्म में तोता–तोती अयोध्या में धोबी–धोबिन के रूप में पैदा हुए। धोबी के आक्षेप से गर्भवती सीताजी का श्रीरामचन्द्रजी को विवश होकर त्याग करना पड़ा। उन्होंने महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में आश्रय लिया तथा लव–कुश को जन्म दिया। अन्त में श्रीरामजी से मिलन होते ही, अपने ऊपर लगाए गए आपेक्ष को समाप्त कर तथा लव–कुश दोनों पुत्रों को श्रीरामजी को सौंपकर सीताजी भूमि की गोद में समा गईं।

इस प्रकार के कई प्रसंग जो श्रीरामचरितमानस में अथवा अन्य ग्रन्थों में वर्णित हैं, कर्म सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हैं। यहाँ तक कि भगवान ने भी कर्म–सिद्धान्त के अनुसार चरित/लीलाएँ की हैं। प्राणी जैसा कर्म करता है उसके अनुसार ही उसको फल भुगतना पड़ता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार यह सिद्धांत अकाट्य है कि :–

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा। (2/219/4)

....

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति की वार्षिक स्मारिका के लिए कई वर्षों तक निरंतर भक्ति–ज्ञान–वैराग्य के परिपूर्ण लेख प्रदान करने वाले डॉ0 राजाराम त्रिपाठी, चिचारा (जिला महोबा, उ0प्र0) मंगलवार चैत्र शुक्ल पूर्णिमा विक्रमी संवत् 2078 तदनुसार 27 अप्रैल 2021 को चिर निद्रा में लीन हो गए। उनकी दो पुस्तकें ''श्रीराम कथा'' एवं ''बात से ही ज्ञान भक्ति का प्रभात'' भी इस समिति के सौजन्य से प्रकाशित हुई हैं। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि सभी को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

कौन–कौन हैं सोचनीय

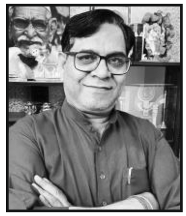

श्री विनोद शर्मा, पत्रकार, आजीवन सदस्य

श्रीराम वनगमन के पश्चात् महाराज दशरथ स्वर्ग सिधार गए। गुरु वसिष्ठ जी ने ननिहाल से भरतजी को बुलवाकर उनका दाह–संस्कार करवाया और शुभ दिन देखकर भरतजी एवं अन्य सभी सभासदों, रनिवास आदि को राजदरबार में बुलाकर सम्बोधित करते हुए भरतजी को समझाया कि महाराज दशरथ सोच करने योग्य नहीं हैं। सोचनीय वह है जो अपने कर्तव्य–पथ से हटकर अन्याय–अत्याचार करता है। समाज के चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास) तथा गृहस्थ आश्रम के चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र) सभी के धर्मों (कर्तव्यों) को बताते हुए उन्होंने कहा कि वे लोग धर्म–पथ त्यागने से किस प्रकार से सोचनीय होते हैं।

उन्होंने बताया कि सृष्टि की चौरासी लाख योनियों में केवल मनुष्य योनि ही कर्म योनि है और इस दुर्लभ मानव शरीर को पाकर जो ईश्वर का नहीं हो जाता अर्थात् भगवान को भूल जाता है, वह सभी प्रकार से सोचनीय है। इन्हीं तथ्यों का संक्षिप्त विवरण इस लेख में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

श्रीरामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड में समाज के सभी वर्गों के लिए सदाचरण हेतु उचित शिक्षा विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से उपलब्ध है। महारानी कैकेई के दो वरदानों के परिणामस्वरूप महाराज दशरथ को श्रीरामजी को वन जाने की मौन स्वीकृति देने के लिए बाध्य होना पड़ा, किन्तु श्रीराम विरह में उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए।

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम।। (2/155)

गुरु वसिष्ठ जी ने भरतजी को तुरन्त उनके ननिहाल से अयोध्या बुलवाया। भरतजी श्रीरामजी के वन–गमन का समाचार सुनकर इतने दुखी हुए कि उनको पिता–मरण भी उतना असहनीय नहीं लगा, क्योंकि इसमें वे स्वयं हेतु थे। महाराज दशरथ के अंतिम संस्कार के पश्चात् राजदरबार में गुरु वसिष्ठ जी ने सभी सभासदों, रनिवास और भरतजी को बुलवाया और उपदेश देते हुए भरतजी से कहा–

सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ।। (2/171)

गुरु जी ने भरतजी को समझाया कि महाराज दशरथ किसी प्रकार से सोचनीय नहीं हैं अर्थात् उनके देहावसान पर शोक करना उचित नहीं है, क्योंकि उन्होंने चौदह भुवनों में अपनी कीर्ति–पताका फहराई है। तुम्हारे पिता जैसा राजा न पहले कभी हुआ है और न अब भविष्य में होने वाला है। इसी संदर्भ में गुरु वसिष्ठ ने समाज के सभी वर्गों के लिए नीति बताई है कि कौन किस कारण से सोचनीय है। आश्रमों, वर्णों एवं अन्य वर्गों के लोग क्यों सोचनीय हैं, श्रीरामचरितमानस के अनुसार इस प्रकार से हैः–

1. **ब्रह्मचर्य आश्रमः–** प्राचीन शिक्षा प्रणाली के अनुसार लगभग आठ साल की उम्र के पश्चात् सभी वर्णों के लोग शिक्षा ग्रहण करने हेतु गुरुकुल जाते थे। वहाँ पर नैतिक तथा अपने–अपने वर्णानुसार काम–काज की शिक्षा प्रदान की जाती थी। यहाँ विद्यार्थियों को 'बटुक' नाम से संबोधित किया जाता था। यहाँ कड़े अनुशासन में रहकर गुरु आज्ञा का पालन करना अनिवार्य था। वह 'बटुक' सोचनीय कहा जाता था जो अपने व्रत अर्थात् शिक्षा ग्रहण पर ध्यान न देकर गुरु आज्ञा की भी अवहेलना करता था, यथा–

सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहिं गुर आयसु अनुसरई।। (2/172/8)

2. **गृहस्थ आश्रमः–** गृहस्थ आश्रम दूसरा आश्रम होता था। ब्रह्मचर्य आश्रम से सुसंस्कार एवं उचित ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य गृहस्थ आश्रम के कर्तव्यों का भलीभाँति पालन करता था। इस आश्रम को सुव्यवस्थित रूप से चलाने हेतु चार वर्णों की व्यवस्था की गई थी, यथा– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। वर्तमान समय में यह व्यवस्था अपने मूलरूप में लागू नहीं है, पर व्यवहार में पूरी तरह से लागू है। प्राचीनकाल में जन्म के अनुसार वर्ण व्यवस्था थी, पर आपसी प्रेम एवं सद्भाव था। छुआछूत की तो कोई बात ही नहीं थी, इसका प्रमाण महाराज जनक की राजधानी जनकपुरी के एक शूद्र के घर की सम्पदा से मिलता है, जिसे देखकर देवताओं का राजा इन्द्र भी चकित रह गया था, यथा–

जो संपदा नीच गृह सोहा। सो बिलोकि सुरनायक मोहा।। (1/289/8)

इतना ही नहीं शूद्र भी ज्ञानी, गुणवान और धर्मशील होते थे। श्रीरामचरितमानस के अनुसार जनकपुरी वासियों के संबंध में यह तथ्य था –

पुर नर नारि सुभग सुचि संता। धरमसील ग्यानी गुनवंता।। (1/213/6)

इस प्रकार से प्राचीनकाल में किसी भी वर्ण के व्यक्ति को हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता था, बल्कि समाज में सबको समान रूप से, अपने–अपने वर्ण के अनुसार सम्मान प्राप्त था। इस संदर्भ में गुरु वसिष्ठ जी कहते हैं कि वर्ण विशेष का व्यक्ति किस कारण से सोचनीय है, यथा–

2.1 **ब्राह्मणः–** वह ब्राह्मण जो वेद विहीन है अर्थात् जिसे वेद का ज्ञान नहीं है और अपने धर्म (कर्तव्य), विद्याध्ययन–अध्यापन आदि को त्यागकर विषय–भोग में संलिप्त है, सोचनीय है, यथा–

सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय लयलीना।। (2/172/3)

2.2 **क्षत्रियः–** सोचनीय है वह क्षत्रिय अर्थात् राजा (सामान्यतया क्षत्रिय ही राजा होते थे) जो नीति निपुण नहीं है और जिसे अपनी प्रजा प्राणों के समान प्रिय नहीं है, यथा–

सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना।। (2/172/4)

2.3 **वैश्यः–** वह वैश्य सोचनीय है जो धनवान होते हुए भी कंजूस है और जो अपनी कंजूसी के कारण अतिथि सत्कार तथा शिवजी की भक्ति करने में कुशल नहीं है, यथा–

सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू।। (2/172/5)

2.4 **शूद्रः–** वह शूद्र सोच करने योग्य है जो ब्राह्मणों का अपमान करने वाला, बहुत बोलने वाला, मान–बड़ाई चाहने वाला और ज्ञान का घमंड रखने वाला हो, यथा

सोचिअ सूद्रु बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी।। (1/172/6)

3. **वानप्रस्थ आश्रमः–** समाज में ब्रह्मचर्य और गृहस्थ आश्रमों के पश्चात् तीसरा आश्रम वानप्रस्थ होता था। इस आश्रम में सभी वर्णों के लोगों से अपेक्षा होती थी कि वन में तपस्या करने के उद्देश्य से जाने की तैयारी स्वरूप घर–गृहस्थी का भार अपनी संतान को सौंपकर घर में ही निर्लिप्त भाव से रहकर भोग विलास का परित्याग करते हुए तप करें। यहाँ तप का आशय अपने कर्तव्य पालन हेतु मिलने वाले कष्ट को सहन करने से है, अतः वह वानप्रस्थी (बैखानस) सोचने योग्य है जिसे तपस्या छोड़कर भोग अच्छे लगते हों, यथा–

बैखानस सोइ सोचै जोगू। तपु बिहाइ जेहि भावइ भोगू।। (2/173/1)

4 **संन्यास आश्रमः–** वानप्रस्थ के बाद चतुर्थ संन्यास आश्रम होता था, जिसमें लोग घर–बार छोड़कर वन में जाकर भगवत् भजन करते हुए जीवन का परम लक्ष्य मुक्ति या भक्ति प्राप्त कर लेते थे या इस परम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सुपात्र बन जाते थे। उस संन्यासी का सोच करना चाहिए जो अभी भी दुनिया के प्रपंचों में फँसा हुआ है और ज्ञान–वैराग्य से विहीन है। इसी प्रकार से वह गृहस्थ जो अपने कर्तव्यों को पूर्ण किए बिना संन्यास आश्रम में प्रवेश करता है, सोचनीय है, यथा–

सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिबेक बिराग।। (2/172)

5. **समाज का विशेष वर्ग**

5.1 **नारीः–** 'मनु स्मृति' के अनुसार जिस घर में स्त्रियों का सम्मान होता है, उस घर में देवता रमण करते हैं और जहाँ स्त्रियों का आदर नहीं होता, वहाँ सभी कर्म निष्फल हो जाते हैं, यथा–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

आधुनिक युग में हम आज नारी को समान अधिकार दिलाने की बात करते हैं, पर हमारे शास्त्रों के अनुसार नारी को समानता का नहीं, बल्कि उससे उच्चतर अधिकार प्राप्त था, पर शनैः–शनैः कुप्रथा ने उन्हें कुचक्र में फँसा दिया। नारी को जितना उच्चतर अधिकार प्राप्त था उतना ही उच्चतर उनका दायित्व भी था, क्योंकि उनके ऊपर दोनों कुलों (माता–पिता एवं सास–ससुर) की लाज का भार था। इसका प्रमाण मानस के अयोध्याकाण्ड में मिलता है जब महाराज जनक अपनी पुत्री सीता को तपस्विनी वेश में देखकर कहते हैं–

पुत्रि पबित्र किए कुल दोऊ। सुजस धवल जगु कह सबु कोऊ।। (2/287/2)

नारी के व्यवहार से ही घर स्वर्ग या नरक बनता है, क्योंकि उसमें वह शक्ति है कि वह पूरे परिवार के दिलों पर राज कर सकती है, पर यदि उसी का आचरण ठीक नहीं है तब फिर उस परिवार की सुख–शान्ति की रक्षा कोई नहीं कर सकता है। ऐसी ही नारी

के सम्बन्ध में गुरु वसिष्ठ जी कहते हैं कि उस स्त्री का सोच करना चाहिए जो अपने पति को छलने वाली, कुटिल, कलहप्रिय और स्वेच्छाचारिणी है, यथा–

सोचिअ पुनि पति बंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी।। (2/172/7)

5.2 **क्रोधीः–** क्रोध मनुष्य का परम शत्रु है श्रीमद्भगवगीता के अनुसार क्रोध से अत्यन्त मूढ़भाव उत्पन्न हो जाता है, मूढ़भाव से स्मृति में भ्रम हो जाता है, स्मृति में भ्रम हो जाने से बुद्धि का नाश हो जाता है और बुद्धि के नाश हो जाने से पुरुष अपनी स्थिति से गिर जाता है।

क्रोधात् भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृति विभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।। (गीता 2/63)

इसी प्रकार श्रीरामचरितमानस में भी क्रोधी व्यक्ति को जीवित मुर्दे के समान कहा गया है, यथा–

सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी।।
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सव सम चौदह प्रानी।। (6/31/3–4)

ऐसे ही व्यक्ति के लिए नीति है कि जो चुगलखोर हैं, बिना ही कारण क्रोध करने वाला, माता, पिता, गुरु एवं भाई–बन्धुओं के साथ विरोधभाव रखने वाला है, वह सोचनीय है।

सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुर बंधु बिरोधी।। (2/173/2)

5.3 **पर अपकारी–** 'समाज में कुछ लोग इस प्रवृत्ति के होते हैं कि अपनी हानि करके भी दूसरे का अपकार करते हैं। ये स्वयं चाहे नष्ट हो जाएँ, पर दूसरे को नष्ट करके ही दम लेते हैं, ठीक उसी प्रकार से जैसे ओले स्वयं नष्ट होकर कृषि को नष्ट कर देते हैं, यथा–

पर अकाजु लगि तनु परिहरहीं। जिभि हिम उपल कृषि दल गरहीं।। (1/4/7)

ऐसे ही लोगों के लिए कहा गया है कि जो दूसरों का अनिष्ट करता है, केवल अपने ही शरीर का पोषण करता है और बड़ा भारी निर्दयी है, वह सोचनीय है।

5.4 **हरि–विमुखः–** इस सृष्टि की चौरासी लाख योनियों में केवल मनुष्य योनि ही कर्म योनि है और सब केवल भोग योनियाँ हैं, जो जीव को उनके अनंत जन्मों के किए गए पाप–पुण्य का भोग कराती हैं। मानव शरीर से ही हम स्वर्ग या नरक अथवा परम पद की प्राप्ति कर सकते हैं। यह योनि एक ऐसी सीढ़ी है जिससे हम स्वर्ग को या नरक को अथवा परम पद को प्राप्त कर सकते हैं, जिससे जन्म–मरण के चक्र से भी मुक्ति मिल सकती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।।
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।।
(7 / 121 / 9–10)

ऐसे दुर्लभ मानव शरीर को प्राप्त कर जो सभी प्रकार के छल–कपट को छोड़कर हरि–भक्त नहीं होता वह सभी प्रकार से सोचनीय है, यथा–

सोचनीय सबहीं बिधि सोई। जो न छाड़ि छलु हरि जन होई।। (2 / 173 / 4)

इस प्रसंग का समाज के सभी वर्गों के लिए यह संदेश है कि हमें अपने–अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक पालन करते हुए ईश्वर में आस्थावान होकर जीवन के परम लक्ष्य परमात्मा की प्राप्ति हेतु समय रहते प्रयास करना चाहिए, यदि ऐसा न कर सके तो जीवनभर अशान्त रहते हुए मरणोपरान्त लोगों की भर्त्सना प्राप्त होगी और सोचनीय की श्रेणी में गिना जाएगा और यदि सत्कर्म करेंगे तो सोचनीय के स्थान पर स्मरणीय बन जाएँगे।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के आजीवन सदस्य श्री वेदप्रकाश शर्मा के पुत्र श्री विवेक भारद्वाज कोरोना महामारी के कारण चैत्र शुक्ल द्वादशी सम्वत् 2078 तदनुसार 24 अप्रैल 2021 को चिर निद्रा में लीन हो गए, वे 39 वर्ष के थे। पुत्र शोक में उनकी पत्नी श्रीमती प्रेमलता भी बैशाख कृष्ण दशमी सम्वत् 2078 तदनुसार 06 मई 2021 को स्वर्ग सिधार गई, वे 63 वर्ष की थीं। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

भक्तमती राक्षसी त्रिजटा

वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी, समिति के आजीवन सदस्य

श्रीरामचरितमानस के छोटे–से–छोटे पात्र भी विशेषता संपन्न हैं। इसके स्त्री पात्रों में त्रिजटा एक लघु स्त्री पात्र है। यह पात्र आकार में जितना ही छोटा है, महिमा में उतना ही गौरव मण्डित है। सम्पूर्ण 'मानस' में केवल सुन्दरकाण्ड एवं लंकाकाण्ड में सीता–त्रिजटा संवाद के रूप में त्रिजटा का वर्णन आया है, परन्तु इन लघु संवादों में ही त्रिजटा की भारी विशेषताएँ निखर उठी हैं। छोटे से वार्ता प्रसंग में भी सम्पूर्ण चरित्र को समास रूप से उद्भासित करने की क्षमता पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदासजी की विशेषता है। मानस के सुन्दरकाण्ड की एक चौपाई में त्रिजटा का स्वरूप इस प्रकार बतलाया गया है–

त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम चरन रति निपुन बिबेका।।(5/11/1)

प्रस्तुत पंक्ति त्रिजटा के चार गुणों को स्पष्ट करती है–

1. वह राक्षसी है। 2. श्री रामचरण में उसकी रति है। 3. वह व्यवहार निपुण और 4. विवेकशीला है। राक्षसी होते हुए भी रामचरणानुराग, व्यवहार कुशलता एवं विवेकशीलता जैसे दिव्य देवोपम गुणों की अवतारणा चरित्र में अलौकिकता को समाविष्ट करती है। सम्भवतः इन्हीं तीन गुणों के समाहार के कारण उसका नाम त्रिजटा रखा गया हो। संत कहते हैं इनके सिर पर ज्ञान, भक्ति और वैराग्य रूपी तीन जटाएँ हैं, अतः इनका नाम त्रिजटा है।

त्रिजटा रामभक्त विभीषणजी की पुत्री है। इनकी माता का नाम शरमा है। वह रावण की भ्रातृजा है। राक्षसी उसका वंश गुण है और रामभक्ति उसका पैतृक गुण। लंका की अशोक वाटिका में सीताजी के पहरे पर अथवा सहचरी के रूप में रावण द्वारा जिस स्त्री–दल की नियुक्ति होती है, त्रिजटा उसमें से एक है। अपने सम्पूर्ण चरित्र में सीताजी के लिये इसने परामर्शदात्री एवं प्राणरक्षिका का काम किया है। यही कारण है कि विरहाकुला और त्रासिता सीता ने त्रिजटा के सम्बोधन में माता शब्द का प्रयोग किया है यथा–

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी।।(5/12/1)

ऐसी शुभेच्छुका के लिये माँ शब्द कितना समीचीन है। त्रिजटा की रति राम–चरण में है। रामभक्त पिता की पुत्री होने के कारण इसका यह अनुराग पैतृक सम्पत्ति है और स्वाभाविक है। त्रिजटा के घर में निरंतर राम कथा होती है। अभी माता सीता से मिलने के थोड़ी देर पहले वह घर से आयी है, जहाँ हनुमानजी जैसे परम संत श्री विभीषणजी से रामकथा कह रहे थे।

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम।। (5/6)

राक्षसी होते हुए भी त्रिजटा को मानव–मनोविज्ञान का सूक्ष्म ज्ञान है। वह सीताजी के स्वभाव और मनोभाव को अच्छी तरह समझती है। वह यह भली भाँति जानती है कि सीताजी को सांत्वना के लिये और उनके दुखों को दूर करने के लिये रामकथा से बढ़कर दूसरा कोई उपाय नहीं है। सीताजी का विरह जब असह्य हो चला, तब मरणातुर सीताजी आत्मत्याग के लिये त्रिजटा से अग्नि की याचना करती हैं। सीताजी त्रिजटा से कहती हैं वह चिता बनाकर सजा दे और उसमें आग लगा दे, तो इस अनुरोध को वह बुद्धिमती रामभक्ता यह कहकर टाल देती है कि रात्रि के समय अग्नि नहीं मिलेगी और सीताजी के प्रबोध के लिये वह राम गुणगान का सहारा लेती है।

ज्ञान गुण सागर हनुमानजी ने भी जब अशोक वाटिका में सीता की विपत्ति देखी तो उनके प्रबोध के लिये उन्हें कोई उपाय सूझा ही नहीं, क्योंकि वे सीताजी के रूप और स्वभाव दोनों से ही अपरिचित थे। उन्होंने त्रिजटा प्रयुक्त विधि का ही अनुसरण किया। रावण त्रासिता सीताजी को राम सुयश सुनने से ही सांत्वना मिली थी, यह हनुमान जी ऊपर पल्लवों में बैठे देख रहे थे। त्रिजटा के चले जाने के बाद सीताजी और भी व्याकुल हो उठीं। तब उनकी शान्ति के लिये हनुमानजी ने भी श्रीराम की कथा सुनाई।

दानवी होने के कारण त्रिजटा में दानव मनोविज्ञान का ज्ञान तो था ही। दानवों का अधिक विश्वास दैहिक शक्ति में है और इसीलिये उन्हें कार्यविरत करने में भय अधिक कारगर होता है। सीताजी को वशीभूत करने के लिये रावण ने भय और त्रास का सहारा लिया था और तदनुसार राक्षसियों को ऐसा ही अनुदेश करके वह चला गया था। सीताजी का दुख दूना हो गया, क्योंकि राक्षसियाँ नाना भाँति के भयंकर रूप बनाकर उन्हें डराने धमकाने लगीं। व्यवहार–विशारद त्रिजटा के लिये ये असह्य हो गया। वर्जन के लिये उस पण्डिता ने विवेकपूर्ण एक युक्ति निकाली। उसने राक्षस मनोविज्ञान का सहारा लिया और

एक भयानक स्वप्न कथा की सृष्टि की। उसने सब राक्षसियों को बुलाकर कहा कि सभी सीताजी की सेवा करके अपना कल्याण कर लो। त्रिजटा ने उन राक्षसियों से कहा कि मैंने एक स्वप्न देखा है। स्वप्न में मैंने देखा कि एक बंदर ने लंका जला दी। राक्षसों की सारी सेना मार डाली गयी। रावण नंगा है और गधे पर सवार है। उसके सिर मुँड़े हुए हैं, बीसों भुजाएँ कटी हुई हैं। इस प्रकार वह दक्षिण (यमपुरी की) दिशा को जा रहा है और मानो लंका विभीषण ने पायी है। लंका में श्रीरामचंद्रजी की दुहाई फिर गयी। तब प्रभु ने सीताजी को बुलावा भेजा। पुकार कर (निश्चय के साथ) कहती हूँ कि यह स्वप्न चार (कुछ ही) दिनों में सत्य होकर रहेगा। उसके वचन सुनकर वे सब राक्षसियाँ डर गयीं और जानकीजी के चरणों पर गिर पड़ीं।

इस स्वप्न वार्ता से एक ओर जहाँ त्रिजटा का भविष्यदर्शिनी होना सिद्ध होता है, वहीं दूसरी ओर उसका व्यवहार निपुणा और विवेकिनी होना भी उद्‌घाटित होता है। भय दिखाकर दूसरे को वशीभूत करने वाली मण्डली को उसने भावी भय की सूचना देकर मनोनुकूल बना लिया। प्रत्यक्ष वर्जन में तो राजकोप का डर था, अनिष्ट की संभावना थी। उसने उन राक्षसियों को साक्षात् भक्तिरूपा सीताजी के चरणों में डाल दिया। यही तो भक्तों/संतों का स्वभाव है।

तासु बचन सुनि ते सब डरीं। जनकसुता के चरनन्हि परीं।।(5/11/8)

लंकाकाण्ड के युद्ध–प्रसंग में त्रिजटा की चातुरी का एक और विलक्षण उदाहरण मिलता है। राम रावण युद्ध चरम सीमा पर है। रावण घोर युद्ध कर रहा है। उसके सिर कट–कट कर पुनः जुड़ जाते हैं। भुजाओं को खोकर भी वह नवीन भुजावाला बन जाता है और श्रीराम के मारे भी नहीं मरता। अशोक वाटिका में त्रिजटा के मुँह से यह प्रसंग सुनकर सीताजी व्याकुल हो जाती हैं। श्रीरामचंद्र के बाणों से भी नहीं मरने वाले रावण के बन्धन से मुक्त होने की आशा त्याग देने को हो जाती हैं। त्रिजटा को परिस्थितिवश अनुभव होता है। वह सीताजी की मनोदशा को देखकर फिर प्रभु श्रीराम के बल का वर्णन करती हैं और सीता को श्रीराम की विजय का विश्वास दिलाती हैं। त्रिजटा ने कहा–'राजकुमारी! सुनो, देवताओं का शत्रु रावण हृदय में बाण लगते ही मर जाएगा। परन्तु प्रभु उसके हृदय में बाण इसलिये नहीं मारते कि उसके हृदय में जानकी जी (आप) बसती हैं। श्रीरामजी यही सोचकर रह जाते हैं कि इसके हृदय में जानकी का निवास है, जानकी के हृदय में मेरा निवास है और मेरे उदर में अनेकों भुवन हैं, अतः रावण के हृदय में बाण लगते ही

सब भुवनों का नाश हो जायेगा। यह वचन सुनकर सीताजी के मन में अत्यन्त हर्ष और विषाद हुआ यह देखकर त्रिजटा ने फिर कहा–सुन्दरी! महान सन्देह का त्याग कर दो। अब सुनो, शत्रु इस प्रकार मरेगा। सिरों के बार–बार कट जाने से जब वह व्याकुल हो जायेगा और उसके हृदय से तुम्हारा ध्यान छूट जायेगा, तब श्रीराम जी उसके हृदय में बाण मारेंगे और उसकी मृत्यु होगी।

ऐहि के हृदयँ बस जानकी जानकी उर मम बास है।
मम उदर भुअन अनेक लागत बान सब कर नास है।। (6/99/छंद)
काटत सिर होइहि बिकल छुटि जाइहि तव ध्यान।
तब रावनहि हृदय महुँ मरिहहिं रामु सुजान।। (6/99)

रावण हर क्षण जानकी जी को प्राप्त करने के बारे में उन्हें अपना बनाने के बारे में ही सोचता रहता, अतः हृदय में जानकी जी का ही विचार करता रहता। संतों ने सीता माँ को साक्षात् भक्ति ही बताया है। रावण भक्ति को जबरन अपने बल से प्राप्त करना चाहता है, परन्तु क्या भक्ति इस तरह प्राप्त होती है? भक्ति तो संतों के संग से, प्रभु लीला चिंतन एवं जानकी जी की कृपा दृष्टि से प्राप्त हो सकती है। जानकी माता ने तो कभी रावण की ओर दृष्टि तक नहीं डाली। रावण को पता था कि प्रभु से वैर करने पर उनके हाथों मृत्यु होगी तो मोक्ष प्राप्त हो जायेगा, परन्तु प्रभु चरणों की भक्ति नहीं प्राप्त होगी।

उल्लेखनीय है कि जानकी माता ने पुत्र कहकर हनुमानजी से और माता कहकर त्रिजटा से अपना सम्बन्ध जोड़ लिया। किशोरी जी की कृपा हो जाए तब राम भक्ति सुलभ है। हनुमान जी को और त्रिजटा को सीता माँ ने अखंड भक्ति का दान दिया है। सीताजी के प्राणों की रक्षा करने में और उनकी पीड़ा कम करने में हनुमानजी और त्रिजटा का मुख्य सहयोग रहा है। त्रिजटा अत्यंत भाग्यशाली रही कि राक्षसी होने पर भी उन्हें साक्षात् भक्ति श्री सीताजी का प्रत्येक क्षण संग मिला, सेवा मिली और प्रेम मिला। संत कहते हैं कि भगवान के पास देने के लिए सबसे छोटी वस्तु कोई है तो वह है मोक्ष और भगवान के पास देने के लिए सबसे बड़ी वस्तु कोई है तो वह है भक्ति। भगवान संसार की बड़ी से बड़ी वस्तु और भोग प्रदान कर अपना पीछा छुड़ा लेते हैं, परन्तु अपने चरणों की अविचल भक्ति नहीं देते। नारी भक्ताओं का चरित्र हमेशा ही सर्वश्रेष्ठ रहा है, लंका में **सर्वश्रेष्ठ भक्ता त्रिजटा है** ऐसा संतों का मत है।

....

सुमिरि पवनसुत पावन नामू

गोसेवक गोपालकृष्ण पण्ड्या, उज्जैन (म.प्र.), मो0–9826500263

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने वंदना प्रकरण में लिखा है कि पवनपुत्र श्रीहनुमानजी ने श्रीराम नाम का स्मरण (जप–कीर्तन) करके श्रीरामजी को अपने वश में कर रखा है :–

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

उत्तरकाण्ड में गोसाईंजी लिखते हैं कि उनके मन में ऐसा विश्वास है कि श्रीरामजी से उनके 'दास' का महत्व अधिक है :–

मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा।। (7/120/16)

इस प्रकार श्रीहनुमानजी महाराज का महत्व और बढ़ जाता है। उनके भजन–स्मरण से श्रीरामजी को (उनकी कृपा को) प्राप्त किया जा सकता है। हनुमान चालीसा में इसकी पुष्टि इस प्रकार से की गई है :–

तुम्हरे भजन राम को पावै। जनम जनम के दुख बिसरावै।।

ऐसे रामभक्त–रामप्रिय श्रीहनुमानजी के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस में वर्णित कुछ प्रसंगों पर इस लेख में चर्चा की गई है।

रावण के अत्याचार से त्रस्त पृथ्वी, देवगण (ब्रह्माजी एवं शिवजी सहित) ऋषि–मुनि आर्त्त भाव से अखिल ब्रह्माण्डनायक की स्तुति करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप आकाशवाणी होती है कि :–

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा।।
कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुँ मैं पूरब बर दीन्हा।।
ते दसरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरीं प्रगट नर भूपा।।
तिन्ह कें गृह अवतरिहउँ जाई। रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई।।
नारद बचन सत्य सब करिहउँ। परम सक्ति समेत अवतरिहउँ।। (1/187/1,3–6)

सीता–हरण के पश्चात् श्रीराम–लक्ष्मण, भक्तिमती शबरी द्वारा बताए गए मार्ग के अनुसार जब ऋष्यमूक पर्वत की ओर बढ़ रहे थे, तब वहाँ अपने मंत्रियों सहित (जिनमें श्रीहनुमानजी भी थे) निवास कर रहे सुग्रीव ने हनुमानजी को उनका पता लगाने के लिए विप्र वेश में भेजा। श्रीहनुमानजी ने उनसे परिचय पूछा तो श्रीरामजी ने बताया कि वे अवध नरेश महाराज दशरथ के पुत्र हैं, मेरा नाम राम और ये मेरे छोटे भाई लक्ष्मण हैं। यहाँ वन में राक्षस ने मेरी भार्या का हरण कर लिया है और हम उन्हें खोजते फिर रहे हैं। तत्पश्चात् श्रीरामजी ने विप्र वेशधारी हनुमानजी से उनका परिचय पूछा। इसके पहले कि हनुमानजी अपना परिचय बताते वे श्रीरामजी के चरणों में गिर पड़े, क्योंकि उन्होंने उस आकाशवाणी का स्मरण करके प्रभु को पहचान लिया। आकाशवाणी के द्वारा भगवान ने कहा था कि वे महाराज दशरथ के यहाँ अंशों सहित चार पुत्रों के रूप में जन्म लेंगे और नारद का शाप सत्य करेंगे। नारदजी ने यही तो शाप दिया थाः–

बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा। सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा।।
कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।।
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी। नारि बिरहँ तुम्ह होब दुखारी।।(1/137/6–8)

इस प्रकार से श्रीहनुमानजी को पूर्ण विश्वास हो गया कि यही अखिल ब्रह्माण्ड नायक के अवतार हैं, हालाँकि उन्हें उनके रूप को देखकर पहले ही संदेह हो गया था, तभी तो उन्होंने यह प्रश्न किया था :–

जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार।। (4/1)

इस प्रकार से जब श्रीहनुमानजी को पूर्ण विश्वास हो गया, तब वे श्रीरामजी के चरणों में गिर पड़े :–

प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना।
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना।। (4/2/5–6)

श्रीहनुमानजी श्रीरामजी के चरणों में पड़े हुए हैं, वे आनंद–मग्न हैं, शिवजी कहते हैं कि हे उमा! उस सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि श्रीहनुमानजी तो शिवजी का ही अंशावतार हैं, ''संकर सुअन केसरी नंदन (हनुमान चालीसा)'', अतः उस सुख का अनुभव उन्होंने स्वयं किया था। अब दृश्य देखिए–श्रीहनुमानजी चरणों में पड़े हैं

श्रीरामजी के, पर वे उठा नहीं रहे हैं क्योंकि अभी भी वे विप्र वेश में हैं और श्रीरामजी को कपट पसंद नहीं है, अब दृश्य बदला, ''**निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई (4/3/5)।**'' यह देखकर श्रीरामजी ने उन्हें तुरंत उठाकर हृदय से लगा लिया :-

तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा।। (4/3/6)

श्रीरामजी ने कहा कि हे कपि! सुनो, मन में ग्लानि मत मानना (मन छोटा न करना)। तुम मुझे भाई लक्ष्मण से भी दूने प्रिय हो। सब कोई मुझे समदर्शी कहते हैं (मेरे लिए न कोई प्रिय है न अप्रिय), पर मुझे सेवक प्रिय है, क्योंकि वह अनन्यगति होता है (मुझे छोड़कर उसे कोई दूसरा सहारा नहीं होता।

समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ।।(4/3/8)

श्रीहनुमानजी अपनी पीठ पर बैठाकर श्रीराम-लक्ष्मण को सुग्रीव के पास ले जाते हैं और उनसे मित्रता कराके सुग्रीव को, बालि-वध के पश्चात् राजपाट मिल जाता है। गोसाईंजी हनुमान चालीसा में लिखते हैं :-

तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा। राम मिलाइ राज पद दीन्हा।।

राजपाट पाकर सुग्रीव विलासता में इतने डूब गए कि वे रामकाज (सीतान्वेषण) भूल गए, तब श्रीहनुमानजी ने विचार किया :-

इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा। राम काजु सुग्रीवँ बिसारा।।
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा। चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा।।
सुनि सुग्रीवँ परम भय माना। बिषयँ मोर हरि लीन्हेउ ग्याना।।
अब मारुतसुत दूत समूहा। पठवहु जहँ तहँ बानर जूहा।। (4/19/1-4)

तत्पश्चात् श्रीलक्ष्मणजी का क्रोध झेलकर सुग्रीव श्रीरामजी से मिलकर क्षमायाचना करते हैं और सीतान्वेषण हेतु चारों दिशाओं में वानर दल भेजे। दक्षिण की ओर जाने वाले वानर दल का नेतृत्व श्रीअंगदजी ने किया। इसी दल में श्रीहनुमानजी थे। इस दल के सभी वानर जब श्रीरामजी को प्रणाम करके चल दिए, तब :-

पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।।
बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।। (4/23/9-11)

इस यात्रा में जब सभी वानर प्यास से व्याकुल हो जाते हैं, तब श्रीहनुमानजी सभी को एक गुफा के अंदर ले जाते हैं और वहाँ पर एक तपस्विनी की सहायता से भूख–प्यास से तृप्त होकर गुफा से बाहर आकर समुद्र तट पर पहुँच जाते हैं। वहाँ सम्पाती की सलाह से समुद्र पार जाने का साहस करते हैं, पर कोई भी वानर इस कार्य हेतु अपने को सक्षम नहीं पाता है। श्रीहनुमानजी तो अपने स्वभाव के अनुसार एक ओर बैठकर श्रीरामनाम जपने में मग्न थे, तब जामवंतजी उनसे कहते हैं :–

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहहु बलवाना।।
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।।
कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।। (4/30/3–5)

यह सब सुनकर (अपनी प्रशंसा सुनकर) श्रीहनुमानजी ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की, तब श्रीजामवंतजी ने कहा :–

राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्बताकारा।। (4/30/6)

श्रीजामवंतजी के परामर्श के अनुसार वे लंका जाते हैं और वहाँ सीताजी का पता लगाते हैं। जब रावण के महल में भी सीताजी न दिखीं, तब रामभक्त विभीषणजी से भेंट होती है। उन्हें श्रीराम काज करने का संकेत देकर उन्हीं की बताई युक्ति से सीताजी का दर्शन करते हैं, उनसे आशीर्वाद प्राप्त करके, त्रिजटा के स्वप्न की बात को सच करने हेतु फल खाने के बहाने अशोक वाटिका उजाड़ देते हैं। मेघनाद द्वारा बंदी बनाए जाने पर रावण के दरबार में जाकर उसे उचित सलाह देते हैं, जिससे क्रोधित होकर रावण उनकी पूँछ में आग लगाने की आज्ञा देता है। इसी से वे लंका को जलाकर पुनः सीताजी से मिलकर वापिस वानर दल में आकर श्रीरामजी को सब समाचार सुनाते हैं। श्रीरामजी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने यह कह दिया कि हे पुत्र हनुमान! मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता।

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं।। (5/32/7)

श्रीराम–रावण युद्ध में श्रीहनुमानजी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब मेघनाद द्वारा श्रीलक्ष्मणजी को शक्ति लग जाती है, तब वे वैद्य सुषेण को भवन सहित लंका से उठाकर लाते हैं और उनकी सलाह से संजीवनी बूटी लाकर श्रीलक्ष्मणजी की चेतना लौटाते हैं। गोसाईंजी हनुमान चालीसा में लिखते हैं :–

लाइ सजीवन लखन जियाये। श्रीरघुबीर हरषि उर लाये।।

रावण–वध के पश्चात् इसकी सूचना देने हेतु श्रीरामजी सीताजी के पास श्रीहनुमानजी को ही भेजते हैं, तब सीताजी उनसे कहती हैं :–

अति हरष मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा।
का देउँ तोहि त्रिलोक महुँ कपि किमपि नहिं बानी समा।। (6/107/छंद)

श्रीरामराज्य में सभी सुखी और सम्पन्न थे। उस समय भी श्रीहनुमानजी अपने स्वामी श्रीरामजी के परम निकट थे। एक बार श्रीरामजी अपने भाइयों और श्रीहनुमानजी के साथ एक उपवन में गए। वहाँ पर सनकादि ऋषि पधारे। श्रीरामजी ने उनका स्वागत किया। उनके जाने के पश्चात् सभी भाई श्रीरामजी से कुछ पूँछना चाहते थे, पर संकोचवश कह नहीं पा रहे थे, तब उन्होंने मारुतिनंदन का ही सहारा लिया। श्रीरामजी कहते हैं :–

अंतरजामी प्रभु सभ जाना। बूझत कहहु काह हनुमाना। (7/36/4)

तब श्रीहनुमानजी कहते हैं :–

नाथ भरत कछु पूँछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं।। (7/36/6)

इस प्रकार श्रीहनुमानजी की यशगाथा अपार है। देश–विदेश में सभी जगह लोगों ने अपनी–अपनी भाषा–शैली में श्रीहनुमानजी का यश–गान किया है।

मालवा की माटी में भी हजारों वर्षों से श्रीरामजी के सच्चे सेवक के रूप में लोककथाओं, लोकगीतों में श्रीहनुमानजी की वंदना होती है, मालवा के गाँव–गाँव में बच्चों के मुँह से भी शौर्य गाथाओं में श्रीहनुमानजी, बालाजी, बजरंगी आदि नामों से उनकी कथाओं का वर्णन आता है। इस संदर्भ में एक मालवी गीत उल्लेखनीय है :–

जै श्रीबालाजी माराज, अनोखी थॉकी झाँकी।
थारे माथे मुकुट बिराजे, राजे काना में कुण्डल।
राजे बाबा गले बेजन्तीमाल, अनोखी थॉकी झाँकी।।
थारे केसर तिलक बिराजे, नैनामें सुरमों छाजे।
बाबा मुखमें नागर पान, अनोखी थॉकी झाँकी।।
थारे अंगज चोलो सोवे, चोला पे झलक बिराजे।
बाबा रोम रोम में राम, अनोखी थॉकी झाँकी।।
थारे बहयाँ बाजू बंध, सोहे हाथा में घड़ियॉ।
बाबा घोंटा की बलिहारी, अनोखी थॉकी झाँकी।।
थारे पाँव पंजनीयाँ सोहे, हाथों में लडुवां सोहे।
बाबा चलगत की बलिहारी, अनोखी थॉकी झाँकी।।

....

दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई

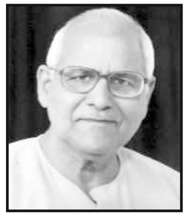

श्री रामजन्म सिंह,
ग्राम व पोस्ट–दामा, जिला–आजमगढ़, उ.प्र., फोन–9839453851

श्रीरामजी जब से अपने तीनों भाइयों सहित विवाह के पश्चात् जनकपुरी से अयोध्या आए, तभी से सर्वत्र नित नव मंगल और प्रसन्नता प्रसृत हो रही थी और श्रीराम राज्याभिषेक की भी तैयारी होने लगी अर्थात् सोने में सुहागा, किंतु उनसे अत्यधिक प्रेम करने वाली माता कैकेयी द्वारा महाराज दशरथ से थाती के रूप में रखे गए दो वरदान माँगने से अवध में कोहराम मच गया था। यहाँ तक कि माता कैकेयी को दोषी ठहराते हुए निषादराज का यह कथन था :–

कैकयनंदिनि मंदमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह।
जेहिं रघुनंदन जानकिहि सुख अवसर दुखु दीन्ह।। (2/91)

दूसरी ओर स्वयं श्रीरामजी चित्रकूट में भरतजी एवं उनके द्वारा वहाँ पर ले गए सम्पूर्ण समाज के समक्ष कहते हैं कि :–

दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई।। (2/263/8)

उपर्युक्त दोहे और चौपाई में कैकेयी अम्बा के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी बातें कही गई हैं। एक ओर निषादराज कैकेयी की कटु आलोचना करते हैं, दूसरी ओर श्रीरामजी कैकेयी को निर्दोष बताते हैं। दोनों परस्पर विरोधी बातें हैं, सही किसे माना जाए? इस संदर्भ में कुछ विचार प्रस्तुत हैं :–

कैकेयी वन्दनीया अथवा निन्दनीयाः–

घटना क्रम की दृष्टि से प्रतीत होता है कि कैकेयी अत्यंत गरिमामयी रहीं, किंतु मंथरा ने उन्हें परिवर्तित कर दिया। महारानी कैकेयी का व्यक्तित्व बड़ा अद्भुत था, उनके विषय में परस्पर विरोधी धारणाएँ प्रचलित हैं। महारानी का चरित्र गुण–अवगुण का मिश्रण है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने मानस में संतों की वंदना के साथ असन्तों की भी वन्दना की है, तो फिर दोनों में क्या अन्तर है, वह भी मानस में बताया गया है, यथा :–

सम प्रकास तम पाख दुहुँ नाम भेद बिधि कीन्ह।
ससि सोषक पोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह।। (1/7ख)

एक मास में दो पक्ष होते हैं– कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष। क्या कृष्ण पक्ष में केवल अंधेरा ही होता है और क्या शुक्ल पक्ष में केवल प्रकाश ही होता है? सत्य यह है कि प्रत्येक पक्ष में प्रकाश–अंधकार दोनों बराबर मात्रा में होते हैं, फिर नाम कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष क्यों रखे गए? कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा क्रमशः घटने लगता है और शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा का प्रकाश धीरे–धीरे बढ़ता जाता है और फिर पूर्णिमा की तिथि आती है। दोनों पक्ष का अन्तर यह है कि एक में प्रकाश से अंधकार की ओर जा रहे हैं, दूसरे में अंधकार से प्रकाश की ओर जा रहे हैं। संत और असंत का अन्तर भी केवल यही है।

कैकेयी का जीवन विरोधाभासों से भरा हुआ है। अच्छाई–बुराई का मिश्रण है। रामायण के दो सर्वश्रेष्ठ पात्र हैं–राम और भरत। एक ने कैकेयी की निंदा की, दूसरे ने प्रशंसा की। दोनों में इस विषय में मतभेद है।

भरत द्वारा कैकेयी की निंदा– भरत ने कैकेयी को जीवनभर माँ नहीं कहा। दशरथ से दो वरदान माँगने की बात सुनकर भरत ने यहाँ तक कह दिया :–

बर मागत मन भइ नहिं पीरा। गरि न जीह मुहँ परेउ न कीरा।। (2/162/2)

इसी तरह चित्रकूट की सभा में भी गुरु वसिष्ठ, निषादराज, अयोध्यावासी सभी ने कैकेयी को कुटिल बताया, क्योंकि उसने श्रीरामजी को वनवास देकर महान अनर्थ किया। जब भरत से किसी ने पूछा कि श्रीराम कैकेयी की प्रशंसा कर रहे हैं, तब उनका उत्तर था, श्रीरामजी कैकेयी के गुण देखकर नहीं, बल्कि अपने स्वभाव के कारण प्रशंसा कर रहे हैं। कैकेयी के चरित्र में एक बड़ी विचित्रता है–कौसल्या और सुमित्रा आदि से अन्त तक वंदनीय हैं, पर कैकेयी प्रारम्भ में वन्दनीय, मध्य में निंदनीय परन्तु अंत में फिर वंदनीय हैं। उनके चरित्र में यह विरोधाभास है। दशरथजी का विवाह कौसल्या–सुमित्रा से धर्म पद्धति से हुआ, पर कैकेयी की सुन्दरता का वर्णन सुनकर दशरथ विवाह के लिए उत्सुक थे, किंतु कैकय नरेश ने पुत्री के विवाह में शर्त रखी कि मेरी कन्या से जो पुत्र होगा, वही अयोध्या का राजा बनेगा। सूर्यवंश की परम्परा में ज्येष्ठ पुत्र राजा होता है। सौन्दर्य के प्रति आसक्ति के कारण दशरथ ने शर्त स्वीकार कर ली। विवाह में कन्यादान के साथ मंथरा दासी का दान अनर्थ का कारण बना। सरस्वतीजी द्वारा बुद्धि भ्रमित करने के कारण मंथरा अपयश की पिटारी, कुटिल शिरोमणि सेविका बन गई। उसका लक्ष्य था राम राजा न बने। उसे दिन में भोजन अच्छा नहीं लगता था, रात में नींद नहीं आती थी। कैकेयी से उसने भूमिका बांधी और कहा अयोध्या में बड़ा षड्यंत्र चल रहा है, अनर्थ होने वाला है, वह यह कि सौत

के पुत्र का राज्याभिषेक। वास्तविकता यह है कि **"गई गिरा मति फेरि" (2/12)**। कैकेयी की आड़ में मंथरा, मंथरा की आड़ में सरस्वती और सरस्वती की आड़ में सूत्रधार श्रीराम हैं। मंथरा ने महारानी को सुझाव दिया, गहने उतार कर कोप भवन में जाओ और कहा :–

दुइ बरदान भूप सन थाती। मागहु आजु जुड़ावहु छाती।। (2/22/5)

इन्हीं दो वरदानों के कारण सब अनर्थ हुआ। अयोध्या वीरान हो गई। इस संदर्भ में कैकेयी का चरित्र निर्दयता–निष्ठुरता की पराकाष्ठा है। दो वरदान माँगे, एक था भरत को राज्य और दूसरा था :–

तापस बेष बिसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी।। (2/29/3)

इसे यदि पूरा न किया गया तो यह धमकी दी थी :–

होत प्रातु मुनिबेस धरि जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर अजस नृप समुझिअ मन माहिं।। (2/33)

श्रीरामजी द्वारा कैकेयी की प्रशंसा :– चित्रकूट की सभा में श्रीराम ने शुरू में भरत की प्रशंसा की, जब सभी श्रोता प्रशंसा के रस में डूब गए, तब प्रभु ने कहा संत भरत को जन्म देने वाली माता कैकेयी को छोड़कर और कोई वंदनीय है क्या? जिस माँ ने भरत जैसे महात्मा को जन्म दिया, क्या वह निंदा की पात्र हो सकती है? कैकेयी के लिए जननी शब्द का प्रयोग किया गया है। उल्लेखनीय है कि श्रीरामचरितमानस में जहाँ कैकेयी की निंदा की गई तो वहाँ पर कैकयनंदिनी कहा गया और जब प्रशंसा की गई तब ''भरत मातु'' का प्रयोग किया गया है।

श्रीराम वन जाते समय माता कौसल्या से एक बार मिले, परन्तु कैकेयी से दो बार मिले और सुमित्रा से मिले ही नहीं। राम से किसी ने पूछा आप सुमित्रा से मिलने क्यों नहीं गए? प्रभु का उत्तर था–यदि किसी से कर्ज लिया हुआ हो, फिर नया कर्ज लेना पड़े तो कौन निर्लज्ज होगा कि वह धनी के सामने जाकर नया कर्ज माँगे। मैं सुमित्रा माँ का इतना ऋणी हूँ कि मेरा साहस नहीं कि माँ से कहूँ तुम अपना बेटा मुझे दे दो। राम आदि से अंत तक कैकेयी को सम्मान देते हैं। चाहे वन यात्रा का प्रसंग हो, चाहे चित्रकूट में, सर्वप्रथम कैकेयी को हृदय से लगाया। **"प्रथम राम भेंटी कैकेई" (2/244/7)।** मर्यादा की दृष्टि से पहले बड़ी माँ को प्रणाम करना चाहिए था, पर रामजी ने सर्वप्रथम राजमाता को प्रणाम किया, क्योंकि माँगे गए वरदान के अनुसार उस समय अयोध्या के राजा भरत थे।

लंका विजय के पश्चात् अयोध्या लौटने पर विमान से उतरकर देखा कि कैकेयी लज्जा–संकोच के कारण सामने नहीं आयीं, तब :–

प्रभु जानी कैकेई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी।। (7/10/1)

सर्वप्रथम कैकेयी को प्रणाम कर कहा 'माँ आज विश्व में मेरी जय ध्वनि हो रही है, वह तुम्हारी कृपा का परिणाम है। तुम यदि मुझे वन न भेजतीं तो रावण–वध नहीं होता। मुझे इतना श्रेय कैसे मिलता?

भरत ने भी प्रत्यक्ष रूप से माता का परित्याग कभी नहीं किया, चित्रकूट जाते समय साथ ले गए। दशरथ की मृत्यु के बाद तीनों रानियाँ सती होना चाहती थीं, भरत ने सती होने से रोक दिया। कैकेयी के कारण अयोध्या अनाथ हो चुकी थी, उसने सूर्यवंश पर कलंक लगा दिया था, फिर भी भरत ने उन्हें सती होने से रोका था।

कैकेयी को वरदान देने का कारणः– बड़ा विलक्षण प्रसंग है–देवासुर संग्राम में दशरथ देवों की सहायता के लिए गए, तब कैकेयी भी युद्ध में दशरथ के साथ थीं। राजा के रथ के पहिए की कील निकलने पर कैकेयी ने अपनी दो अंगुली लगाकर रथ को गिरने से रोक लिया। इस कार्य से प्रसन्न होकर राजा ने दो वरदान मांगने को कहा। **यही दो वरदान राजा के प्राण लेवा बने**, हालाँकि राम वन गमन रोकने के लिए दशरथजी पत्नी के पैरों पर भी गिर पड़े, यथा :–

गहि पद बिनय कीन्ह बैठारी। जनि दिनकर कुल होसि कुठारी।। (2/34/6)

दशरथजी की मृत्यु के बाद जब भरत ननिहाल से आए और कैकेयी के महल में गए और उन्होंने सब ओर सन्नाटा देखा तब माँ से पूछा :–

कहु कहँ तात कहाँ सब माता। कहँ सिय राम लखन प्रिय भ्राता।। (2/159/8)

पूरा वृत्तांत सुनकर भरत मुर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े :–

भरतहि बिसरेउ पितु मरन सुनत राम बन गौनु।
हेतु अपनपउ जानि जियँ थकित रहे धरि मौनु।। (2/160)

इस प्रकार से एक ओर कैकेयी श्रीरामजी को वनवास देने के कारण निंदनीय हैं तो दूसरी ओर भरत जैसे संत की माँ होने से वंदनीय हैं। इस संदर्भ में निर्णय लेना अत्यंत

दुष्कर है, तथापि विनय पत्रिका का पद सं0 174, इस परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय है :–

जाके प्रिय न राम वैदेही।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही।।1।।
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो कंत ब्रज–बनितन्हि, भये मुद–मंगलकारी।।2।।
नाते नेह रामके मनियत सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जो फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं।।3।।
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रानते प्यारो।
जासों होय सनेह राम–पद, एतो मतो हमारो।।4।।

एक सिद्धांत है कि अगर कोई ठोकर खाकर गिर जाए तो उसकी निंदा या उपहास न करके उसे उठाने का प्रयास करना चाहिए, श्रीरामजी ने माँ कैकेयी के साथ इसी सिद्धांत के अनुसार व्यवहार किया। इस परिप्रेक्ष्य में सर्वप्रथम तथ्य तो यह है कि वनवास प्रकरण श्रीरामजी की इच्छा से हुआ, देवगुरु बृहस्पति इंद्र को समझाते हुए यही कहते हैं:–

तब किछु कीन्ह राम रुख जानी। अब कुचालि करि होइहि हानी।।(2/218/3)

इस प्रसंग में एक और सिद्धांत लागू होता है और वह है :–

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।। (1/128/1)

यह भी विधान है कि कोई अपनी भूल पर पश्चात्ताप कर ले, तो पश्चात्ताप की अग्नि से वह दोषरहित इस प्रकार हो जाता है, जैसे तपाने पर सोना। माँ कैकेयी ने अपनी भूल का भरपूर पश्चात्ताप किया, यथा :–

लखि सिय सहित सरल दोउ भाई। कुटिल रानि पछतानि अघाई।। (2/252/5)

गरइ गलानि कुटिल कैकेई। काहि कहै केहि दूषन देई।। (2/273/1)

इस प्रकार से किसी भी स्थिति में माँ कैकेयी निन्दनीय नहीं हैं, बल्कि श्रीरामजी उनके अत्यंत आभारी हैं, क्योंकि उनको वनवास देकर वे उद्देश्य पूर्ण करा दिए, जिनके लिए उन्होंने नर शरीर धारण किया।

....

भवतारण तारो भव–सागर

सरल शास्त्री, मो0–9311384212

श्रीराम सच्चिदानंदकंद
परब्रह्म एकरस अविनाशी।
अव्यक्त अखंड अनंत अलख
अन्तर्यामी घट–घट वासी ।।1।।

इस जग का कारण–कार्य तुम्हीं
मकड़ी की भाँति बनाते हो।
कुछ काल खेल मन भरने पर
तुम स्वयं निगल जग जाते हो ।।2।।

तुम ही तो निर्गुण–सगुण ब्रह्म
तुम निराकार–साकार तुम्हीं।
तुम जगन्नियंता जगदीश्वर
करुणा–सागर सुख–सार तुम्हीं ।।3।।

साधारण नर न, पुराण पुरुष
सर्वज्ञ अजन्मा परमेश्वर।
जग–कर्ता–भर्ता–संहर्ता
शरणागतवत्सल सर्वेश्वर ।।4।।

तुम व्यापक जग के कण–कण में
वह कौन जगह तुम जहाँ नहीं।
बाहर – भीतर से देख रहे
तुम से कुछ भी तो छिपा नहीं ।।5।।

ज्यों कीट रहें गूलर–फल में
त्यों ये सब जीव तुम्हारे में।
अन्तर्यामी सब देख रहे
तुम अन्तर बैठ हमारे में ।।6।।

जग–मंच बना नव नव नाटक
तुम खेल रहे नित नटनागर।
भक्तों की जीवन–नौकायें
तुम पार लगाते भव–सागर ।।7।।

अवतरित हुये तुम धरणीधर
धरणी का भार–हरण करने।
शुचि दिव्य मधुर लीलायें कीं
निज भक्तों का मंगल करने ।।8।।

पर अपनी भगवत्ता को तुम
माया से ढक कर रहते हो।
इस कारण भगवन तुम जग में
हमको न दिखायी पड़ते हो ।।9।।

तव माया ठगिनी बड़ी बली
उसके कारण ही जन्म हुआ।
अब भटक रहे भव–सागर में
हम कौन? 'सरल' विस्मरण हुआ ।।10।।

यह भूल हमारी भूल तुम्हें
इस जग को अपना समझ रहे।
इस एक भूल के कारण ही
हम भवाटवी में भटक रहे ।।11।।

श्रीराम तुम्हारी मधुर कथा
मधुरामृत की वर्षा करती।
संतप्तों का संताप मिटा
वह दिव्यानन्द हृदय भरती ।। 12 ।।

दुःख–भंजनि रामकथा में जो
निज चित्त लगाये रहता है।
संसार–चक्र में फिर उसको
चक्कर न काटना पड़ता है ।। 13 ।।

जग–बंधन–कारण चंचल मन
प्रभु चरण–कमल संलग्न रहे।
शुचि भक्ति भाव गायन करते
नित रामकथा–रसमग्न रहे ।। 14 ।।

वह मधुर घड़ी कब आएगी
प्रभु मेरे मन डालें डेरा।
श्रीराम जानकी–जीवनधन
कहते छूटे यह तन मेरा ।। 15 ।।

रघुवंशशिरोमणि भव–भंजन
सुर मुनि मन–रंजन सुख–सागर।
यह 'सरल' तुम्हारी शरणागत
भवतारण तारो भव–सागर ।। 16 ।।

नर–जीवन 'सरल' अमूल्य मिला इसको तू व्यर्थ नहीं खोना।
कर्मों से विमुख न तू होना जग–मंगल बीज सदा बोना।।
सब छोड़ झमेला जीवन का शरणागत हो दशरथ–नन्दन।
मेरे मन गा तू गान यही जय जनक दुलारी–रघुनन्दन।।

चित्रकूट गिरि करहु निवासू

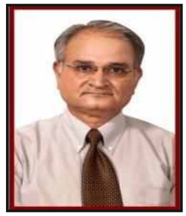

प्रस्तुतिः श्री प्रमोदकुमार शर्मा, नोएडा, मो0—9910058938

वाल्मीकीय रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद व प्राचीन साहित्य, खासकर कालिदास रचित रघुवंश और मेघदूत में चित्रकूट का विवरण प्राप्त होता है। जैसा कि नाम से ही विदित है, चित्रों का कूट चित्रकूट, त्रेता युग का यह तीर्थ अपने गर्भ में संजोए स्वर्णिम प्राकृतिक दृश्यों के कारण ही चित्रकूट के नाम से प्रसिद्ध है। यह उत्तर प्रदेश के चित्रकूट जिले और मध्य प्रदेश के सतना जिले की इसी नाम की तहसील में स्थित है और बुंदेलखंड के अन्तर्गत आता है।

चित्रकूट सभी तीर्थों का तीर्थ है। प्रयागराज को तीर्थों का राजा माना गया है, किंतु सनातन आस्था में चित्रकूट को उससे भी ऊँचा स्थान प्रदान किया गया है। ऐसी मान्यता है कि प्रयागराज प्रत्येक वर्ष अपने पापों को धोने के लिए चित्रकूट आते हैं। यह भी कहा जाता है कि जब प्रभु श्रीराम ने अपने पिता का श्राद्ध किया तो सभी देवी देवता चित्रकूट आए। वे सब इस स्थान की सुंदरता से इतने मोहित हो गए कि वापस जाने को राजी ही नहीं हुए और तो और कुलगुरु वसिष्ठ भी विसर्जन मंत्र को बोलना भूल गए। इस प्रकार सभी देवी—देवताओं ने इस जगह को अपना स्थायी आवास बना लिया। इसी स्थान पर महर्षि अत्रि और अनुसुइया ने ध्यान लगाया था और ब्रह्मा, विष्णु, महेश चित्रकूट में ही सती अनुसुइया के घर नन्हे शिशु बन गए थे। चित्रकूट के कण—कण में भगवान श्रीराम बसे हुए हैं। भगवान श्रीराम, माता सीता और लक्ष्मणजी ने वनवास के 14 सालों में से 11 साल चित्रकूट में ही बिताए थे।

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।। (1/31)

चित्रकूट में अनेक ऐसे स्थल हैं, जहाँ प्रभु श्रीराम के आने के साक्ष्य मिलते हैं। वनवास के समय भगवान श्रीराम ने महर्षि वाल्मीकिजी से अपने निवास के लिए स्थान पूछा तो महर्षि ने चित्रकूट में रहने के लिए निर्देशित कियाः—

चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू।। (2/132/3)

जब श्रीराम चित्रकूट पहुँचे तो उन्हें भी चित्रकूट बहुत भाया। उन्होंने लक्ष्मणजी से रुकने और पर्णकुटी बनाने के लिए उचित जगह ढूँढ़ने के लिए कहाः–

रघुबर कहेउ लखन भल घाटू। करहु कतहुँ अब ठाहर ठाटू।।
लखन दीख पय उतर करारा। चहुँ दिसि फिरेउ धनुष जिमि नारा।।
(2/133/1–2)

अस कहि लखन ठाउँ देखरावा। थलु बिलोकि रघुबर सुखु पावा।।
(2/133/5)

भगवान श्रीराम के प्रवास से चित्रकूट की धरती, विंध्याचल पर्वत, वन, कानन, जीव–जंतु, पशु–पक्षी और समस्त निवासी धन्य हो गए :–

धन्य भूमि बन पंथ पहारा। जहँ जहँ नाथ पाउ तुम्ह धारा।।
धन्य बिहग मृग काननचारी। सफल जनम भए तुम्हहि निहारी।। (2/136/1–2)

सब सर सिंधु नदीं नद नाना। मंदाकिनी कर करहिं बखाना।। (2/138/5)

सैल हिमाचल आदिक जेते। चित्रकूट जसु गावहिं तेते।।
बिंधि मुदित मन सुखु न समाई। श्रम बिनु बिपुल बड़ाई पाई।। (2/138/7–8)

चित्रकूट के बिहग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्य पुंज सब धन्य अस कहहिं देव दिन राति।। (2/138)

एक तीर्थ होने के साथ–साथ चित्रकूट मनोहर पर्यटन स्थल भी है। यहाँ विंध्याचल पर्वत श्रृंखला में बसे घने जंगल नयनाभिराम दृश्यों से भरपूर हैं, तो कल–कल करती मंदाकिनी नदी है, सुंदर गुफाएँ हैं, झरने और मन को शांति देने वाला एकांत है। प्रकृति की अनमोल धरोहर से आनंदित होकर सुबह, जब आप मंदिरों से उठती मधुर घंटों और रामधुन की आवाज से जगते हैं तो आप स्वयं को भी धन्य और पुण्य का भागी मानने लगते हैं। कवि रहीम ने चित्रकूट की महिमा में कहा है :–

चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध नरेश।
जा पर विपदा परत है सो आवत यह देश।।

कहते हैं यह वह स्थान है, जहाँ बड़े से बड़ा दुख शांति में बदल जाता है। पर मेरा यह मानना है कि हर भारतीय को जीवन में एक बार अवश्य चित्रकूट आना चाहिए।

चित्रकूट की यात्रा प्रारंभ होती है मंदाकिनी के पश्चिम तट पर बने रामघाट से। ऐसी मान्यता है कि यहाँ मंदाकिनी नदी में डुबकी लगाने से सब पापों से मुक्ति मिलती है। महाकवि वाल्मीकि ने मंदाकिनी की स्तुति में कहा है :–

मंदरांचल मूलातु प्राप्तां मंदाकिनी नदी।
सा देवगंगा विख्याता सद्यः पापहरा परा।।

मंदाकिनी के इसी तट पर भगवान श्रीराम, माता जानकी और भाई लक्ष्मण पर्णकुटी बनाकर रहते थे और इसमें ही स्नान करते थे।

चित्रकूट महिमा अमित कही महामुनि गाइ।
आइ नहाए सरित बर सिय समेत दोउ भाइ।। (2/132)

तुलसीदासजी को भगवान श्रीराम के दर्शन भी हनुमानजी की प्रेरणा से इसी घाट पर हुए थे, जिसका उल्लेख हनुमानजी द्वारा कहे इस दोहे में स्पष्ट है:–

चित्रकूट के घाट पर भइ संतन की भीर।
तुलसीदास चंदन घिसें तिलक देत रघुबीर।।

घाट पर नौका विहार की भी अच्छी सुविधा है। चित्रकूट के अन्य स्थलों का विवरण इस प्रकार से है :–

जानकी कुंडः

रामघाट से 2 किलोमीटर की दूरी पर मंदाकिनी नदी के पश्चिमी किनारे पर जानकी कुंड स्थित है। माना जाता है सीताजी यहाँ स्नान करती थीं। कहते हैं जानकी कुंड में नहाने से मनुष्य पापमुक्त हो भक्ति योग को प्राप्त करता है:–

सीता कुण्डे नरः स्नात्वा चरणं, भक्ति योगम् प्राप्नोति महापातक नाशनम्।

जानकी कुंड के पास ही राम जानकी रघुवीर मंदिर और संकट मोचन मंदिर हैं।

कामदगिरिः

चित्रकूट का सबसे महत्वपूर्ण स्थान कामदगिरि पर्वत है और इसका काफी धार्मिक महत्व है। इसे भगवान राम का ही स्वरूप माना जाता हैः–

कामद भे गिरि राम प्रसादा। अवलोकत अपहरत बिषादा।। (2/279/1)

इसके प्रवेश के चार द्वार हैं, जिसमें से उत्तरी द्वार को मुख्य माना जाता है। रामघाट में स्नान करके श्रद्धालु मुख्य द्वार से कामदगिरि पर्वत की 5 किलोमीटर की परिक्रमा प्रारंभ करते हैं और अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण होने की कामना करते हैं। जंगलों से घिरे परिक्रमा मार्ग पर कई मंदिर बने हुए हैं। चित्रकूट के लोकप्रिय कामतानाथ और भरत मिलाप मंदिर भी यहीं स्थित हैं।

स्फटिक शिलाः

स्फटिक शिला जानकीकुंड से 1 किलोमीटर दूर मंदाकिनी नदी के किनारे पर स्थित है। यहाँ का दृश्य बड़ा ही मनोरम है। कहते हैं भगवान श्रीराम ने इसी शिला पर माँ जानकी का श्रृंगार किया था।

एक बार चुनि कुसुम सुहाए। निज कर भूषन राम बनाए।।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर। बैठे फटिक सिला पर सुंदर।। (3/1/3–4)

इसी स्थान पर इन्द्र के पुत्र जयंत ने काक (कौवे) का रूप धारण कर सीताजी को चोंच मारी थी। इसी मनोरम स्थल में सीता माता के चरण चिह्न अंकित हैं। यह श्वेत धवल शिला, स्फटिक मणि के समान है, इसी कारण इसका नाम स्फटिक शिला है।

सती अनुसुइया–अत्रि ऋषि आश्रम

यह स्थान स्फटिक शिला से दस किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। घने जंगलों से घिरा यह आश्रमस्थल मन को अलौकिक शांति देने वाला है। कहते हैं माता अनुसुइया के प्रताप से ही यहाँ से पयस्विनी मंदाकिनी नदी का उद्गम हुआ था।

नदी पुनीत पुरान बखानी। अत्रिप्रिया निज तप बल आनी।। (2/132/5)

यहीं सती अनुसुइया ने अपने सतीत्व की परीक्षा लेने आए ब्रह्मा, विष्णु और शंकरजी को बालरूप में बदल दिया था।

गुप्त गोदावरीः

तुंगारण्य नाम के पर्वत में दो गुफाएँ हैं। पहली गुफा के अंदर जाने वाला रास्ता संकरा होने के कारण इसमें आसानी से नहीं घुसा जा सकता है। तिरछे होकर जाना पड़ता है। गुफा के अंत में एक कुंड है। दूसरी गुफा लंबी और संकरी है जिसमें हमेशा पानी बहता रहता है जो पापों को नष्ट करने वाली गुप्त गोदावरी नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है यहाँ भगवान श्रीराम ने दरबार लगाया था। यहाँ एक शिला, चोर के रूप में अंतरिक्ष में विराजमान है जिसे मयंक या खटखटा चोर कहते हैं :–

शिलैका चोर रूपा च अंतरिक्षे प्रवर्तते।

महर्षि वाल्मीकि ने इस गोदावरी नदी के माहात्म्य में लिखा है :–

गोदावर्ण नरः स्नात्वा कृत्वा संध्या यथा विधिः।
तस्मिन् गोदावरी पुण्य नदी पाप प्रमोचिनी,
गुप्त गोदावरी नाम्नां ख्याता पुण्य विवर्धिनी।

अर्थात् गोदावरी नदी में स्नान करने और यथा विधि संध्या करने से मनुष्य महान पुण्य को प्राप्त करता है तथा वह अपने पूरे कुल का **उद्धार** करता है। यहाँ और भी कुछ पुरानी प्राकृतिक गुफाएँ हैं। गुप्त गोदावरी का जल प्रवाह कुछ दूरी के बाद गायब हो जाता है।

हनुमान धाराः

हनुमान धारा रामघाट से लगभग चार किलोमीटर दूर है। एक ऊँची पहाड़ी पर, चोटी से कुछ नीचे, दीवार से लगी हनुमानजी की एक विशाल मूर्ति है जिसकी चोटी पर स्थित दो जलकुंडों से निरंतर पानी गिरता रहता है। आश्चर्य की बात यह है कि कुंड हमेशा जल से भरे रहते हैं और उनमें से निरंतर पानी बहता रहता है। इस धारा का पानी हनुमानजी को स्पर्श करता हुआ बहता है, इसलिए इसे हनुमान धारा कहते हैं। हनुमान धारा की कथा यह है कि अयोध्या में राज्याभिषेक के बाद हनुमानजी ने भगवान श्रीराम से कहा, प्रभु लंका को जलाने के बाद तीव्र अग्नि से उत्पन्न गर्मी मुझे बहुत कष्ट दे रही है।

मुझे कोई ऐसा उपाय बताएँ जिससे मैं उससे मुक्ति पा सकूँ। प्रभु श्रीराम ने हनुमानजी को यह स्थान बताया और कहा आप चित्रकूट पर्वत पर जाइए वहाँ आपके शरीर पर अमृत तुल्य शीतल जलधारा के लगातार गिरने से आपको इस कष्ट से मुक्ति मिल जाएगी। हनुमानजी ने चित्रकूट आकर इस पहाड़ी पर श्रीराम रक्षा स्तोत्र का पाठ 1008 बार किया। जैसे ही उनका अनुष्ठान पूरा हुआ ऊपर से एक जल की धारा प्रकट हो गई। जलधारा शरीर पर पड़ते ही हनुमानजी के शरीर को शीतलता प्राप्त हुई। आज भी यहाँ वह जलधारा निरंतर गिरती है। धारा का जल पहाड़ में ही विलीन हो जाता है। उसे लोग प्रभाती नदी या पातालगंगा कहते हैं। कहते हैं कि भगीरथ के तप से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने अपनी जटाओं से तीन बूँद गिराई थीं। उन्हीं से तीन गंगाएँ प्रकट हुईं। एक गंगा स्वर्ग लोक गई। दूसरी सगर पुत्रों का उद्धार करने के लिए मृत्यु लोक में पधारी और भागीरथी कहलाई। तीसरी पाताल गंगा है जो हनुमान धारा में प्रकट हुई।

इनके अलावा भी बहुत से अन्य सुंदर और मनोरम दर्शनीय स्थल चित्रकूट में हैं। यहाँ आने वाले हर व्यक्ति को यहाँ की प्रकृति की अनुपम छटा, शांत और आध्यात्मिक वातावरण से मन को शांति मिलती है।

संत वचनामृत

सभी प्राणियों में परमात्मा हैं, इसलिए इनके प्रति दया, क्षमामय व्यवहार करना चाहिए। किसी प्राणी का निरादर करना ईश्वर का निरादर करना है, जब ऐसा भाव आ जाएगा, तब ईश्वर की कृपा का अनुभव होगा। अपने को सबसे छोटा मानो, अहंकार मत करो। धन का होना अच्छा है, पर धन का अहंकार अच्छा नहीं है। दीनों पर भी भगवान की दया होती है। अपने दोषों को देखो और दूसरे के गुणों को देखो। भगवान के भरोसे रहो। हानि–लाभ, जीवन–मरण सब कुछ ईश्वर की कृपा से भाग्यवश होता है। दिन–रात की तरह सुख–दुःख आने–जाने वाले हैं, अतः निश्चिन्त रहो।

अपने बुजुर्गों की आँखें कभी भीगने मत देना, क्योंकि जिस घर की छत से पानी टपकता है उस घर की दीवारें भी कमजोर हो जाती हैं।

हिन्दुस्थान हमारा है

डॉ0 सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील', गाजियाबाद (उ.प्र.), मो0–9868932755

मेरा भारत ज्ञानी–मानी, ध्यानी है विज्ञानी है।
स्वाभिमान का संरक्षक है, इसकी प्रखर जवानी है।।
अन्त्योदय का उद्घोषक ये, इसका धर्म सनातन है।
शान्तिदूत ये क्रान्तिपुत्र है, सिंहों का ये आसन है।।1।।

सावरकर का राष्ट्रवाद ये, मंगलपाण्डे का है देश।
वीर सुभाषी इसकी भाषा, स्वामी इसके हैं अवधेश।।
ऊधम सिंह का साहस है ये, भगत सिंह का चिन्तन है।
आजादों की परिभाषा है, वीरों का ये जीवन है।।2।।

वेदों का आदेश यही है, सभी पुराणों का उपदेश।
भारत इसका नाम पुरातन, काटा करता सबके क्लेश।।
रामायण का कर्मयोग ये, गीताजी का भक्ती योग।
दर्शन इसका कालजयी है, विश्वविजय है एक प्रयोग।।3।।

सन्नारी हैं इस भारत की, पातिव्रत है उनका कोष।
उगता सूरज रुका यहीं पर, पतिव्रता का देखा रोष।।
काल यहाँ पर हार चुका था, पन्ना का है ये बलिदान।
झाँसी रानी इसकी गाथा, किरणवती का स्वाभिमान।।4।।

रामभद्र का मेरा भारत, भरतभद्र का ये है त्याग।
लखनलाल का संयम है ये, रिपुसूदन का है अनुराग।।
नर–वानर हैं सखा इसी के, माता शबरी केवट भ्रात।
आयु इसकी काकभुशुण्डी, गीधराज हैं इसके तात।।5।।

श्रीकृष्ण के प्रेमभाव में, भारत ने उत्थान किया।
भक्त–सन्त को बचा लिया था, दानवदल को मार दिया।।
राजनीति के कुशल प्रणेता, श्रीकृष्ण का है ये देश।
चाणक्यों का नीतिग्रंथ ये, गोविन्दसिंह का यही स्वदेश।।6।।

शास्त्र पूजकर भारतवासी, शस्त्र चलाया करते हैं।
विजयपर्व के गीत सुनाकर, ध्यान राम का धरते हैं।।
भगवद्ध्वज है गुरू हमारा, हमें तिरंगा प्यारा है।
हम पौरुष के सम्पूजक हैं, हिन्दुस्थान हमारा है।।7।।

किन्तु आज का मेरा भारत, अपनों से ही हुआ दुखी।
मौलिकता को भुला रहा ये, कहता निज को आज सुखी।।
मनोराज्य ने रामराज को, कोसों दूर भगाया है।
धर्मविहीना राजनीति ने, भारत–भाग्य सुलाया है।।8।।

उठो, जवानो जागो, घर में दानव करता आज प्रहार।
मानवता को मार रहा है, तुष्टिकरण का पापाचार।।
उदासीनता तजनी होगी, भारत माँ का करके ध्यान।
जो भारत को गारत करते, उनके पकड़ो दोनों कान।।9।।

जो भारत में खाते–पीते, गीत वहाँ के गाते हैं।
उनकी भाषा में समझा दो, युद्ध हमें भी आते हैं।।
शत्रू पर हम दया दिखाना, दशकों पहले भूल गए।
अब तो रक्षा के हित लाते, वीरों को हथियार नए।।10।।

सत्ता के भूखे जो नेता, जनता का धन लूट रहे।
दीन–दुखी के घर में जाकर, आँसू उनको दिखा रहे।।
वोटों के हैं यही लालची, सत्ता इनको प्यारी है।
नीयत इनकी पूरी खोटी, अरि से इनकी यारी है।।11।।

सावधान हम स्वयं रहेंगे, रक्षा हमको आती है।
शस्त्रों का हम पूजन करते, फिर भी शान्ति सुहाती है।।
विजय–दिवस है आज हमारा, अपना वैभव लाना है।
भौतिक सुख में जो जन सोए, उनको आज जगाना है।।12।।

....

सीय पीर गंभीर

डॉ. विनोद कुमार शर्मा "पट्टोजी" फोनः 9897467073

मातु कैकई मोहवश, दीन्ह राम वनवास।
भरत अयोध्यानाथ हों, वन रघुवीर प्रवास।।1।।

वन जाने की बात सुनि, राम मुदित मन होय।
सीय भ्रात प्रिय लखन हूँ, जानैं मरम न कोय।।1क।।

बढ़े चले पथ दोनों भाई। संग प्राण प्रिय सीय सुहाई।।
देखी थकी हारि प्रिय सीया। बोले मृदुल वचन सुन पीया।।1।।

घोर अँधेरि निशा घिरि आई। आगे मनहुँ न देत दिखाई।।
लखैं लखन इत उत चहुँ ओरा। पिहू–पिहू नभ करे चकोरा।।2।।

निकट दीख इक नदी सुहाई। देखि कमलिनी सिय हर्षाई।।
हाथ पाँय धोये दोउ वीरा। सीय देति निज अंजुलि नीरा।।3।।

सिय की प्रीति देख रघुराई। अकथनीय सुख उर उपजाई।।
लता सखी बन पूछैं सीया। हाल जान दुख उपजा हीया।।4।।

सीय सखा भाई वन तरुवर। छायें शीतल छाया तिन पर।।
शीतल छाया देख सुहाई। थके नयन निद्रा भरि आई।।5।।

सीय समेत लखन रघुवीरा। भूले सकल घोर तन पीरा।।
भूदेवी प्रिय जननि जानकी। पग–पग रक्षा करैं प्राण की।।6।।

जहाँ रात्रि सोवैं वैदेही। सजैं सेज नित मात सनेही।।

सीता सुता राम जामाता। लखन अनुज हैं अति सुखदाता।।7।।
राम जान सीतहिं नहिं जाना। को साजै नित सेज सुजाना।।
नेति–नेति कह वेद पुराना। सकैं न कर प्रभु कथा बखाना।।8।।

भोर काल अस्नान कर, सीय लखन श्रीराम।
अर्पण कर जल सूर्य को, तीनों करैं प्रणाम।।2।।

चलैं चाप–सर कांध धर, राम लखन रण वीर।
डगमग पग–पग में परैं, सीय पीर गंभीर।।2क।।

....

एक ब्राह्मण की प्रेरणाप्रद कहानी (सत्य घटना)

प्रस्तुति : एक हनुमान भक्त

पिछले दिनों मैं हनुमानजी के मंदिर गया था, जहाँ पर मैंने एक ब्राह्मण देव को देखा, जो एक जनेऊ हनुमानजी के लिए लेकर आए थे। संयोग से, मैं भी उनके ठीक पीछे लाइन में खड़ा था, मैंने सुना वो पुजारी से कह रहे थे कि वह स्वयं का काता (बनाया) हुआ जनेऊ हनुमानजी को पहनाना चाहते हैं, पुजारीजी ने जनेऊ तो ले लिया, पर पहनाया नहीं। जब ब्राह्मण ने पुनः आग्रह किया तो पुजारी बोले यह तो हनुमानजी का श्रृंगार है, इसके लिए बड़े पुजारीजी (महन्तजी) से अनुमति लेनी होगी, आप थोड़ी देर प्रतीक्षा करें वे आते ही होंगे। मैं उन लोगों की बातें गौर से सुन रहा था, जिज्ञासावश, मैं भी महन्तजी के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर बाद जब महन्तजी आए, तो पुजारीजी ने उन ब्राह्मण देव के आग्रह के बारे में बताया, तो महन्तजी ने ब्राह्मण देव की ओर देखकर कहा कि देखिए हनुमानजी ने जनेऊ तो पहले से ही पहना हुआ है और यह फूलमाला तो है नहीं कि एक साथ कई पहना दी जाएँ। आप चाहें तो यह जनेऊ हनुमानजी को चढ़ाकर प्रसाद के रूप में ले लीजिए।

इस पर उन ब्राह्मण ने बड़ी ही विनम्रता से कहा कि मैं देख रहा हूँ कि भगवान ने पहले से ही जनेऊ धारण कर रखा है, परन्तु कल रात्रि में चन्द्रग्रहण लगा था और वैदिक नियमानुसार प्रत्येक जनेऊ धारण करने वाले को ग्रहणकाल के उपरांत पुराना जनेऊ बदलकर नया जनेऊ धारण कर लेना चाहिए, बस यही सोचकर, सुबह–सुबह मैं हनुमानजी की सेवा में यह जनेऊ ले आया था, परम पूज्य हनुमान प्रभुजी को यह प्रिय बहुत है।

हनुमान चालीसा में लिखा है–**हाथ बज्र और ध्वजा विराजे, कांधे मूज जनेऊ साजे।**

अब महन्तजी थोड़ी सोचनीय मुद्रा में बोले कि हम लोग बाजार का जनेऊ नहीं लेते, हनुमानजी के लिए शुद्ध जनेऊ बनवाते हैं, आपके जनेऊ की क्या शुद्धता है? इस पर ब्राह्मण बोले कि प्रथम तो यह कि यह कच्चे सूत से बना है, इसकी लम्बाई 96 चउवा (अंगुल) है। पहले तीन धागों को तकली पर चढ़ाने के बाद तकली की सहायता से नौ धागे तेहरे गए हैं, इस प्रकार 27 धागों का एक त्रिसुत (त्रिगुण) है, जो कि पूरा एक ही

धागा है, कहीं से भी खंडित नहीं है, इसमें प्रवर तथा गोत्रानुसार प्रवर बन्धन है तथा अन्त में ब्रह्मगांठ लगाकर, इसे पूर्ण रूप से शुद्ध बनाकर, हल्दी से रंगा गया है और यह सब मैंने, स्वयं अपने हाथ से गायत्री मंत्र जपते हुए किया है।

ब्राह्मण देव की जनेऊ निर्माण की इस व्याख्या से मैं तो स्तब्ध रह गया, मन ही मन उन्हें प्रणाम किया। मैंने देखा कि अब महन्तजी उनसे संस्कृत भाषा में कुछ पूछने लगे। उन लोगों का सवाल–जवाब तो मेरी समझ में नहीं आया, परन्तु महन्तजी को देखकर लग रहा था कि वे ब्राह्मण के जवाब से पूर्णतया सन्तुष्ट हैं। अब वे उन्हें अपने साथ लेकर हनुमानजी के पास पहुँचे, जहाँ मन्त्रोच्चारण कर महन्तजी ने अन्य 3 पुजारियों के सहयोग से, ब्राह्मण देव को साथ में लेकर हनुमानजी को जनेऊ पहनाया। तत्पश्चात पुराना जनेऊ उतार कर उन्होंने बहते जल में विसर्जन करने के लिए अपने पास रख लिया।

मंदिर तो मैं अक्सर जाता हूँ, परन्तु आज की इस घटना ने मेरे मन पर गहरी छाप छोड़ दी। मैंने सोचा कि मैं भी तो ब्राह्मण हूँ और नियमानुसार मुझे भी जनेऊ बदलना चाहिए। उन ब्राह्मण देव के पीछे–पीछे मैं भी मंदिर से बाहर आया। उन्हें रोककर प्रणाम करने के बाद मैंने अपना परिचय दिया और कहा कि मुझे भी एक जोड़ी शुद्ध जनेऊ की आवश्यकता है, तो उन्होंने असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा कि बस इस समय तो वह हनुमानजी के लिए ही लेकर आए हैं। हाँ, यदि आप चाहें तो मेरे घर पर कभी भी आ जाइएगा। घर पर जनेऊ बनाकर मैं रखता हूँ, जो लोग जानते हैं, वे आकर ले जाते हैं।

मैंने उनसे उनके घर का पता लिया और उन्हें प्रणाम करके वहाँ से चला आया। शाम को उनके घर पहुँचा तो देखा कि वे अपने घर के दरवाजे पर एक तख्त पर बैठे, एक व्यक्ति से बात कर रहे थे। मैं अपनी गाड़ी से उतर कर उनके पास पहुँचा। मुझे देखते ही वे खड़े हो गए और मुझसे बैठने का आग्रह किया। अभिवादन के बाद मैं बैठ गया, बातों–बातों में पता चला कि वहाँ पर मेरे से पहले आए व्यक्ति भी पास के रहने वाले हैं और वे भी ब्राह्मण देव ही हैं तथा उनसे जनेऊ लेने आए हैं।

वे ब्राह्मण देव अपने घर के अंदर गए। इसी बीच उनकी दो बेटियाँ जो क्रमशः 12 व 8 वर्ष की रही होंगी, एक के हाथ में एक लोटा पानी तथा दूसरी के हाथ में एक कटोरी में गुड़ तथा दो गिलास थे, हम लोगों के सामने गुड़ व पानी रखा गया। मेरे पास बैठे व्यक्ति ने दोनों गिलास में पानी डाला फिर गुड़ का एक टुकड़ा उठाकर खाया और पानी पी लिया तथा गुड़ की कटोरी मेरी ओर खिसका दी, पर मैंने पानी नहीं पिया। कारण कि

आप सभी लोग जानते होंगे, हर जगह का पानी कितना दूषित हो गया है कि पीने योग्य नहीं होता है। घर पर आर.ओ. लगा हुआ है, इसलिए ज्यादातर आर.ओ. का ही पानी पीता हूँ। बाहर रहने पर पानी की बोतल खरीद लेता हूँ।

इतनी देर में ब्राह्मण देव अपने घर से बाहर आए और एक जोड़ी जनेऊ उनको दिया, जो पहले से वहाँ पर बैठे हुए थे। उन्होंने जनेऊ लिया और 21 रुपए ब्राह्मण देव को देकर चले गए। मैं अभी वहीं रुका रहा। इन ब्राह्मण देव के बारे में और अधिक जानने का कौतूहल मेरे मन में था। उनसे बातचीत में पता चला कि वे संस्कृत से स्नातक हैं। नौकरी मिली नहीं और पूँजी न होने के कारण कोई व्यवसाय भी नहीं कर पाए। घर में वृद्ध माँ, पत्नी, दो बेटियाँ तथा एक छोटा बेटा है, एक गाय भी है। वे वृद्ध माँ और गौ की सेवा करते हैं। विशिष्ट यज्ञों की यजमानी करते हैं, पर साधारणतया यजमानी से दूर रहते हैं। जनेऊ बनाना उन्होंने अपने पिता व दादाजी से सीखा है। यह भी उनकी गुजर–बसर में सहायक है।

इसी बीच उनकी बड़ी बेटी, पानी का लोटा, वापस ले जाने के लिए आई, किन्तु अभी भी मेरे गिलास में पानी भरा था, उसने मेरी ओर देखा। मुझे लगा कि उसकी आँखें मुझसे पूछ रही हैं कि मैंने पानी क्यों नहीं पिया, मैंने अपनी नजरें उधर से हटा लीं, वह पानी का लोटा और गिलास वहीं छोड़ कर चली गयी। शायद उसे उम्मीद थी कि मैं बाद में पानी पी लूँगा। अब तक मैं इस परिवार के बारे में काफी हद तक जान चुका था और मेरे मन में दया के भाव भी आ रहे थे। खैर ब्राह्मण देव ने मुझे एक जोड़ी जनेऊ दिया तथा कागज पर एक मंत्र लिखकर दिया और कहा कि जनेऊ पहनते समय इस मंत्र का उच्चारण अवश्य करूँ। मैंने सोच समझ कर 500 रुपए का नोट ब्राह्मण देव की ओर बढ़ाया तथा जेब और पर्स में एक का सिक्का तलाशने लगा। मैं जानता था कि 500 रुपए एक जोड़ी जनेऊ के लिए बहुत अधिक हैं, पर मैंने सोचा कि इसी बहाने इनकी थोड़ी मदद हो जाएगी। ब्राह्मण देव हाथ जोड़कर मुझसे बोले कि श्रीमंत 500 का फुटकर तो मेरे पास नहीं है, मैंने कहा अजी, साहबजी मुझे फुटकर की आवश्यकता नहीं है। आप यह पूरा ही रख लीजिए, तो उन्होंने कहा, नहीं बस मुझे मेरी मेहनत भर के 21 रुपए दे दीजिए। मुझे उनकी यह बात अच्छी लगी कि गरीब होने के बावजूद वे लालची नहीं हैं, पर मैंने भी पाँच सौ रुपए ही देने के लिए सोच लिया था। इसलिए मैंने कहा कि फुटकर तो मेरे पास भी नहीं हैं, आप संकोच मत कीजिए, पूरे ही रख लीजिए, आपके काम आएँगे। उन्होंने कहा

कि नहीं, मैं संकोच नहीं कर रहा। आप इसे वापस रखिए, जब कभी आपसे दुबारा मुलाकात होगी तब 21 रुपए दे दीजिएगा।

इन ब्राह्मण देव ने तो मेरी आँखें ही नम कर दीं। उन्होंने कहा कि शुद्ध जनेऊ की एक जोड़ी पर 13–14 रुपए की लागत आती है। 7–8 रुपए अपनी मेहनत के जोड़कर वे इसके 21 रुपए लेते हैं। कोई–कोई एक का सिक्का न होने की बात कहकर बीस रुपए ही दे जाते हैं। मेरे साथ भी यही समस्या थी मेरे पास 21 रुपए फुटकर नहीं थे। मैंने पाँच सौ का नोट वापस रखा और सौ रुपए का एक नोट उन्हें पकड़ाते हुए बड़ी ही विनम्रता से उनसे रख लेने को कहा तो इस बार वे मेरा आग्रह नहीं टाल पाए और 100 रुपए रख लिए और मुझसे एक मिनट रुकने को कहकर, घर के अंदर गए बाहर आकर, और चार जोड़ी जनेऊ मुझे देते हुए बोले, मैंने आपकी बात मानकर सौ रुपए रख लिए हैं, अब आप भी मेरी बात मानकर यह चार जोड़ी जनेऊ और रख लीजिए ताकि मेरे मन पर भी कोई भार न रहे।

मैंने मन ही मन उनके स्वाभिमान को प्रणाम किया, साथ ही उनसे पूछा कि इतने जनेऊ लेकर मैं क्या करूँगा, तो वे बोले कि **मकर संक्रांति, पितृ विसर्जन, चन्द्र और सूर्यग्रहण, घर पर किसी हवन पूजन संकल्प, परिवार में शिशु जन्म के सूतक आदि अवसरों तथा चार माह बीतने पर जनेऊ बदलने का विधान है,** इसके अलावा आप अपने सगे सम्बन्धियों, रिस्तेदारों व अपने ब्राह्मण मित्रों को उपहार भी दे सकते हैं, जिससे हमारी ब्राह्मण संस्कृति व परम्परा मजबूत होगी, साथ ही साथ जब आप मंदिर जाएँ तो विशेष रूप से गणेशजी, शंकरजी व हनुमानजी को जनेऊ जरूर चढ़ाएँ। उनकी बातें सुनकर वे पाँच जोड़ी जनेऊ मैंने अपने पास रख लिए और मैं वहाँ से खड़ा हुआ तथा वापसी के लिए विदा मांगी, तो उन्होंने कहा कि आप हमारे अतिथि हैं, पहली बार घर आए हैं। हम आपको खाली हाथ कैसे जाने दे सकते हैं? इतना कहकर उन्होंने अपनी बिटिया को आवाज लगाई। वह बाहर निकली, तो ब्राह्मण देव ने उससे इशारे में कुछ कहा, तो वह उनका इशारा समझकर जल्दी से अंदर गयी और एक बड़ा सा डंडा लेकर बाहर निकली। बिटिया के हाथ में डंडा देखकर मेरी समझ में नहीं आया कि मेरी कैसी विदायी होने वाली है?

अब डंडा बिटिया के हाथ से उन ब्राह्मण देव ने अपने हाथों में ले लिया और मेरी ओर देखकर मुसकराए। जवाब में मैंने भी मुस्कराने का प्रयास किया। वे डंडा लेकर आगे

बढ़े, तो मैं थोड़ा पीछे हट गया। उनकी बिटिया उनके पीछे–पीछे चल रही थी। मैंने देखा कि दरवाजे की दूसरी तरफ दो पपीते के पेड़ लगे थे। डंडे की सहायता से उन्होंने एक पका हुआ पपीता तोड़ा। उनकी बिटिया वह पपीता उठाकर अन्दर ले गयी और पानी से धोकर एक कागज में लपेट कर मेरे पास ले आयी और अपने नन्हे–नन्हे हाथों से मेरी ओर बढ़ा दिया। उसका यह निश्छल अपनापन देखकर मेरी आँखें भर आईं, मैं अब तक अपनी भीग चुकी आँखों को उनसे छिपाता हुआ दूसरी ओर देखने लगा, तभी मेरी नजर पानी के उस लोटे और गिलास पर पड़ी, जो अभी तक भी वहीं रखे थे। इस छोटी सी बच्ची का अपनापन देखकर मुझे पानी न पीने पर ग्लानि होने लगी। मैंने झट से एक टुकड़ा गुड़ उठाकर मुँह में रखा और पूरे गिलास का पानी एक ही साँस में पी गया। बिटिया से पूछा कि क्या एक गिलास पानी और मिलेगा। वह नन्ही सी परी फुदकती हुई लोटा उठाकर ले गयी और पानी भर लाई, फिर उस पानी को मेरे गिलास में डालने लगी। उसके होंठों पर तैर रही मुस्कराहट जैसे मेरा धन्यवाद कर रही हो। मैं अपनी नजरें उससे छुपा रहा था, पानी का गिलास उठाया और गर्दन ऊँची करके वह अमृत पीने लगा, पर मैं अपराधबोध से दबा जा रहा था। अब बिना किसी से कुछ बोले पपीता गाड़ी की दूसरी सीट पर रखा और अपने घर के लिए चल पड़ा। घर पहुँचने पर हाथ में पपीता देखकर मेरी पत्नी ने पूछा कि यह कहाँ से लेकर आए हो, **तो बस मैं उससे इतना ही कह पाया कि एक ब्राह्मण देव के घर गया था तो उन्होंने खाली हाथ आने ही नहीं दिया।**

मैंने जीवन में ब्राह्मण देवता तो हजारों देखे थे, परन्तु ब्राह्मणत्व से परिचय पहली बार हुआ और ऐसा हुआ कि मैं उस सारी रात सो न सका, रह–रह कर उन ब्राह्मणदेव की बातों का स्मरण मुझे होता रहा, जिन्होंने मुझे एक ही दिन में न जाने कितनी ही शिक्षाएँ देकर वे मेरे गुरुतुल्य हो गए। मैंने निश्चय किया कि उनसे जाकर जनेऊ निर्माण अवश्य सीखूँगा।

यह सच है कि धर्म को जीना ही धर्म का वास्तविक प्रचार है, इसके बाद भाषण, उद्बोधन, संगठन आदि सब मिथ्या है।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के आजीवन सदस्य श्री सतीश चन्द्र शर्मा बुधवार फाल्गुन कृष्ण 30 (अमावस्या) सम्वत् 2078 तदनुसार 02 मार्च 2022 को चिर निद्रा में लीन हो गए, वे 54 वर्ष के थे। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि सभी को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

महाकाव्य रचयिता की निरभिमानता

श्रीमती रीता कश्यप, दिल्ली, मो0–9958622992

महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी ने हिंदी साहित्य में श्रीरामचरितमानस के रूप में एक ऐसा कीर्ति स्तंभ स्थापित किया है जो सदियों से हमारी आस्था, विश्वास, लोक संस्कृति, जीवन–मूल्यों और सामाजिक आदर्शों के साथ पूरी आन–बान–शान से हर भारतीय के घर में ही नहीं, बल्कि हर भारतीय के दिल में अडिग खड़ा है। इस महाकाव्य के पुरोधा कवि तुलसीदासजी ने वैसे तो 12 ग्रंथों की रचना की है, लेकिन श्रीरामचरितमानस उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। मानस का काव्य शिल्प, श्लोकों, छंदों, दोहों, सोरठों और चौपाइयों से अलंकृत होकर इसके रचयिता तुलसीदासजी को संसार के उच्च कोटि के कवियों की श्रेणी में प्रतिष्ठित करता है। भारतीय साहित्य का महान ग्रंथ ''मानस'', देश की सीमाएँ लांघ कर वैश्विक साहित्य में अपना स्थान बना चुका है। अनगिनत देशी–विदेशी भाषाओं में इसका अनुवाद होना तथा देश–विदेश में इसके मंचन का होना इसकी लोकप्रियता ही नहीं, इसके महत्व को भी दर्शाता है। अपनी प्रबंधात्मकता, चारित्रिक महत्ता, भाव गाम्भीर्य, भाषा का सरस प्रवाह, मार्मिक प्रसंगों, प्रकृति चित्रण और भाषा सौष्ठव के कारण अवधी भाषा में रचा गया ''मानस'' एक उच्चकोटि का साहित्य ग्रंथ ही नहीं, अपितु यह हमारी धार्मिक तथा सांस्कृतिक विरासत भी है।

तुलसीदासजी संवेदनशील कवि ही नहीं, बल्कि एक कुशल सिद्ध–हस्त रचनाकार भी थे। उनकी लेखनी में अद्भुत शक्ति है। जैसे कोई पुरानी हवेली की आन–बान को बरकरार रखते हुए उसको अद्भुत आधुनिक रूप दे दे, जैसे कोई दर्जी पुरानी पोशाक को काट–छाँट कर आकर्षक, अत्याधुनिक और उपयोगी बना दे, ठीक वैसे ही तुलसीदास ने श्रीरामजी के जीवन पर आधारित सर्वप्रथम रचना महाकवि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण कथा को अपनी लेखनी से एक ऐसा नया रूप प्रदान किया है जो सर्व सामान्य के दिल में घर कर गया है।

संतशिरोमणि तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य श्रीरामचरितमानस का आधार भगवान शिव द्वारा रचित अध्यात्म रामायण है, किंतु उसके साथ–साथ उन्होंने वेद, शास्त्र, पुराण

और अन्यान्य ग्रंथों से भी भगवान श्रीराम के पावन मधुर चरित्रों को लेकर अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस को सँजोया है। इस बात का उन्होंने मानस के प्रारंभिक मंगलाचरण में उल्लेख किया है :–

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्

रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।

संत तुलसीदासजी धर्म की साक्षात् सजीव मूर्ति मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त थे, इसलिए उन्होंने युग–धर्म को दृष्टिगत रखते हुए दृश्यों के वर्णन और शब्दों के प्रयोग में सामाजिक मर्यादा का अक्षरशः पालन किया है, उदाहरणार्थ जनकपुर की राजवाटिका में महाकाव्य के नायक भगवान श्रीराम और नायिका भगवती सीता के प्रथम मिलन के प्रसंग में शृंगार रस के संयोग पक्ष का कितना मार्मिक और मर्यादित वर्णन किया है, वह सराहनीय है। इसी प्रकार अरण्यकाण्ड में इन्द्रपुत्र जयंत द्वारा भगवती सीता को चोंच मारकर घायल करने के प्रसंग में भी मर्यादा का निर्वाह किया है :–

सीता चरन चोंच हति भागा। (3/1/7)

इसी प्रकार अहिल्या–उद्धार, पुरवासियों का श्रीराम के राज्याभिषेक के अवसर पर भरत के प्रति संदेह, कौशल्या का राम के निर्विघ्न राज्याभिषेक हेतु विशेष पूजा, व्रत, उपवास करना, सीता की अग्नि–परीक्षा ऐसे अनेक प्रसंगों पर अपनी सशक्त लेखनी का जादू चलाते हुए उन पात्रों के चरित्रों को ऊँचा उठाने का एक सफल प्रयास किया है। इतना ही नहीं, सीता स्वयंवर का दृश्य, केवट प्रसंग, शबरी की राम भक्ति, लंका में हनुमानजी की विभीषण से प्रथम भेंट, अंगद का रावण के दरबार में उपस्थित होने का प्रसंग आदि कई ऐसे प्रसंग हैं, जो श्रीरामकथा को और अधिक रोचक और मार्मिक बना देते हैं।

ऐसे कालजयी, लोकग्राह्य, अनुपम, अद्भुत ग्रंथ श्रीरामचरितमानस के रचयिता महाकवि तुलसीदास की निरभिमानता एवं नम्रता देखते ही बनती है। वे लिखते हैं :–

कबि न होउँ नहिं बचन प्रबीनू। सकल कला सब बिद्या हीनू।। (1/9/8)
करन चहउँ रघुपति गुन गाहा। लघु मति मोरि चरित अवगाहा।।
सूझ न एकउ अंग उपाऊ। मन मति रंक मनोरथ राऊ।।
निज बुधि बल भरोस मोहि नाहीं। ताते बिनय करउँ सब पाहीं।। (1/8/4–6)

....

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

स्थानीय कार्यालय : ए–447, सेक्टर–47, नोएडा–201 301
दूरभाष : 0120–4305457, 9811056467

वित्तीय वर्ष 2020–21 का आय–व्यय विवरण (राशि भारतीय रुपयों में)

क्र0सं0	आय विवरण	रुपए	क्र0सं0	व्यय विवरण	रुपए
1)	वर्ष के प्रथम दिन की स्थिति		1)	स्मारिका छपाई व्यय	75,000.00
	क) मियादी जमा खाता	4,70,000.00			
	ख) बैंक में बचत खाता	66,993.69			
	ग) नकद राशि	2,940.00			
2)	स्मारिका में विज्ञापन से प्राप्त राशि	–	2)	स्रोत पर आयकर (TDS)	–
3)	दान/आरती–मानस पाठ एवं सदस्यता शुल्क से प्राप्त राशि	72,385.00	3)	श्रीरामनवमी उत्सव एवं श्रीराम कथा आयोजन पर व्यय	10,802.00
4)	अन्य प्राप्तियाँ, आयकर रिफण्ड, बैंक ब्याज आदि	2,248.00	4)	टेलीफोन बिलों का भुगतान	8,786.35
5)	आयकर वापसी आवेदित (Applied for)	–	5)	विविध व्यय (बैंक चार्ज, डाक खर्च, वैबसाइट रखरखाव, संदेशवाहक पर खर्च आदि)	16,958.00
6)	प्रतिभूति वापसी (Security Refund)	–	6)	दान (Charity)	16,000.00
			7)	प्रतिभूति जमा	–
			8)	वर्ष के अंतिम दिन की स्थिति	
				क) मियादी जमा खाता	4,47,000.00
				ख) बैंक में बचत खाता	13,029.34
				ग) नकद राशि	26,991.00
	कुल योग	**6,14,566.69**		**कुल योग**	**6,14,566.69**

पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा	**डॉ. भगवान दास पटैरया**	**श्री जे.के. गुप्ता**	**श्री सुभाष मित्तल**	**चार्टड**
अध्यक्ष	महासचिव	कोषाध्यक्ष	कार्यकारी सदस्य	लेखाकार

श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य ही नहीं, बल्कि अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे आदि सशक्त मंत्रों का संकलन है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे, सोरठे सभी सरल मंत्र हैं। संस्कृत के मंत्र कठिन होते हैं, इससे हर एक को उनके उच्चारण में सुगमता नहीं होती, इसलिये जापक का मन उनमें पूरा नहीं लगता। साबर–मंत्र रूखे और कठिन शब्दावली से भरे होते हैं। उनमें भी मन नहीं लगता, परन्तु श्रीरामचरितमानस के ये मंत्र सरल, सरस और सार्थक हैं। जापक इनमें तन्मय हो जाता है। इच्छाशक्ति तल्लीन हो जाती है। इससे मनवांछित फल शीघ्र प्राप्त होता है।

रक्षा–रेखा :

मन्त्र सिद्ध करने के लिये या किसी संकटपूर्ण जगह पर रात्रि व्यतीत करने के लिये अपने चारों ओर रक्षा की रेखा खींच लेनी चाहिए। लक्ष्मणजी ने सीताजी की कुटी के आसपास जो रक्षा रेखा खींची थी, उसी लक्ष्य पर निम्नांकित रक्षा–मन्त्र बनाया गया है। इसे एक सौ आठ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिए।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।। (मानस 7/115/छंद)

इन मंत्रों को सिद्ध करके उनका जप करना अथवा मानस पाठ करते समय दोहा/सोरठा एवं चौपाइयों के बीच संपुट लगाने से इष्ट फल की अवश्य ही प्राप्ति होती है। मंत्र सिद्ध करने के लिए उपयुक्त मुहूर्त में रात्रि 10 बजे के बाद अष्टांग हवन सामग्री से इष्ट चौपाई अथवा दोहा/सोरठा से 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। अष्टांग हवन सामग्री में चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शक्कर, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर मोथा, पंच मेवा, जौ और चावल आते हैं। एक दिन हवन करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मंत्र (दोहा/चौपाई आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिए, पर किसी भी स्थिति में 21 बार से कम जप न हो, इसका ध्यान रखें। सामान्यतया सवा लाख जप किया जाता है, पर इससे पहले ही यदि कार्य सिद्ध हो जाए तब भी अनुष्ठान पूरा करना चाहिए और जीवन पर्यन्त उस मंत्र को रोज स्मरण कर लेना चाहिए, ताकि मंत्र सिद्ध रहे।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित नियम महत्त्वपूर्ण हैं :

1. पूर्ण श्रद्धा–विश्वास एवं समर्पण भाव से जप करें।

2. वाराणसी में भगवान शंकरजी ने मानस की चौपाइयों को मन्त्र शक्ति प्रदान की है, इसलिये वाराणसी की ओर मुख करके शंकरजी को साक्षी मानकर श्रद्धा से जप करना चाहिये।

3. जिस उद्देश्य के लिये जो चौपाई, दोहा या सोरठा जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करने के लिये अष्टांग हवन की सामग्री से उसी चौपाई, दोहे या सोरठे के द्वारा 108 आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। शुद्ध मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर अग्नि स्थापित करके उसमें आहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति के साथ चौपाई, दोहा, सोरठा आदि के अन्त में 'स्वाहा' बोलना चाहिये।

4. प्रत्येक आहुति लगभग 10 ग्राम की (सब चीजें मिलाकर) होनी चाहिये। इस हिसाब से 108 आहुति के लिये लगभग एक किलोग्राम सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम–ज्यादा हो तो कुछ आपत्ति नहीं। पंचमेवा में पिस्ता, बादाम, किशमिश (द्राक्षा), अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमें से कोई चीज न मिले तो उसके बदले में मिश्री मिला सकते हैं। केसर शुद्ध 3 ग्राम ही डालने से काम चल जायेगा, अधिक की आवश्यकता नहीं है।

5. हवन करते समय माला रखने की आवश्यकता एक सौ आठ की संख्या गिनने भर के लिये है। माला रखने में असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदि के 108 दाने रखकर उनसे गिनती की जा सकती है। करमाला का भी उपयोग कर सकते हैं।

6. बैठने के लिये आसन ऊन का अथवा कुशा का होना चाहिये।

7. मन्त्र सिद्ध करने के लिये यदि लंकाकाण्ड की चौपाई या दोहा हो तो उसका हवन शनिवार को करना चाहिये। दूसरे काण्डों के चौपाई–दोहे किसी भी दिन उपयुक्त मुहूर्त में हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं।

8. एक दिन हवन करने से ही मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मन्त्र (चौपाई–दोहे आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को, जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये, अधिक कर सकें तो अधिक उत्तम। आप चाहें तो नियमित जप के अलावा भी दिनभर चलते–फिरते हुए उस चौपाई या दोहे का जप कर सकते हैं। जितना अधिक जप हो, उतना ही उत्तम है।

9. कोई दो तीन कार्यों के लिये दो तीन मन्त्रों का अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर उन मन्त्रों को पहले अलग–अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये। हवन के द्वारा एक ही दिन में दो या तीन मंत्रों को सिद्ध कर सकते हैं।

10. स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठान को कर सकती हैं, परन्तु रजस्वला होने की स्थिति में मानसिक जप किया जा सकता है, पर इस अवस्था में हवन नहीं करना चाहिये।

11. जप करते समय मन में यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान श्रीसीताराम की अहैतुकी कृपा से मेरा कार्य अवश्य सफल होगा। विश्वासपूर्वक जप करने पर सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

12. अधिकांश मंत्र तथा उपर्युक्त नियम कल्याण के मासिक अंकों से लिए गए हैं।

13. जप करते समय यदि निम्नांकित बिन्दुओं का पालन करें तो सफलता शीघ्रता से प्राप्त होगी

(क) जप सूर्योदय से पूर्व करें।

(ख) पूर्व की ओर अथवा वाराणसी की ओर मुँह करके जप करें।

(ग) ऊन के आसन पर बैठें।

(घ) अपने सामने श्रीरामदरबार का चित्र रखें। एक लोटा जल अपने बाईं ओर रखें जिसे जप के पश्चात् किसी पौधे में डाल दें या सूर्य को अर्घ्य दें।

(ङ) अपने दाईं ओर घी का दीपक जलाकर रखें।

विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति हेतु मानस के कुछ सिद्ध मंत्र इस प्रकार हैं–

1. असमंजस की स्थिति में परम कल्याण हेतु

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)

2. शरणागत होकर संकट निवारणार्थ

मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।। (1/132/2)

3. सर्व मंगल कामना हेतु

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)

4. श्रेष्ठ भक्ति की कामना

अब कछु नाथ न चाहि अमोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)

5. मानस का गायत्री मन्त्र

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।। (1/18/7–8)

6. संकट नाश के लिए

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

7. जीविका प्राप्ति के लिए

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (1/197/7)

8. लक्ष्मी प्राप्ति हेतु

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।। (1/294/2–3)

9. शत्रुता नाश के लिए

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।। (7/20/8)

10. यात्राा की सपफलता के लिए

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)

11. परीक्षा में पास होने के लिए

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि उर अजिर नचाव हिंबानी।। (1/105/6)
मोरि सुधारि हिसो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)

12. विद्या प्राप्ति के लिए

गुरुगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।। (1/204/4)

13. आपसी सद्भाव (प्रेम) बढ़ाने के लिए

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)

14. विविध रोगों एवं उपद्रवों की शांति के लिए

छैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)

15. ईश्वर से अपराध क्षमा कराने के लिए

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।। (1/285/6)

16. मन पसन्द वर की प्राप्ति हेतु

सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। (1/236/7)

17. मन पसन्द वधू की प्राप्ति हेतु

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।। (1/237/4)

18. अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)

19. विपत्ति नाश हेतु

राजिवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक।। (1/18/10)

20. भूत–प्रेत भगाने हेतु

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)

21. दरिद्रता नाश के लिए

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दबारि के।। (1/32/8)

22. सन्तान प्राप्ति के लिए

दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना।। (1/193/3)

प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान।। (1/200)

23. सुख सम्पत्ति प्राप्ति हेतु

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना बिधि पावहिं।। (7/15/3)

24. मुकदमा जीतने के लिए

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)

25. शत्रु को मित्रा बनाने हेतु

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)

26. निन्दा निवृत्ति के लिए

रामकृपाँ अवरेब सुधारी। बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी।। (2/317/3)

27. विघ्न विनाश के लिए

सकल विघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही।। (1/39/5)

28. अकाल मृत्यु के निवारण हेतु

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।। (5/30)

29. नजर झाड़ने के लिए

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।। (1/198/5)

30. खोयी हुई चीज पुनः प्राप्त करने के लिए

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।। (1/13/7)

31. ऋद्धि–सिद्धि प्राप्त करने के लिए

साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। (1/22/4)

32. उत्सव के अवसर प्राप्त करने के लिए

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।। (1/361)

33. मंगलमय विदेश यात्रा हेतु

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।। (2/83/2)

34. विरक्ति तथा श्रीसीताराम चरणों में प्रेम प्राप्ति के लिए

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।। (2/326)

35. ज्ञान प्राप्ति के लिए

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।। (4/11/4)

36. भक्ति की प्राप्ति के लिए

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। (7/84 ख)

37. श्रीहनुमानजी को प्रसन्न करने के लिए

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

38. श्रीसीतारामजी के दर्शन के लिए

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। (1/146)

39. सहज स्वरूप दर्शन के लिए

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।। (1/146/8)

40. भगवत्स्मरण करते हुए आराम से शरीर त्याग करने के लिए

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।। (4/10)

41. संशय निवृत्ति के लिए

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)

42. प्रभु–प्रेम में निरन्तर वृद्धि के लिए

सीता रामचरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/2)

43. सुखद एवं ऐश्वर्यपूर्ण यात्रा के लिए

चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई। (7/119/3)

जब जीव कीर्ति व तन से ऊपर उठ जाता है, तब होता है 'कीर्तन'

श्रीरामशलाका–प्रश्नावली

मानसानुरागी महानुभावों को श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का विशेष परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, उसकी महत्ता एवं उपयोगिता से प्रायः सभी मानस प्रेमी परिचित होंगे। अतः नीचे उसका स्वरूपमात्र अंकित करके उससे प्रश्नोत्तर निकालने की विधि तथा उसके उत्तर–फलों का उल्लेख कर दिया जाता हैं। श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का स्वरूप इस प्रकार है–

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	ब	सु	नु	बि	घ	धि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रहिं	बस	ही	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	इ	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म*	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	हुँ	ह	ब	ब	प	चि	स	हिं	स	तु
म	का	ा	र	र	म	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	ा
ता	रा	रे	री	हृ	का	फ	खा	जू	ई	र	रा	पू	द	ल
नि	को	जो	गो	न	मु	जि	यँ	ने	मनि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	मि	स	रि	ग	द	न्मु	ख	म	खि	जि	म	त	जं
सिं	ख	नु	न	को	मि	निज	र्क	ग	धु	ध	सु	का	स	र
गु	ब	म	अ	रि	नि	म	ल	ा	न	ढ़	ती	न	क	भ
ना	पु	व	अ	ा	र	ल	ा	ए	तु	र	न	नु	वै	थ
सि	हुँ	सु	म्ह	रा	र	स	स	र	त	न	ख	ा	ज	ा
र	ा	ा	ला	धी	ा	री	ा	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

इस रामशलाका–प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान करना चाहिये।

तदनन्तर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिन्तन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठक में अंगुली या कोई शलाका रख देना चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कोरे कागज या स्लेट पर लिख लेना चाहिये। प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा कोई निशान लगा देना चाहिये जिससे न तो प्रश्नावली गंदी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होने तक वह कोष्ठक भूल जाये। अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है, उससे आगे बढ़ना चाहिये तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े, उसे भी लिख लेना चाहिये। इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिये और तब तक लिखते जाना चाहिये, जब तक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अंगुली अथवा शलाका न पहुँच जाये। पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवाँ पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते–पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, ये प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगा। यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि किसी–किसी कोष्ठक में केवल 'आ' की मात्रा (ा) और किसी–किसी कोष्ठक में दो–दो अक्षर हैं। अतः गिनते समय न तो मात्रा वाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिये और न दो अक्षरों वाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिये। जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे, वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेना चाहिये और जहाँ दो अक्षरों वाला कोष्ठक आवे, वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेना चाहिये।

अब उदाहरण के तौर पर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकाल दी जाती है। पाठक ध्यान से देखें। किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिन्तन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त 'म' वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रक्खा और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन–गिनकर लिखता गया तो उत्तर स्वरूप चौपाई बन जायेगी–

हो इ है सो ई जो रा म * र चि रा खा । को क रि त र क ब ढ़ा व हिं सा षा ।।

यह चौपाई बालकाण्डान्र्तगत शिव और पार्वती के संवाद में है। प्रश्नकर्ता को इस उत्तर स्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिये कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयष्कर है।

1. सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में श्री सीताजी के गौरीपूजन के प्रसंग में है। गौरी जी ने श्रीसीता जी को आशीर्वाद दिया है।

फल– प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा।

2. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– भगवान का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी।

3. उधरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग वर्णन के प्रसंग में है।

फल– इस कार्य में भलाई नहीं है। कार्य की सफलता में संदेह है।

4. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। पफनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।
स्थान– यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग वर्णन के प्रसंग की है।

फल– खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो। कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

5. मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में संत–समाज रूपी तीर्थ के वर्णन में है।

फल– प्रश्न उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

6. गरल सुध रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।
स्थान– यह चौपाई श्रीहनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है। कार्य सफल होगा।

7. बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धारि काहुँ न धीरा।।
स्थान– यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी के विलाप के प्रसंग में है।

फल– कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

8. सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्प वाटिका से पुष्प लाने पर विश्वामित्र जी का आशीर्वाद है।

फल– प्रश्न बहुत उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

इस प्रकार रामशलाका–प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं; जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तराशय संन्निहित हैं।

अहंकार में तीनों गए धन, वैभव और वंश
विश्वास न हो तो देख लें कथा रावण, कौरव और कंस।

संस्कार ही अपराध रोक सकते हैं, सरकार नहीं।

विक्रम संवत् 2079 (सन् 2021—22) की प्रमुख तिथियाँ : एक दृष्टि में

मास/पक्ष	गणेशचतुर्थी	एकादशीव्रत	प्रदोषव्रत	मासशिव रात्रि	अमावस्या	व्रत की पूर्णिमा	संक्रान्ति
चैत्र शुक्ल		12.04.22	14.04.22			16.04.22	14.04.22
वैशाख कृष्ण	19.04.22	26.04.22	28.04.22	29.04.22	30.04.22		
वैशाख शुक्ल		12.05.22	13.05.22			15.05.22	14.05.22
ज्येष्ठ कृष्ण	19.05.22	26.05.22	27.05.22	28.05.22	30.05.22		
ज्येष्ठ शुक्ल		10.06.22	12.06.22			13.06.22	15.06.22
आषाढ़ कृष्ण	17.06.22	24.06.22	26.06.22	27.06.22	29.06.22		
आषाढ़ शुक्ल		10.07.22	11.07.22			13.07.22	
श्रावण कृष्ण	16.07.22	24.07.22	25.07.22	27.07.22	28.07.22		16.07.22
श्रावण शुक्ल	01.08.22	08.08.22	09.08.22			11.08.22	
भाद्रपद कृष्ण	15.08.22	22.08.22	24.08.22	25.08.22	27.08.22		17.08.22
भाद्रपद शुक्ल	31.08.22	06.09.22	08.09.22			09.09.22	
आश्विन कृष्ण	13.09.22	21.09.22	23.09.22	24.09.22	25.09.22		17.09.22
आश्विन शुक्ल		06.10.22	07.10.22			09.10.22	
कार्तिक कृष्ण	13.10.22	21.10.22	23.10.22	23.10.22	25.10.22		17.10.22
कार्तिक शुक्ल		04.11.22	05.11.22			07.11.22	
मार्गशीर्ष कृष्ण	12.11.22	20.11.22	21.11.22	22.11.22	23.11.22		16.11.22
मार्गशीर्ष शुक्ल	27.11.22	03.12.22	05.12.22			07.12.22	
पौष कृष्ण	11.12.22	19.12.22	21.12.22	21.12.22	23.12.22		16.12.22
पौष शुक्ल		02.01.23	04.01.23			06.01.23	
माघ कृष्ण	10.01.23	18.01.23	19.01.23	20.01.23	21.01.23		14.01.23
माघ शुक्ल	25.01.23	01.02.23	03.02.23			05.02.23	
फाल्गुन कृष्ण	09.02.23	16.02.23	18.02.23	18.02.23	20.02.23		13.02.23
फाल्गुन शुक्ल		03.03.23	04.03.23			06.03.23	
चैत्र कृष्ण	11.03.23	18.03.23	19.03.23	20.03.23	21.03.23		15.03.23

बिखरने दो होंठों पर हँसी की फुहारें दोस्तों।
प्यार से बोलने से जायदाद कम नहीं होती।।

विक्रम संवत् 2079 वर्ष के व्रत एवं त्योहारों की सूची

शुभ संवत् 2079, शाके 1944, राजा शनि, मन्त्री गुरु समय वास माली गृहे वाहन मूषक रोहिणी का निवास समुद्र में, संवत्सर का नाम नल

2 अप्रैल से 16 अप्रैल 2022 तक (चैत्र शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	02.04.2022	नवरात्रारम्भ, कलश स्थापना, गुडी पड़वा, गौतम जयन्ती, पंचक समाप्त 11/20
द्वितीया	रविवार	03.04.2022	सिंधारा 2
तृतीया	सोमवार	04.04.2022	गणगौर पूजन मेला (राज0) श्रीमत्स्य जयन्ती
चतुर्थी	मंगलवार	05.04.2022	दमनक चतुर्थी व्रत
पंचमी	बुधवार	06.04.2022	श्रीपंचमी, हयव्रत, पर्यूषणपर्व प्रारम्भ
षष्ठी	गुरुवार	07.04.2022	यमुना–स्कन्दषष्ठी, स्वास्थ दिवस
सप्तमी	शुक्रवार	08.04.2022	नवपद ओली प्रारम्भ (जैन) जलसंसाधन दिवस
अष्टमी	शनिवार	09.04.2022	श्रीदुर्गाष्टमी व्रत, अशोकाष्टमी, मनसादेवी, अन्नपूर्णा पूजा
नवमी	रविवार	10.04.2022	रामनवमीव्रतोत्सव, श्रीरामचरितमानस जयन्ती
दशमी	सोमवार	11.04.2022	धर्मराजदशमी
एकादशी	मंगलवार	12.04.2022	कामदाएकादशी व्रतस्मार्त, लक्ष्मीकान्तडोलोत्सव
द्वादशी	बुधवार	13.04.2022	श्रीविष्णु 12 हरिदमनोत्सव
त्रयोदशी	गुरुवार	14.04.2022	प्रदोष व्रत, अनंग 13, श्रीमहावीर जयन्ती (जैन)
चतुर्दशी	शुक्रवार	15.04.2022	श्रीशिवदमनक 14, गुडफ्राइडे
पूर्णिमा	शनिवार	16.04.2022	सत्यव्रत पूर्णिमा, श्रीहनुमान जयंती, वैशाखस्नान प्रा.

17 अप्रैल से 30 अप्रैल 2022 तक (वैशाख कृष्ण पक्ष) वसंत ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
तृतीया	मंगलवार	19.04.2022	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21/52
षष्ठी	शुक्रवार	22.04.2022	वसुन्धरा रक्षण दिवस
सप्तमी	शनिवार	23.04.2022	शीतलापूजा, बूढ़ाबासोड़ा, कालाष्टमीव्रत, बाबू कुंवर सिंह जयन्ती (बि)
नवमी	रविवार	24.04.2022	पंचक प्रारम्भ 29/31, चण्डिकानवमी
एकादशी	मंगलवार	26.04.2022	वरुथिनीएकादशीव्रत स्मार्त्त श्रीबल्लभाचार्य जयन्ती, अगस्तताराअस्त
त्रयोदशी	गुरुवार	28.04.2022	प्रदोषव्रत
चतुदर्शी	शुक्रवार	29.04.2022	पंचक समाप्त 18/42
अमावस्या	शनिवार	30.04.2022	श्रीशुकदेव जयन्ती, देवपितृअमापुण्यः
1 मई से 16 मई 2022 तक (वैशाख शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	01.05.2022	देवदामोदर तिथि असम, ऋषि पाराशर जयन्ती विश्व श्रमिक दिवस
द्वितीया	सोमवार	02.05.2022	वीर शिवाजी जयन्ती
तृतीया	मंगलवार	03.05.2022	अक्षयतृतीया, श्रीपरशुराम जयन्ती, रोहिणी व्रत
पंचमी	शुक्रवार	06.05.2022	आदिशंकराचार्य जयन्ती, श्रीसूरदास जयन्ती
षष्ठी	शनिवार	07.05.2022	श्रीरामानुजाचार्य जयन्ती, कवि टैगोर जयन्ती
सप्तमी	रविवार	08.05.2022	श्रीगंगासप्तमी, मदर्सडे, गंगोत्पद्वित्तमध्याह्ने
अष्टमी	सोमवार	09.05.2022	देवी बगलामुखी जयन्ती
नवमी	मंगलवार	10.05.2022	श्रीजानकी नवमी, वैष्णोत्सव
दशमी	बुधवार	11.05.2022	श्रीमहावीर केवलज्ञान जैन
एकादशी	गुरुवार	12.05.2022	मोहिनी एकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	शुक्रवार	13.05.2022	प्रदोष व्रत, एकता दिवस
त्रयोदशी	शनिवार	14.05.2022	देवी छिन्नमस्ता जयन्ती, श्रीनृसिंह जयन्ती
चतुर्दशी	रविवार	15.05.2022	कूर्म जयन्ती, यमप्रतियर्थ जल कुंभदानं सत्यव्रत, परिवार दिवस
पूणिमा	सोमवार	16.05.2022	वैशाख पूर्णिमा, स्नानपूर्ण, बुद्धपूर्णिमा, बुद्ध जयन्ती

17 मई से 30 मई 2022 तक (ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	17.05.2022	जिनवर व्रत प्रारम्भ (जैन), श्रीनारद जयन्ती, वीणा–दान
तृतीया	बुधवार	18.05.2022	बाबा जय गुरुदेव पुण्यः
चतुर्थी	गुरुवार	19.05.2022	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22/57
सप्तमी	रविवार	22.05.2022	पंचक प्रारम्भ 11/16, कालाष्टमी
अष्टमी	सोमवार	23.05.2022	संत दादूदयाल पुण्यः
नवमी	मंगलवार	24.05.2022	बुढ़वामंगल
एकादशी	गुरुवार	26.05.2022	पंचक समाप्त 24/37, अपराएकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	शुक्रवार	27.05.2022	प्रदोष व्रत, नेहरूजी पुण्यः
त्रयोदशी	शनिवार	28.05.2022	सावित्री व्रतारम्भः, सावरकर जयन्ती, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	रविवार	29.05.2022	फलाहारिणी कालिका पूजा
अमावस्या	सोमवार	30.05.2022	भावुका अमावस्या, वटसावित्री व्रत, रोहिणी व्रत, सोमवतीमावस, शनि जयन्ती, मेला शनि शिगणापुर
31 मई से 14 जून 2022 तक (ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	31.05.2022	करवीर व्रत, दशाश्वमेघ घाट स्नान (काशी)
द्वितीया	बुधवार	01.06.2022	चन्द्रदर्शन
तृतीया	गुरुवार	02.06.2022	रम्भातीजव्रत, श्रीमहाराणा प्रताप जयन्ती, बाबा बालकनाथ जयन्ती
चतुर्थी	शुक्रवार	03.06.2022	शहीदी गुरु अर्जुन देव
पंचमी	शनिवार	04.06.2022	श्रुतिपंचमी (जैन)
षष्ठी	रविवार	05.06.2022	अरण्यषष्ठी, विन्ध्यवासिनी पूजा, जामित्रषष्ठी, पर्यावरण दिवस
सप्तमी	मंगलवार	07.06.2022	बड़ पूजा (भिंड, बुढ़वामंगल)
अष्टमी	बुधवार	08.06.2022	श्रीदुर्गाष्टमी, देवी धूमावती ज0, मेला क्षीरभवानी(क)
नवमी	गुरुवार	09.06.2022	श्रीमहेश नवमी, श्रीगंगा दशहरा, बटुकभैरव जयन्ती
दशमी	शुक्रवार	10.06.2022	निर्जला एकादशी व्रत स्मार्त्त, भीमसैनी ग्यारस
एकादशी	शनिवार	11.06.2022	त्रिस्पर्शायोगवती निर्जला एकादशी व्रत वैष्णवादि चम्पक द्वादशी
त्रयोदशी	रविवार	12.06.2022	प्रदोष व्रत, सावित्री व्रतारम्भः, बालश्रम निषेध दिवस
चतुर्दशी	सोमवार	13.06.2022	सत्यव्रत
पूणिमा	मंगलवार	14.06.2022	ज्येष्ठ पूर्णिमा, वटसावित्री व्रतपूर्ण, संतकबीर जयंती

15 जून से 29 जून 2022 तक (आषाढ़ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	15.06.2022	गुरु हरगोविन्द जयन्ती
तृतीया	शुक्रवार	17.06.2022	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22/33
पंचमी	शनिवार	18.06.2022	पंचक प्रारम्भ 18/47, रानी झाँसी पुण्यः
अष्टमी	मंगलवार	21.06.2022	कालाष्टमी व्रत, योग दिवस
दशमी	गुरुवार	23.06.2022	पंचक समाप्त 6/13
एकादशी	शुक्रवार	24.06.2022	योगिनी एकादशी व्रत सर्वे, बाबा देवराहा पुण्यः
त्रयोदशी	रविवार	26.06.2022	प्रदोष व्रत, अहिल्याबाई होलकर जयन्ती, रोहिणी व्रत, नशा विरोध दिवस
चतुर्दशी	सोमवार	27.06.2022	मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	मंगलवार	28.06.2022	पितृकार्ये अमावस्या
अमावस्या	बुधवार	29.06.2022	स्नानादि देवकार्येऽमावस्या
30 जून से 13 जुलाई 2022 तक (आषाढ़ शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	30.06.2022	गुप्त नवरात्र विधान (मिथिलांचल) चन्द्रदर्शन
द्वितीया	शुक्रवार	01.07.2022	श्री जगन्नाथजी रथयात्रा (उडीसा), मनोरथ द्वितीया (बंगाल)
तृतीया	शनिवार	02.07.2022	गुड़ीचाउत्सव (पुरी), श्रीबल्लभाचार्य पुण्यः
चतुर्थी	रविवार	03.07.2022	स्वामी विवेकानंद स्मृति दिवस
पंचमी	सोमवार	04.07.2022	द्वारकाधीश पाटोत्सव
षष्ठी	मंगलवार	05.07.2022	कौमारिकीषष्ठी, महावीर स्वामी गर्भकल्याणक जैन
सप्तमी	बुधवार	06.07.2022	विवस्वत सप्तमी सूर्य पूजा, अष्ट्राह्निकापर्व जैन
नवमी	शुक्रवार	08.07.2022	भड्डली नवमी, मेला शरीफ भवानी
दशमी	शनिवार	09.07.2022	उल्टारथ, बहुडायात्रा (पुरी)
एकादशी	रविवार	10.07.2022	देवशयनी एकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	सोमवार	11.07.2022	सोम प्रदोष व्रत, विश्वजनसंख्या दिवस
पूणिमा	बुधवार	13.07.2022	सत्यव्रत, गुरु पूर्णिमा, व्यास पूजा, शिवश्यनोत्सव, कोकिला व्रत, परिक्रमा गोवर्धन, स्वामी कल्याणदेव पुण्यः

14 जुलाई से 28 जुलाई 2022 तक (श्रावण कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	14.07.2022	अशून्यशयन व्रत
द्वितीया	शुक्रवार	15.07.2022	पंचक प्रारम्भ 28/20
तृतीया	शनिवार	16.07.2022	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21/51
पंचमी	सोमवार	18.07.2022	नागपंचमी मरुस्थले, सोमवार व्रत
सप्तमी	बुधवार	20.07.2022	पंचक समाप्त 12/49, कालाष्टमी व्रत
दशमी	शनिवार	23.07.2022	श्रीतिलक जयन्ती, श्रीचन्द्रशेखर जयन्ती
एकादशी	रविवार	24.07.2022	कामिका एकादशी व्रत सर्वे, रोहिणी व्रत
द्वादशी	सोमवार	25.07.2022	सोम प्रदोष व्रत, सोमवार व्रत, स्वामी अखंडानंद जयन्ती
चतुर्दशी	बुधवार	27.07.2022	मास शिवरात्रि व्रत, मेला पुरामहादेव मेरठ
अमावस्या	गुरुवार	28.07.2022	हरियाली अमावस्या, देवपितृकार्ये अमावस्या
29 जुलाई से 12 अगस्त 2022 तक (श्रावण शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शुक्रवार	29.07.2022	नक्त प्रतारम्भ, वाद्यदिवस
द्वितीया	शनिवार	30.07.2022	सिंधारा 2, स्वामी करपात्रीजी जयन्ती
तृतीया	रविवार	31.07.2022	मधुश्रवा तीज, हरियाली तीज, स्वर्ण गौरी
चतुर्थी	सोमवार	01.08.2022	विनायक चतुर्थी, वरद 4, सोमवार व्रत
पंचमी	मंगलवार	02.08.2022	नाग पंचमी देशाचारे
षष्ठी	बुधवार	03.08.2022	श्रीकल्की जयन्ती, वर्णश्रृयाल षष्ठी
सप्तमी	गुरुवार	04.08.2022	शीतला सप्तमी, श्रीतुलसीदास जयन्ती
अष्टमी	शुक्रवार	05.08.2022	श्रीदुर्गाष्टमी, मेला नयनादेवी चिंतपूर्णी
दशमी	रविवार	07.08.2022	टैगोर पुण्यः, फ्रैंडसिपडे
एकादशी	सोमवार	08.08.2022	पवित्रा एकादशी सर्वे, सोमवार व्रत
द्वादशी	मंगलवार	09.08.2022	श्रीविष्णु पवित्रार्पणं, प्रदोष व्रत
चतुर्दर्शी	गुरुवार	11.08.2022	सत्यव्रत, हयग्रीवोत्पत्ति
पूणिमा	शुक्रवार	12.08.2022	पंचक प्रारम्भ 14/51, रक्षाबंधन, श्रावणी–उपाकर्म, ऋषितर्पण, श्री गायत्री जयन्ती, संस्कृत दिवस

13 अगस्त से 27 अगस्त 2022 तक (भाद्रपद कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
द्वितीया	शनिवार	13.08.2022	अशून्यशयन व्रत पूर्ण, भीमचण्डी, विन्ध्या जयन्ती
तृतीया	रविवार	14.08.2022	कज्जलीतीज
चतुर्थी	सोमवार	15.08.2022	बहुला चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 21/29, स्वतंत्रता दिवस 76वाँ
पंचमी	मंगलवार	16.08.2022	पंचक समाप्त 21/6 हलचन्दन षष्ठी, चन्द्रोदय 22/0
षष्ठी	बुधवार	17.08.2022	ललहीछटि, हरिछटि
सप्तमी	गुरुवार	18.08.2022	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रत स्मार्त्त, चन्द्रोदय 23/6
अष्टमी	शुक्रवार	19.08.2022	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रत वैष्णव चन्द्रोदय 23/43, संतज्ञानेश्वर जयन्ती
नवमी	शनिवार	20.08.2022	गोगा नवमी, नन्दोत्सवः नन्दगाँव, श्रीरामानुचार्य जयन्ती, रोहणी व्रत
दशमी	रविवार	21.08.2022	बुजुर्ग दिवस
एकादशी	सोमवार	22.08.2022	अजाएकादशी व्रत स्मार्त्त
द्वादशी	बुधवार	24.08.2022	गोवत्सपूजा, बछबारस, प्रदोष व्रत, कृष्ण छटी पूजन
त्रयोदशी	गुरुवार	25.08.2022	मास शिवरात्रि
चतुर्दशी	शुक्रवार	26.08.2022	अघोरा चौदस, कैलाश यात्रा (क)
अमावस्या	शनिवार	27.08.2022	शनैश्चरीमावस, पिठौरी 30 मेला सुथरेशाह दिल्ली
28 अगस्त से 10 सितम्बर 2022 तक (भाद्रपद शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	28.08.2022	नक्त व्रत पूर्ण
द्वितीया	सोमवार	29.08.2022	चन्द्रदर्शनम्, शंकरदेव तिथि असम
तृतीया	मंगलवार	30.08.2022	सामवेदीयउपाकर्म, हरितालिका व्रत, वराह जयन्ती, स्वर्णगौरी व्रत
चतुर्थी	बुधवार	31.08.2022	श्रीगणेश जयन्ती, पत्थर चौथ, कलंक चौथ, चन्द्रदर्शन निषेध
पंचमी	गुरुवार	01.09.2022	ऋषि पंचमी, जैन संवत्सरी, पर्युषण प्रा0, क्षमावाणी पर्व
षष्ठी	शुक्रवार	02.09.2022	सूर्य षष्ठी, बलदेवछटि, हल 6
सप्तमी	शनिवार	03.09.2022	मुक्ताभरण सप्तमी, सन्तान सप्तमी, महालक्ष्मी व्रतारम्भ, श्रीराधाष्टमी व्रतोत्सव बरसाना
अष्टमी	रविवार	04.09.2022	श्रीदधीच जयन्ती, स्वामी हरिदास जयन्ती
नवमी	सोमवार	05.09.2022	श्रीचन्दनवमी उदासीन सम्प्रदाय
एकादशी	मंगलवार	06.09.2022	पद्मा–जलझूलनी एकादशी व्रत स्मार्त्त, फूलडोल मेला।
द्वादशी	बुधवार	07.09.2022	श्रीवामन जयन्ती, दधित्याग ब्रत पूर्ण, विजया महाद्वादशी
त्रयोदशी	गुरुवार	08.09.2022	पंचक प्रारम्भ 24/40, प्रदोषव्रत, ओनम पर्व, विश्व साक्षरता दिवस, शिवानन्द जयन्ती
चतुर्दर्शी	शुक्रवार	09.09.2022	अनन्त चतुर्दशी, श्रीगणेशविसर्जन, सत्यव्रत
पूणिमा	शनिवार	10.09.2022	प्रौष्ठपदी पूर्णिमा, महालयारम्भ

11 सितम्बर से 25 सितम्बर 2022 तक (आश्विन कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	11.09.2022	पितृपक्षारम्भ, प्रतिपदा का श्राद्ध, विनोबा जयन्ती
द्वितीया	सोमवार	12.09.2022	द्वितीया एवं तृतीया का श्राद्ध
तृतीया	मंगलवार	13.09.2022	पंचक समाप्त 6/35, चतुर्थी श्राद्ध–व्रत, चन्द्रोदय 20/29
चतुर्थी	बुधवार	14.09.2022	पंचमी का श्राद्ध, हिन्दी दिवस
पंचमी	गुरुवार	15.09.2022	षष्ठी का श्राद्ध, डॉ0 विश्वैष्वरैया जयंती, इंजीनियर्स डे
षष्ठी	शुक्रवार	16.09.2022	रोहिणी व्रत
सप्तमी	शनिवार	17.09.2022	सप्तमी का श्राद्ध, श्रीविश्वकर्मा पूजा
अष्टमी	रविवार	18.09.2022	अष्टमी का श्राद्ध, जीवितपुत्रिका व्रत
नवमी	सोमवार	19.09.2022	मातृनवमी श्राद्ध, सौभाग्यवतीनां श्राद्ध
दशमी	मंगलवार	20.09.2022	दशमी का श्राद्ध
एकादशी	बुधवार	21.09.2022	इन्दरा एकादशी व्रत सर्वे श्राद्ध, श्रीरामबरात मेला
द्वादशी	गुरुवार	22.09.2022	सन्यासीनां द्वादशी श्राद्ध
त्रयोदशी	शुक्रवार	23.09.2022	प्रदोषव्रत, त्रयोदशी श्राद्ध
चतुर्दशी	शनिवार	24.09.2022	चतुर्दशी श्राद्ध, कात्यायनी जयन्ती, मास शिवरात्रि
अमावस्या	रविवार	25.09.2022	सर्वपितृअमावस्या श्राद्ध, पितरविसर्जन, भूलेबिसरो का श्राद्ध
26 सितम्बर से 9 अक्टूबर 2022 तक (आश्विन शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	सोमवार	26.09.2022	शारदीय नवरात्रारम्भ, कलशस्थापन, मातामह श्राद्ध, अग्रसेन जयन्ती
द्वितीया	मंगलवार	27.09.2022	चन्द्रदर्शन
तृतीया	बुधवार	28.09.2022	सिन्दूर तृतीया, शहीद भगतसिंह जयन्ती
पंचमी	शुक्रवार	30.09.2022	उपांगललिता ५ व्रत, शुक्रअस्त पूर्वे
षष्ठी	शनिवार	01.10.2022	नवपद ओली, पुष्कर जयन्ती, रक्तदान दिवस
सप्तमी	रविवार	02.10.2022	सरस्वतीआवाहनं, भद्रकाल्यावतार, श्रीगाँधीजी व शास्त्रीजी जयन्ती
अष्टमी	सोमवार	03.10.2022	सरस्वती पूजनं, श्रीदुर्गाष्टमी पूजा, मेला ज्वालामुखी तारा देवी
नवमी	मंगलवार	04.10.2022	सरस्वती बलिदानं, नवरात्र समाप्त, महानवमी, आयुध पूजा
दशमी	बुधवार	05.10.2022	विजयादशमी, दशहरा, सरस्वती विसर्जन, नीलकंठ दर्शन, बौद्धावतार, माध्वाचार्य जयन्ती
एकादशी	गुरुवार	06.10.2022	पंचक प्रारम्भ 8/28 पापांकुशा एकादशी व्रत सर्वे, भरत मिलाप
द्वादशी	शुक्रवार	07.10.2022	प्रदोष व्रत
चतुर्दर्शी	शनिवार	08.10.2022	शाकुम्भरी देवी दर्शन, मेला देवबंद, वायुसेना दिवस
पूर्णिमा	रविवार	09.10.2022	शरदपूर्णिमा, कोजागरी व्रत, दीपदानं, वाल्मीकि जयन्ती कार्तिक स्नानारंभ, नवान्नभक्षणं, ओलीपूर्ण, ब्रज परिक्रमा, डाक दिवस

10 अक्टूबर से 25 अक्टूबर 2022 तक (कार्तिक कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	सोमवार	10.10.2022	पंचक समाप्त 16/1
द्वितीया	मंगलवार	11.10.2022	गुरु रामदास जयन्ती
चतुर्थी	गुरुवार	13.10.2022	करवाचौथ व्रत चन्द्रोदय रात्रि 20/12
पंचमी	शुक्रवार	14.10.2022	सौभाग्य सूचक रोहिणी व्रत
षष्ठी	रविवार	16.10.2022	विश्वखाद्य दिवस
सप्तमी	सोमवार	17.10.2022	अहोई अष्टमी व्रत पूजा गोवर्धन
एकादशी	शुक्रवार	21.10.2022	रमा एकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	शनिवार	22.10.2022	गोवत्सद्वादशी, गोसेवा, दीपदानं
त्रयोदशी	रविवार	23.10.2022	प्रदोषव्रत, धनत्रयोदशी, धन्वन्तरी जयन्ती
चतुर्दशी	सोमवार	24.10.2022	नरक १४ दीपावली, श्रीमहालक्ष्मी पूजन कालरात्रि कमला जयन्ती
अमावस्या	मंगलवार	25.10.2022	कार्तिकदेवकार्येऽमा, महावीर निर्वाण्डा जैन, सूर्यग्रहण, दयानंदपुण्यः, पुष्कर मेला प्रारम्भ
26 अक्टूबर से 8 नवम्बर 2022 तक (कार्तिक शुक्ल पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	26.10.2022	अन्नकूट, गोवर्धन पूजा, बलि पूजा
द्वितीया	गुरुवार	27.10.2022	चन्द्रदर्शन, भाईदूज, यमद्वितीया चित्रगुप्त विश्वकर्मा पूजा, विश्व बचत दिवस
चतुर्थी	शनिवार	29.10.2022	सौभाग्य–ज्ञान पंचमी
षष्ठी	रविवार	30.10.2022	सूर्यषष्ठी, डालाछटि, विश्व बचत दिवस
सप्तमी	सोमवार	31.10.2022	सरदार पटेल जयन्ती, एकता दिवस
अष्टमी	मंगलवार	01.11.2022	गोपाष्टमी, गोपूजन
नवमी	बुधवार	02.11.2022	अक्षय–आंवला–कूष्माण्डनवमी, जुगल जोड़ी परिक्रमा वृन्दावन, पंचक प्रारम्भ 14/17
दशमी	गुरुवार	03.11.2022	आशादशमी, आरोग्य व्रत, कंसवध लीला मथुरा
एकादशी	शुक्रवार	04.11.2022	प्रबोधिनी एकादशी व्रत (देवउठान) तुलसी विवाह, भीष्म पचंक व्रतारंभ
द्वादशी	शनिवार	05.11.2022	श्रीखाटू श्याम जयन्ती, प्रदोषव्रत, श्रीकालीदास जयन्ती
त्रयोदशी	रविवार	06.11.2022	वैकुण्ठ चतुर्दशी, पंचक समाप्त 24/3
चतुर्दर्शी	सोमवार	07.11.2022	चौमासी चौदस जैन, सत्यव्रत
पूणिमा	मंगलवार	08.11.2022	कार्तिक पूर्णिमा, स्नानपूर्ण, गुरुनानक जयंती, खग्रास चन्द्रग्रहण, पुष्करराज रेणुकातिर्थ–गढ़गंगा, भीष्म पंचक समाप्त।

9 नवम्बर से 23 नवम्बर 2022 तक (मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
द्वितीया	गुरुवार	10.11.2022	सौभाग्य सूचक रोहिणी व्रत
चतुर्थी	शनिवार	12.11.2022	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 20/23, राष्ट्रीय प्रसारण दिवस
पंचमी	रविवार	13.11.2022	श्रीमायानन्द चैतन्य जयन्ती
षष्ठी	सोमवार	14.10.2022	बालदिवस
अष्टमी	बुधवार	16.11.2022	महाकाल भैरवाष्टमी
अष्टमी	गुरुवार	17.11.2022	लाला लाजपतराय पुण्यः
दशमी	शनिवार	19.11.2022	महावीर स्वामी दीक्षाकल्याणंक
एकादशी	रविवार	20.11.2022	उत्पत्ति एकादशी व्रत सर्वेसाम्, उत्सवदिवस
द्वादशी	सोमवार	21.11.2022	सोमप्रदोष व्रत
त्रयोदशी	मंगलवार	22.11.2022	श्रीबालाजी जयन्ती, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	बुधवार	23.11.2022	देवपितृकार्येऽमा पुण्यः
24 नवम्बर से 8 दिसम्बर 2022 तक (मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	24.11.2022	शुक्रोदय पश्चिम 25/25
तृतीया	शनिवार	26.11.2022	संविधान दिवस
चतुर्थी	रविवार	27.11.2022	वैनायकी चौथ व्रत
पंचमी	सोमवार	28.11.2022	बिहारीपंचमी, श्रीरामजानकी विवाह उत्सव, गुरुतेग बहादुर बलिदान दिवस, श्रीबांके बिहारी प्राकट्योत्सव
षष्ठी	मंगलवार	29.11.2022	स्कन्दषष्ठी, चम्पाषष्ठी, पंचक प्रारम्भ 19/54
सप्तमी	बुधवार	30.11.2022	मित्र सप्तमी, नरसी मेहता जयन्ती
दशमी	शुक्रवार	02.12.2022	दशादित्यव्रत
एकादशी	शनिवार	03.12.2022	मोक्षदा एकादशी व्रत स्मार्त्त, मौनी ११ जैन, श्रीगीता जयन्ती
द्वादशी	रविवार	04.12.2022	अखण्डा १२, मोक्षदाएकादशी व्रत वैष्णवादि, नौसेना दिवस
त्रयोदशी	सोमवार	05.12.2022	सोमप्रदोष व्रत
चतुर्दर्शी	मंगलवार	06.12.2022	पिशाचमोचन श्राद्ध, कपर्दीश्वरयात्रा (काशी), अम्बेडकर पुण्यः
चतुर्दर्शी	बुधवार	07.12.2022	श्रीदत्त जयन्ती, सत्यव्रत, सशस्त्र सेनादिवस, रोहिणी व्रत
पूणिमा	मंगलवार	08.12.2022	पूर्णिमा पुण्यः षोडसीत्रिपुरसुन्दरी श्रीविद्या जयन्ती, अन्नपूर्णा जयन्ती।

9 दिसम्बर से 23 दिसम्बर 2022 तक (पौष कृष्ण पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
द्वितीया	शनिवार	10.12.2022	मानवाधिकार दिवस
तृतीया	रविवार	11.12.2022	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 20/3
सप्तमी	गुरुवार	15.12.2022	सरदार पटेल पुण्यः
अष्टमी	शुक्रवार	16.12.2022	कालाष्टमी व्रत, अष्टका श्राद्ध, विजय दिवस
एकादशी	सोमवार	19.12.2022	सफला एकादशी व्रत स्मार्त्त, वैष्णव, कल्पवास प्रारम्भ प्रयागराज
त्रयोदशी	बुधवार	21.12.2022	प्रदोष व्रत, बाबा नागपाल पुण्यः, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	गुरुवार	22.12.2022	श्रीजयप्रभुविजयपुण्यः, त्रिस्तुति जैन
अमावस्या	शुक्रवार	23.12.2022	पौषीदेव पितर अमावस्या पुण्यः वकुलामावस, श्रद्धानन्द बालिदान दिवस, किसान दिवस
24 दिसम्बर से 6 जनवरी 2023 तक (पौष शुक्ल पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	24.12.2022	उपभोक्ता दिवस
द्वितीया	रविवार	25.12.2022	खिचडीमहोत्सवारम्भः वृन्दावन, क्रिसमसडे, पं0 मदनमोहन मालवीय जयन्ती, श्री अटलबिहारी वाजपेयी जयन्ती
चतुर्थी	सोमवार	26.12.2022	पंचक प्रारम्भ 27/33
पंचमी	मंगलवार	27.12.2022	गरुडगोविन्द मथुरा
सप्तमी	गुरुवार	29.12.2022	गुरुगोविन्द सिंह जयन्ती, श्रीनंदबाबा जयन्ती
नवमी	शनिवार	31.12.2022	पंचक समाप्त 11/46
दशमी	रविवार	01.01.2023	शाम्बदशमी (उड़ीसा)
एकादशी	सोमवार	02.01.2023	पुत्रदाएकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	मंगलवार	03.01.2023	पापनाशिनीमहाद्वादशी
त्रयोदशी	बुधवार	04.01.2023	प्रदोष व्रत, रोहिणी व्रत
पूणिमा	शुक्रवार	06.01.2023	पौषी सत्यव्रत, पूर्णिमा पुण्यः, माघस्नानारम्भः, देवीशाकुमभरी जयन्ती, पत्रकार दिवस

7 जनवरी से 21 जनवरी 2023 तक (माघ कृष्ण पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	07.01.2023	काशिस्थ दशाश्वमेघघाट स्नानारम्भः
द्वितीया	रविवार	09.01.2023	प्रवासी भारतीय दिवस
तृतीया	मंगलवार	10.01.2023	श्रीगणेश चतुर्थी व्रत (सकट चौथ) चन्द्रोदय 20/42 विश्व हिन्दी दिवस
चतुर्थी	बुधवार	11.01.2023	शास्त्रीजी पुण्यः सिद्धेश्वर मेला बीजापुर
पंचमी	गुरुवार	12.01.2023	स्वामी विवेकानन्द जयन्ती, राष्ट्रीय युवा दिवस
षष्ठी	शुक्रवार	13.01.2023	लोहड़ी पर्व
सप्तमी	शनिवार	14.01.2023	श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती, मकरसंक्रांति, पौंगल, पैंगना पर्व, माघविहू, श्रीगंगासागर यात्रारंभ, खिचड़ी महोत्सव
अष्टमी	रविवार	15.01.2023	कालाष्टमी व्रत, अष्टका श्राद्ध
एकादशी	बुधवार	18.01.2023	षट्तिलाएकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	गुरुवार	19.01.2023	प्रदोष व्रत, शीतलनाथ जयन्ती जैन
त्रयोदशी	शुक्रवार	20.01.2023	मेरुत्रयोदशी जैन कल्याणक, मासशिवरात्रि
अमावस्या	शनिवार	21.01.2023	शनैश्चरी मौनी अमावस्या, स्नानमेला प्रयागराज, शनिमेला शिगणापुर
22 जनवरी से 5 फरवरी 2023 तक (माघ शुक्ल पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	22.01.2023	गुप्तनवरात्रि विधान
द्वितीया	सोमवार	23.01.2023	बाबा लालदयाल जयन्ती, पंचक प्रारम्भ 13/53, नेताजी सुभाष जयन्ती
तृतीया	मंगलवार	24.01.2023	गौरी तृतीया
चतुर्थी	बुधवार	25.01.2023	तिल –वरद्चतुर्थी
पंचमी	गुरुवार	26.01.2023	वसन्तपंचमी, श्रीपंचमी, सरस्वती पूजा, तक्षक पूजा, गणतंत्र दिवस
षष्ठी	शुक्रवार	27.01.2023	मन्दार षष्ठी, दारिद्रय षष्ठी, पंचक समाप्त 18/36
सप्तमी	शनिवार	28.01.2023	अचला सप्तमी, लाला लाजपतराय जयन्ती
अष्टमी	रविवार	29.01.2023	भीष्माष्टमी श्राद्ध
दशमी	मंगलवार	31.01.2023	दामोदरप्राकटयोत्सवः वृन्दावन, रोहिणी व्रत
एकादशी	बुधवार	01.02.2023	जयाएकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	गुरुवार	02.02.2023	भीष्म द्वादशी
त्रयोदशी	शुक्रवार	03.02.2023	प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	शनिवार	04.02.2023	श्रीभागवतपाठारंभ, रामचरण स्नेही जयन्ती
पूर्णिमा	रविवार	05.02.2023	सत्यव्रत, माघी पूर्णिमा, गुरुरविदास जयन्ती, ललिता जयन्ती

6 फरवरी से 20 फरवरी 2023 तक (फाल्गुन कृष्ण पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
चतुर्थी	गुरुवार	09.02.2023	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 21/19
चतुर्थी	शुक्रवार	10.02.2023	महाकाल शिवरात्रि आरम्भ उज्जैन
पंचमी	शनिवार	11.02.2023	माँ यशोदा जयन्ती
षष्ठी	रविवार	12.02.2023	सर्वोदय दिवस
सप्तमी	सोमवार	13.02.2023	कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध
अष्टमी	मंगलवार	14.02.2023	श्रीजानकी व्रत
नवमी	बुधवार	15.02.2023	समर्थ गुरु रामदास नवमी, म0 दयानंद जयन्ती
एकादशी	गुरुवार	16.02.2023	एकादशी व्रत स्मार्त्त
द्वादशी	शुक्रवार	17.02.2023	विजया ११ व्रत वैष्णव, शिवबरात दिल्ली
त्रयोदशी	शनिवार	18.02.2023	प्रदोषव्रत, महाशिवरात्रि व्रत, 14 ज्योतिर्लिंग पूजा
चतुर्दशी	रविवार	19.02.2023	पंचक प्रारम्भ 25/15, श्रीवैद्यनाथ जयन्ती
अमावस्या	सोमवार	20.02.2023	सोमवती देवकार्ये अमावस्या, शिव खप्पर पूजा
21 फरवरी से 7 मार्च 2023 तक (फाल्गुन शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	21.02.2023	चन्द्रदर्शन, फुलेरादूज, श्रीरामकृष्ण परमहंस जयन्ती, हिन्दी दिवस
तृतीया	बुधवार	22.02.2023	पं0 लेखरामवीर तृतीया
चतुर्थी	गुरुवार	23.02.2023	पंचक समाप्त 27/43, अविघ्नकर व्रत
षष्ठी	शनिवार	25.02.2023	चन्द्रशेखर पुण्यः
अष्टमी	सोमवार	27.02.2023	संतदादूदयाल जयन्ती, होलाष्टक प्रारम्भ, श्रीजीमंदिर में लड्डूओं की होली, रोहिणी व्रत
नवमी	मंगलवार	28.02.2023	अष्ट्राह्निका प्रा0 जैन, लट्ठमार होली बरसाना, राष्ट्रीय विज्ञान दिवस
दशमी	बुधवार	01.03.2023	लट्ठमार होली नन्दगाँव
एकादशी	गुरुवार	02.03.2023	खाटूश्याम (राज0), श्रीरामचरण स्नेही फूलडोल शाहपुरा
एकादशी	शुक्रवार	03.03.2023	आमलकी एकादशी व्रत सर्वे, लट्ठमार होली जन्मभूमि मथुरा, चिताभस्म होली (काशी)
द्वादशी	शनिवार	04.03.2023	जयानामक गोविन्द द्वादशी, मेला खाटूश्यामजी, प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	सोमवार	06.03.2023	सत्यव्रत
पूणिमा	मंगलवार	07.03.2023	पूर्णिमा पुण्यः होलिका दहन, महाप्रभु जयन्ती, अष्टका श्राद्ध

8 मार्च से 21 मार्च 2023 तक (चैत्र कृष्ण पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	08.03.2023	वसन्तोत्सव, छारेंडी, धुलैण्डी, गणगौर पूजनारंभ, विश्व महिलादिवस
द्वितीया	गुरुवार	09.03.2023	संत तुकाराम जयन्ती, श्रीरंगजीमन्दिरोत्सव वृन्दावन
चतुर्थी	शनिवार	11.03.2023	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 22/4
पंचमी	रविवार	12.03.2023	श्रीरंग पंचमी, होली मिलन
षष्ठी	सोमवार	13.03.2023	एकनाथ षष्ठी, सोम शीतला माता पूजन (बासौड़ा)
सप्तमी	मंगलवार	14.03.2023	शीतला सप्तमी, (बासौड़ा)
अष्टमी	बुधवार	15.03.2023	शीतला अष्टमी, अष्टका श्राद्ध, श्रीऋषभ देव जयन्ती
दशमी	शुक्रवार	17.03.2023	दशमाता पूजन, विश्व दिव्यांगदिवस
एकादशी	शनिवार	18.03.2023	पापमोचनी एकादशी व्रत सर्वे
द्वादशी	रविवार	19.03.2023	पंचक प्रारम्भ 11/16, प्रदोष व्रत, रंगतेरस, नौचंदी मेला (मेरठ)
चतुर्दशी	सोमवार	20.03.2023	मास शिवरात्रि, महाविषुवदिन
अमावस्या	मंगलवार	21.03.2023	देवपितर अमापुण्यः चान्द्रसम्वत समाप्त, विश्व कठपुतली दिवस

स्वयं सिद्ध मुहूर्त (अनपूछ मुहूर्त)

नीचे दिये गये साढ़े तीन मुहूर्त स्वयं सिद्ध माने जाते हैं, जिसमें पंचांग की शुद्धि देखने की आवश्यकता नहीं है –

1. चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, 2. वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया), 3. आश्विन शुक्ल दशमी (विजयादशमी), 4. (आधा) दीपावली का प्रदोष काल।

भारतवर्ष में इनके अतिरिक्त लोकाचार और देशाचार के अनुसार निम्नलिखित तिथियों को भी स्वयंसिद्ध मुहूर्त माना जाता है।

1. भड्डली नवमी (आषाढ शुक्ल नवमी), 2. देवोत्थानी एकादशी (कार्तिक शुक्ल एकादशी), 3. वसन्त पंचमी (माघ शुक्ल पंचमी), 4. फुलेरा दूज (फाल्गुन शुक्ल द्वितीया)

इनमें (स्वयंसिद्ध मुहूर्तों में) किसी भी कार्य को करने के लिए पंचांग शुद्धि देखने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु विवाह आदि में तो पंचांग में दिये गये मुहूर्तों को ही स्वीकार करना श्रेयस्कर है।

राहुकाल

कोई भी कार्य प्रारम्भ करते समय अथवा यात्रा को प्रारम्भ करते समय यथासंभव यह समय टाल दें। यदि संभव न हो तो ईश्वर का स्मरण करते हुए 'हरिः शरणम्' अर्थात् हे प्रभु! मैं आपकी शरण में हूँ, इस भाव से कार्य या यात्रा आरम्भ कर सकते हैं। 'सोने में सुहागा होगा' यदि हर कार्य/यात्रा के पूर्व उपर्युक्त मंत्र कम से कम 3 बार कह लें।

दिन		**राहुकाल का समय**	**दिन**		**राहुकाल का समय**
रविवार	शाम	04.30 से 06.00 बजे	सोमवार	सुबह	07.30 से 09.00 बजे
मंगलवार	दोपहर	03.00 से 04.30 बजे	बुधवार	दोपहर	12.00 से 01.30 बजे
गुरुवार	दोपहर	01.30 से 03.00 बजे	शुक्रवार	सुबह	10.30 से 12.00 बजे
शनिवार	सुबह	09.00 से 10.30 बजे	शुक्रवार		

देश–विदेश के विभिन्न स्थानों पर सूर्योदय–सूर्यास्त के हिसाब से 5 से 10 मिनट का अंतर हो सकता है।

शारदा शक्ति पीठ मैहर

मध्यप्रदेश के सतना जिले की मैहर तहसील में त्रिकूट पर्वत पर माँ शारदा का भव्य मंदिर है। यह ऐतिहासिक मंदिर पहाड़ी के ऊपर 600 फीट की ऊँचाई पर स्थित है और 108 शक्ति पीठों में से एक है। यह पीठ सतयुग के प्रमुख अवतार भगवान नृसिंह के नाम पर 'नरसिंह पीठ' के नाम से भी विख्यात है। ऐसी मान्यता है कि आल्हाखंड के नायक आल्हा और उदल, माँ शारदा के अनन्य उपासक थे। आल्हा की तपस्या से प्रसन्न होकर माँ ने उन्हें अमरत्व प्रदान किया था। आज भी रोज सुबह माँ शारदा के प्रथम दर्शन का सौभाग्य आल्हा को ही मिलता है। मंदिर में रात में किसी को रहने की अनुमति नहीं है। सुबह देवी के सामने आल्हा के चढ़ाए फूल मिलते हैं। मंदिर तक पहुँचने के लिए पहले 1063 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती थीं, अब रोपवे से जाना बहुत सुगम हो गया है। मंदिर के पीछे पहाड़ के नीचे एक तालाब है, जिसे आल्हा तालाब कहा जाता है। तालाब से 2 किलोमीटर और आगे जाने पर एक अखाड़ा मिलता है, जिसके बारे में कहा जाता है कि यहाँ आल्हा और उदल कुश्ती लड़ा करते थे। मैहर में ही विख्यात संगीत गुरु उस्ताद अलाउद्दीन खां साहब, जो विश्व प्रसिद्ध सितार वादक पंडित रविशंकर और सरोद वादक उस्ताद अली अकबर खां साहब के गुरु थे, की मजार है। खां साहब माँ शारदा के अनन्य भक्त थे और उन्होंने अपनी बेटी का नाम भी अन्नपूर्णा रखा था।

आरती एवं वन्दना

आरती श्री गणेशजी की

जय गणेश, जय गणेश जय गणेश देवा। माता जाकी पार्वती, पिता महादेवा।।
एकदन्त दयावन्त, चार भुजा धारी। मस्तक सिन्दूर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश ....।।
अन्धन को आँख देत, कोढ़िन को काया। बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया।। जय गणेश ....।।
लड्डुन का भोग लगे, सन्त करें सेवा। हार चढ़ें, फूल चढ़ें और चढ़े मेवा।। जय गणेश ....।।
दीनन की लाज रखो शम्भू–सुत वारी। कामना को पूर्ण करो हम बलिहारी।। जय गणेश ....।।

आरती श्रीरामचन्द्रजी की

जगमग जगमग जोत जली है। राम आरती होन लगी है।।
भक्ति का दीपक प्रेम की बाती। आरति संत करें दिन राती।।
आनन्द की सरिता उभरी है। जगमग जगमग जोत जली है।।
कनक सिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता।।
वाम भाग में जनक लली है। जगमग जगमग जोत जली है।।
आरति हनुमत के मन भावे। राम कथा नित शंकर गावे।।
सन्तों की ये भीड़ लगी है। जगमग जगमग जोत जली है।।

आरती श्रीरामायणजी की

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।। आरती श्री ....
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिशारद।।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी।। आरती श्री ....
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की। आरती श्री ....
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड़ के ही की।। आरती श्री ....
कलिमल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की।। आरती श्री ....

आरती भगवान जगदीश्वर की

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे,
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।। ॐ जय ...।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का।। स्वामी ...।।
सुख–सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का।। ॐ जय ...।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। स्वामी ...।।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी।। ॐ जय ...।।
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। स्वामी ...।।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ जय ...।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।। स्वामी ...।।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ॐ जय ...।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।। स्वामी ...।।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमती।। ॐ जय ...।।
दीनबन्धु दुख हरता, तुम ठाकुर मेरे।। स्वामी ...।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ जय ...।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। स्वामी ...।।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।। ॐ जय ...।।
तन, मन, धन, सब कुछ है तेरा।। स्वामी ...।।
तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा।। ॐ जय ...।।
श्यामसुन्दरजी की आरति जो कोई नर गावै।। स्वामी ...।।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै।। ॐ जय ...।।

आरती सरस्वतीजी की

शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।
जय सरस्वती ज्ञानदायिनी,
कमल हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
ऋद्धि सिद्धि विवेकदायिनी,
कुमति शूल विनाशनी।
देवी मंद सुहास वर्षनी,
हृदय हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
मधुर काव्य कला,
प्रणव नाद विकासिनी।
भगवती संगीत वर दे,
भुवन मानस वासिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।

आरती शिवजी की

कर्पूर गौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

जय शिव ओंकारा प्रभु भज शिव ओंकारा, ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा। ॐ हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै, हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। ॐ हर हर महादेव।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दस भुज ते सोहै, तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहै। ॐ हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला मुण्डमाला धारी, चंदन मृगमद सोहै भोले शुभकारी। ॐ हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर, पीताम्बर, बाघम्बर अंगे, सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे। ॐ हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डलु चक्र शूलधारी, सुखकारी दुखहारी जग पालन कारी। ॐ हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका, प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका। ॐ हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामी की आरती जो कोई नर गावै, कहत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै। ॐ हर हर महादेव।।

आरती श्रीहनुमानजी की

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग–दोष जाके निकट न झाँकै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। सन्तन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियाराम के काज संवारे।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठि पताल तोरि जमकारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।
जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परम पद पावै।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।। आरती ...

आरती सत्यनारायणजी की

ॐ जय लक्ष्मीरमणा, स्वामी जय लक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जन–पातक–हरणा।। ॐ जय ...
रत्न जटित सिंहासन, अद्भुत छवि राजै।
नारद करत निराजन, घण्टा ध्वनि बाजै।। ॐ जय ...
प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो।। ॐ जय. ...
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चन्द्रचूड़ एक राजा, तिनकी बिपति हरी।। ॐ जय ...
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्हीं।। ॐ जय ...
भाव–भक्ति के कारण, छिन–छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीनीं, तिनको काज सर्‌यो।। ॐ जय ...
ग्वाल–बाल सँग राजा, बन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हों, दीनदयालु हरी।। ॐ जय ...
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ॐ जय ...
सत्यनारायणजी की आरती, जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी वांछित फल पावै।। ॐ जय ...

आरती अम्बेजी की

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी।। ॐ जय अम्बे ...
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्र वदन नीको।। ॐ जय अम्बे ...
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।। ॐ जय अम्बे ...
केहरि वाहन राजत, खड्ग खपर धारी। सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी।। ॐ जय अम्बे ...
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर, सम राजत ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
शुम्भ–निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती।। ॐ जय अम्बे ...
चण्ड–मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु–कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे।। ॐ जय अम्बे ...
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। आगम–निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।। ॐ जय अम्बे ...
चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू। बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू।। ॐ जय अम्बे ...
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता।। ॐ जय अम्बे ...
भुजा चार अति शोभित, वर–मुद्रा धारी। मनवांछित फल पावत, सेवत नर–नारी।। ॐ जय अम्बे ...
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती। मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। कहत शिवानन्द स्वामी, सुख–सम्पति पावै।। ॐ जय अम्बे ...

श्री रामचन्द्रजी की स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण भवभय दारुणम्।
नव कंज लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरज सुन्दरम्।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम्।।
भजु दीनबंधु दिनेश दानव दैत्य वंश निकंदनम्।
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द दशरथ–नन्दनम्।।
सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम्।
आजानु भुज शर चाप धर संग्राम जित खरदूषणम्।।
इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खलदल गंजनम्।।
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।

आरती कुंजबिहारीजी की

आरती कुंज बिहारी की, गिरधर कृष्ण मुरारी की।
गले में बैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला।
नन्द के आनन्द, मोहन बृजचन्द, परमानन्द, राधिका रमण बिहारी की।। आरती कुंज ...
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली, भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक,
चन्द्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।। आरती कुंज ...
कनकमय मोर मुकुट विलसै, देवता दर्शन को तरसै।
गगन से सुमन बहुत बरसें, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल छवि गोप कुमारी की।। आरती कुंज ...
जहाँ ते प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणि श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच,
हरै अघ कीच, चरण छवि श्री बनवारी की।। आरती कुंज ...
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बाजती वृन्दावन वेणू।
चहुँ दिशि गोप ग्वाल धेनू, हंसत मृदुमन्द, चांदनी चन्द।
कटत भव फन्द, टेर सुन दीन दुखारी की।। आरती कुंज ...

आरती लक्ष्मीजी की

जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णू धाता।। जय लक्ष्मी ० ० ०
उमा रमा ब्रह्माणी तुम ही जग–माता,
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता। जय लक्ष्मी ०००
दुर्गा रूप निरंजन सुख संपति दाता,
जो कोइ तुमको ध्यावत ऋधि सिधि धन पाता। जय लक्ष्मी ०००
तुम पाताल निवासिनि तुम ही शुभदाता,
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि भवनिधि की त्राता। जय लक्ष्मी ०००
जिस घर तुम रहतीं तहँ सब सद्गुण आता,
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता। जय लक्ष्मी ०००
तुम बिन यज्ञ न होते वस्त्र न हो पाता,
खान–पान का वैभव सब तुम से आता। जय लक्ष्मी ०००
शुभ गुण मन्दिर सुन्दर क्षीरोदधि जाता,
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता। जय लक्ष्मी ०००
श्रीलक्ष्मीजी की आरती जो कोई नर गाता,
उर आनन्द समाता पाप उतर जाता। जय लक्ष्मी ०००

आरती श्रीरामजी की

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ
आरती उतारूँ मैं तो तन मन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
कनक सिंहासन राजत जोरी–दसरथ नन्दन जनक किशोरी।
युगल छवी को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
वाम भाग शोभित जग जननी–चरण विराजत हैं सुत अंजनी।
इन चरणों में जीवन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
चरणों से निकली गंगा प्यारी– पावन करती है दुनियाँ सारी।।
इन चरणों को सदा पखारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
आरति हनुमत के मन भावै–रामकथा नित शिवजी गावै।
मैं सुन सुन निज जनम संवारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरती अवध बिहारी की

आरती अवध बिहारी की, लखन सिया जनक दुलारी की।
शीश पर क्रीट मुकुट सोहे। चंद्रिका की छवि मन मोहे।।
लखन सेवा बलिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
कपोलन पै अलकैं झलकें। अधर पै बिजली सी चमके।।
छवि कजरारे नयनन की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
अंग सब ज्यों निर्मल नीरा। भरत रिपुदलन महावीरा।।
चरण सेवा धनुधारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
जिए जुग श्यामलता जोरी। भजो मन सब माया तोरी।।
दरस हित युगल बिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

वंदना

जिस घर में हो आरती, चरण कमल चितलाय। वहाँ प्रभु वासा करें, स्वर्ग लोक से आय।।
कथा सदा होती रहे, सुनो वीर हनुमान। राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान।।
बार बार वर माँगहुं, राम कृपा कर देहु। जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटे जनि नेहु।।
देवता सब आश्रम गये, शम्भु गये कैलाश। श्रोता–वक्ता जायेंगे, हरि सुमिरन की आस।।
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर।।
हम तो कुछ जाने नहीं, तुम जानों रघुनाथ। सेवा पूजा वन्दना, सबहि तुम्हारे हाथ।।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, ग्रहण करो महाराज। कृपा दृष्टि अवलोकिए, शरण पड़े की लाज।।

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्या कुमारी च धीमहि तन्नो दुर्गे प्रचोदयात्।
ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु प्रचोदयात्।
ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।
ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ वासुदेवाय विद्महे राधाबल्लभाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।
ॐ दशरथाय विद्महे सीताबल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात्।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वरः। यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे।

श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री

सूची 1 केवल पाठ हेतु

01.	नारियल– (पानी वाला)	
02.	लाल कपड़ा 1 मीटर	
03.	सुपारी–5	
04.	धूपबत्ती	
05.	कलावा	
06.	रोली	
07.	कपूर (डली का)	
08.	इलायची 10 ग्राम	
09.	लौंग 10 ग्राम	
10.	देशी घी 250 ग्राम	
11.	मिश्री 100 ग्राम	
12.	सौंपफ 50 ग्राम	
13.	काली मिर्च 10 ग्राम	
14.	गंगाजल	
15.	पफल 5 तरह के	
16.	मिष्टान	
17.	दूर्वा	
18.	तुलसी के पत्ते	
19.	रूई	
20.	पान साबुत	5
21.	पफूल हार	7
22.	आम के पत्ते	
23.	कलश	1
24.	थाली	4
25.	लोटा	2
26.	चम्मच	2

सूची 2 यदि पाठ के साथ यज्ञ भी हो

01.	घी	500 ग्राम
02.	हवन सामग्री	1 कि.ग्रा.
03.	काले तिल	50 ग्राम
04.	इन्द्र जौ	25 ग्राम
05.	जौ	50 ग्राम
06.	बेलगिरी	250 ग्राम
07.	अगर	25 ग्राम
08.	तगर	25 ग्राम
09.	नागर मौथा	25 ग्राम
10.	गोला साबुत	1
11.	हवन के लिए लकड़ी ढाई कि.ग्रा. (आम/आक/ढाक की)	
12.	कच्ची खांड	250 ग्राम

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति, घर परिवार में अमन चैन तथा जीवन का परम लक्ष्य भगवत्कृपा प्राप्ति हेतु रामायण/सुंदरकाण्ड पाठ के आयोजन हेतु हमें संपर्क कर सकते हैं –

सम्पर्क सूत्र– 0120–4305457 एवं 9811056467

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

राम भक्त गोस्वामी तुलसीदास

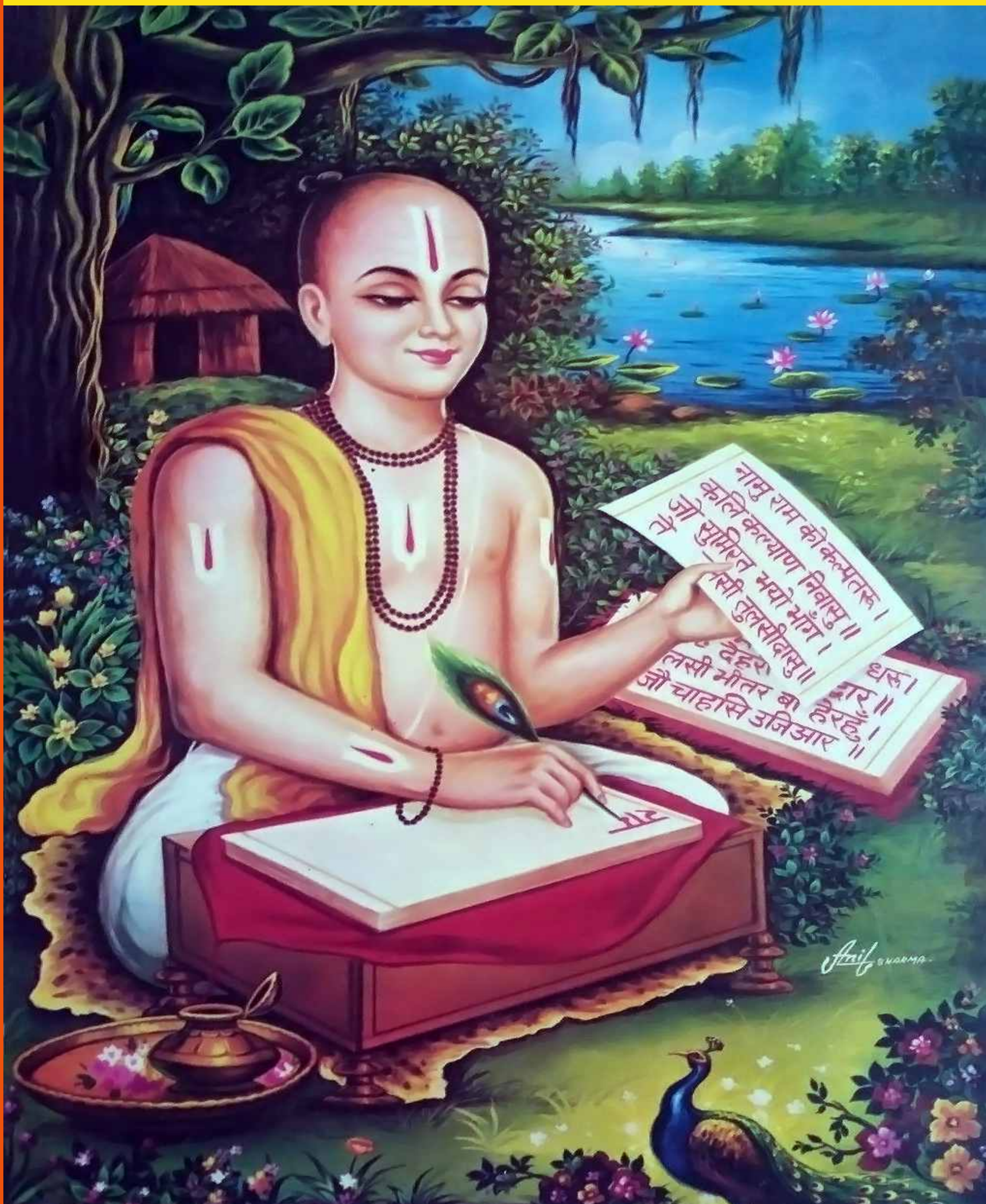

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम

श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम ✿ श्री राम जय राम जय जय राम